भाकृअनुप
ICAR

इक्षु

राजभाषा पत्रिका

वर्ष 10 अंक 1
जनवरी-जून, 2021

आज़ादी का अमृत महोत्सव

भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
लखनऊ 226002

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ
ISO 9001 : 2015

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् पुरस्कार समारोह
16 जुलाई 2021

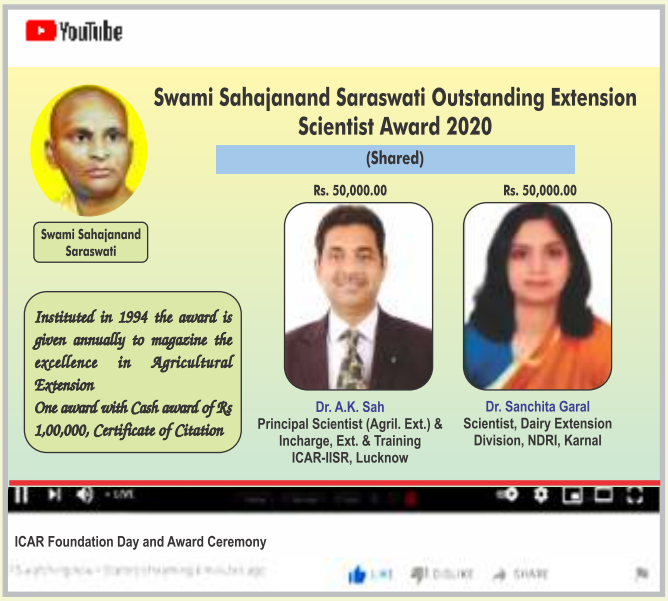

पुरस्कारः "राजर्षि टंडन राजभाषा पुरस्कार–2019–20"

बड़े संस्थानों का पुरस्कार	• भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली • भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ	प्रथम द्वितीय
'क' और 'ख' क्षेत्र के छोटे संस्थानों का पुरस्कार	• केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर • राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ	प्रथम द्वितीय
'ग' क्षेत्र में स्थित संस्थानों का पुरस्कार	• केन्द्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान कोचीन • गन्ना प्रजनन संस्थान, कोयम्बूटर	प्रथम द्वितीय

पुरस्कारः गणेश शंकर विद्यार्थी हिन्दी पत्रिका पुरस्कार योजना

पुरस्कृत पत्रिका	वर्ग	पुरस्कृत संस्थान	स्थान
इक्षु	'क' और 'ख' क्षेत्र के छोटे संस्थानों के लिए	भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ	प्रथम
हिमज्योति	'क' और 'ख' क्षेत्र के छोटे संस्थानों के लिए	शीतजल मात्सियकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल, नैनीताल	द्वितीय
शलिहोत्र दर्शन	'क' और 'ख' क्षेत्र के छोटे संस्थानों के लिए	भारतीय पशु चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर	तृतीय

इक्षुः राजभाषा पत्रिका
वर्ष 10 : अंक 1
जनवरी–जून, 2021

इक्षु

संरक्षक एवं प्रकाशक
अश्विनी दत्त पाठक

सम्पादक
अजय कुमार साह

सह–सम्पादक
आदित्य प्रकाश द्विवेदी
ब्रह्म प्रकाश
अभिषेक कुमार सिंह

कला एवं छायांकन
विपिन धवन
योगेश मोहन सिंह
अवधेश कुमार यादव

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
लखनऊ–226002

ISO 9001 : 2015

© भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संस्थान अथवा राजभाषा प्रकोष्ठ का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

अपने लेख एवं सुझाव भेजें :

संपादक, इक्षु एवं

प्रभारी, राजभाषा प्रकोष्ठ

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान

पोस्ट : दिलकुशा, लखनऊ–226 002

ई–मेल : ikshuiisr@yahoo.in

वर्ष 2021: संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सदस्य

डॉ. अश्विनी दत्त पाठक	अध्यक्ष
डॉ. सुधीर कुमार शुक्ल	सदस्य
डॉ. संगीता श्रीवास्तव	सदस्य
डॉ. राधा जैन	सदस्य
डॉ. शर्मिला राय	सदस्य
डॉ. अखिलेश कुमार सिंह	सदस्य
डॉ. एस.आई. अनवर	सदस्य
डॉ. ए.पी. द्विवेदी	सदस्य
डॉ. एस.के. गोस्वामी	सदस्य
श्री सरोज कुमार सिंह	सदस्य
श्रीमती आशा गौर	सदस्य
डॉ. अनीता सावनानी	सदस्य
श्री अभिषेक कुमार सिंह	सदस्य
श्री अशोक विश्वकर्मा	सदस्य
डॉ. अजय कुमार साह	सदस्य सचिव

प्रकाशक

निदेशक

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान

रायबरेली रोड, पोस्ट : दिलकुशा, लखनऊ 226 002

फोन : 0522–2961318 फैक्स : 0522–2480738

ई–मेल : director.sugarcane@icar.gov.in

वेबसाइट : www.iisr.nic.in

मुद्रित : माहेश्वरी प्रिंटिंग प्रेस, 289/214 मोतीनगर, लखनऊ–226004 मोबाइल : 9721505010

डॉ. अश्विनी दत्त पाठक
निदेशक

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
लखनऊ–226 002

निदेशक की लेखनी से.....

कृषि और ग्रामीण विकास की नई प्रौद्योगिकियों के प्रसार एवं विस्तार के माध्यम दिन–प्रतिदिन परिवर्तित हो रहे हैं। विश्वव्यापी महामारी कोरोना ने विभिन्न नई समस्याओं एवं चुनौतियों को जन्म दिया है एवं कृषि भी इसका अपवाद नहीं है। भारत की आर्थिक सुरक्षा काफी हद तक कृषि पर ही निर्भर रहती है। भारत की लगभग आधी जनसंख्या अपनी आजीविका सुरक्षा के लिए पूरी तरह या आंशिक रूप से कृषि एवं इससे संबंधित उद्योगों की गतिविधियों जैसे फसल उत्पादन, बागवानी, पशुपालन, मुर्गी पालन, शूकर पालन, मत्स्य पालन, रेशम अथवा लाख के कीट का पालन, मधुमक्खी पालन इत्यादि पर किसी न किसी रूप में निर्भर है। यद्यपि हरित क्रांति ने खाद्य फसलों के उत्पादन और उत्पादकता में उल्लेखनीय वृद्धि करके भारत की खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने में विशेष भूमिका निभाई है, जिससे ग्रामीण आय में वृद्धि हुई है। परंतु भारत में अभी भी बड़ी संख्या में गरीब तथा कुपोषित लोग हैं। वर्ष 2018–19 के आंकड़ों के अनुसार भारतीय आबादी का 27.5 प्रतिशत अभी भी गरीबी रेखा से नीचे निवास करता है।

किसानों की आय बढ़ाने के महत्व को ध्यान में रखते हुए माननीय प्रधानमंत्री पहले ही 2022 तक भारत में किसानों की आय को दोगुना करने की योजना की घोषणा कर चुके हैं। नीति आयोग का भी यही मानना है कि कृषि आय का विस्तार अभी भी गरीबी कम करने का सबसे शक्तिशाली हथियार है। पारंपरिक प्रसार सेवाएं, विकास कर्मियों की कमी, पेशेवार ज्ञान और बाजार पहुंच, समयबद्धता और सूचना भंडारण के बारे में अद्यतन जानकारी न होने के कारण प्रतिबंधित हैं। इसलिए, विभिन्न सूचना और संचार प्रौद्योगिकी के विभिन्न उपकरणों जैसे निर्णय समर्थन प्रणाली, डेटाबेस, मोबाइल आधारित एप्स के कृषि–आधारित अनुप्रयोग, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, *इंटरनेट ऑफ थिंग्स* आदि के समुचित उपयोग से इन सीमाओं को दूर करने के लिए डिजिटलीकरण समय की महती आवश्यकता है। ये नवीनतम दृष्टिकोण न केवल उन्नत कृषि प्रौद्योगिकियों का भरसक प्रचार एवं प्रसार करेंगे, अपितु उनके कौशल में सुधार करेंगे और राष्ट्रीय सकल घरेलू उत्पाद को बढ़ाने में उनके योगदान को बढ़ाएंगे। परंपरागत रूप से, कई विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में ज्ञान और नवाचार के प्रसार का मुख्य तरीका सार्वजनिक क्षेत्र द्वारा समर्थित कृषि प्रसार सेवाएं रही हैं। शायद, कृषि प्रसार सेवाओं के अतिरिक्त कोई जमीनी स्तर का संगठन नहीं है, जो किसानों और अन्य मध्यस्थ संगठनों के लिए नवीनतम ज्ञान के प्रसार में सहायक सिद्ध हो सके। ये प्रसार कर्मी किसानों को नवीनतम प्रौद्योगिकियों की जानकारी देने के साथ–साथ विभिन्न सरकारी योजनाओं के कार्यान्वयन में भी अपना सहयोग देते हैं। जलवायु परिवर्तन के दौर में कृषि की परिवर्तनशीलता प्रकृति और लगातार बदलती चुनौतियों को ध्यान में रखते हुए, किसानों को वर्तमान में संगठन, विपणन, प्रौद्योगिकी, वित्त और उद्यमिता सहित व्यापक समर्थन की आवश्यकता है। सफल होने के लिए, किसानों को विभिन्न स्रोतों से व्यापक ज्ञान प्राप्त करने तथा इस ज्ञान को उनके उत्पादन संदर्भ में एकीकृत करने की आवश्यकता होती है। भारत में कृषि प्रसार अनेक चुनौतियों का सामना कर रहा है। हालांकि केंद्र सरकार ने पूंजी निवेश बढ़ाने और सुधारों को बढ़ावा देने पर अधिक ध्यान दिया है, लेकिन कई राज्य सरकारें अधिक संसाधनों के निवेश या नए मॉडलों के साथ प्रयोग करने में कोई दिलचस्पी नहीं प्रदर्शित कर रही है। सुधारों का प्रचार पूरी तरह से केंद्रीय सहायता पर निर्भर है जो थोड़ा चिंताजनक है। यद्यपि गैर सरकारी संगठनों और कृषक उत्पादक संगठनों सहित निजी क्षेत्र अपनी सशक्त उपस्थिति दर्शाकर कृषकों को अपना समर्थन दे रहे हैं। यद्यपि निजी क्षेत्र कृषि के विभिन्न क्षेत्रों में इतने व्यापक रूप से विस्तारित नहीं है। कृषि की कई चुनौतियों का समाधान करने में कृषि प्रसार सेवाएं महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं। कोरोनाजनित परिस्थितियों में डिजिटल युग ने जीवन के हर क्षेत्र को पहले ही रूपांतरित कर दिया है। डिजिटल विस्तार सेंवाएं कृषि आपूर्ति श्रृंखला प्रबंधन में सुधार के लिए अद्यतन जानकारी के प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं, जो केवल कृषकों की आय को सार्थक स्तर तक बढ़ाने में ही सहायक नहीं होगी अपितु उनके जीवन स्तर में भी उल्लेखनीय सुधार करेंगी।

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ अपने क्षेत्रीय एवं प्रभागीय केन्द्रों व अपने कृषि विज्ञान केन्द्रों सहित किसानों की आय में वृद्धि करने के लिए दृढ़ संकल्पित है। हमने अपने अपनाए गए गाँवों में विभिन्न श्रेणियों के किसानों की आय में दोगुनी से अधिक वृद्धि करके दिखाई भी है। परंतु अपने सीमित संसाधनों के बावजूद संस्थान के वैज्ञानिक किसानों तक अपनी पहुंच बढ़ाकर उनकी आय में वृद्धि करने का हर संभव प्रयास कर रहे है।

आपका

(अश्वनी दत्त पाठक)

स्थान : लखनऊ
दिनांक : 19 जुलाई, 2021

डॉ. अजय कुमार साह
प्रधान वैज्ञानिक एवं प्रभारी, प्रसार व प्रशिक्षण
संपादक (इक्षु) एवं प्रभारी, राजभाषा प्रभाग

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
लखनऊ–226 002

'इक्षु–सार'

पूरा देश आजादी का अमृत महोत्सव मना रहा है। स्वतंत्र एवं प्रगतिशील भारत की 75वीं वर्षगांठ को समर्पित 'आजादी के अमृत महोत्सव' का उद्घाटन माननीय प्रधानमंत्री जी द्वारा 12 मार्च 2021 को अहमदाबाद स्थित साबरमती आश्रम से पदयात्रा (स्वतंत्रता मार्च) को हरी झंडी दिखाकर किया गया। भारत की समृद्धशाली परंपरा, सामाजिक समरसता एवं राष्ट्रीय चेतना पर देशवासियों को गर्व कराता यह महोत्सव 15 अगस्त 2023 तक अनवरत चलता रहेगा। 'आजादी का अमृत महोत्सव' हमें नई ऊर्जा का अमृत प्रदान कर रहा है, जिससे हम देशवासी आत्मनिर्भर भारत के संकल्प को चरितार्थ कर पाएँ। यह महोत्सव हमें देश में सदियों से विद्यमान भाषाई विविधता, गौरवशाली समृद्ध परंपराओं तथा उत्कृष्ट उपलब्धियों पर गर्व करने का अवसर प्रदान कर रहा है। इस महोत्सव के कालखंड में हमें स्वतंत्रता आदोलन में सर्वस्य न्योछावर करने वाले महापुरूषों मंगल पांडे, तात्या टोपे, रानी लक्ष्मी बाई, राजगुरू, राम प्रसाद बिस्मिल, भगत सिंह, चंद्रशेखर आजाद जैसे सैकड़ों सपूतों के बलिदान को याद करना चाहिए।

वर्तमान संदर्भ में 21वीं सदी का भारत आत्मनिर्भरता की ओर तेजी से अपना कदम बढ़ा रहा है। कोविड महामारी के दौर में भी भारत विश्व के समक्ष पूरी ताकत एवं सजगता के साथ मानवता का संदेश देते हुए विश्व समुदाय को महामारी के संकट से बाहर निकालने में बहुमूल्य योगदान दे रहा है। कोरोना वैक्सीन के निर्माण व उत्पादन में देश ने अभूतपूर्व सफलता प्राप्त किया है तथा देश के बहुतायत जनसंख्या को वैक्सीन उपलब्ध कराने के साथ विश्व के अन्य देशों को भी वैक्सीन उपलब्ध करा रहा है। कृषि एवं गन्ना उत्पादन के क्षेत्र में भी देश लगातार नए कीर्तिमान स्थापित कर रहा है। हरित ऊर्जा उत्पादन के क्षेत्र में भी देश 450 करोड़ लीटर इथनॉल उत्पादन के साथ तीव्रता के साथ आगे बढ़ रहा है तथा वर्ष 2022 तक पेट्रोल के साथ 10 प्रतिशत इथनॉल मिश्रण के लक्ष्य प्राप्ति में गन्ना व चीनी उद्योग तत्परता के साथ अपना योगदान दे रहा है। चीनी मिलों में व्याप्त क्षमता के कारण ही कोरोना महामारी के दौर में 2.61 करोड़ लीटर सैनिटाइजर का उत्पादन हो पाया तथा कोविड प्रोटोकॉल के पालन में अपना अहम योगदान दिया। महामारी में अस्पतालों में ऑक्सीजन की कमी के कारण बहुत से परिवारों ने अपने सदस्यों को खोया और इसका संज्ञान लेते हुए भारत सरकार ने राज्य सरकारों के साथ मिलकर अनेकों स्थानों पर ऑक्सीजन उत्पादन संयंत्र स्थापित किए। उत्तर प्रदेश की चीनी मिलों ने भी उत्साह तथा सामाजिक जिम्मेदारी का निर्वहण करते हुए अलग–अलग जनपदों में ऑक्सीजन उत्पादन संयंत्र स्थापित करने का निर्णय लिया है। इन सभी उदाहरणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि विपरीत परिस्थिति आने पर पूरा देश एकुजट होकर किसी भी चुनौती का सामना करने में सक्षम है। वास्तव में आजादी का अमृत महोत्सव का सबसे बड़ा संदेश एवं सीख भी यही है।

'इक्षु' का वर्तमान अंक फिर से एक बार राजभाषा हिंदी, ज्ञान–विज्ञान, आमोद–प्रमोद तथा आरोग्य एवं संजीवनी प्रभाग के अन्तर्गत राष्ट्रीय, कृषि तथा साहित्य क्षेत्र से संबंधित अलग–अलग विषयों पर रोचक सूचनाओं को संकलित कर आपके समक्ष प्रस्तुत है। संस्कृत भाषा के वैज्ञानिक पहलू, संपर्क भाषा हिंदी की लोकप्रियता, नई शिक्षा नीति में भाषा का प्रावधान, हिंदी का वैश्विक स्वरूप जैसे संवेदनशील विषयों पर लेखकों द्वारा प्रस्तुत जानकारी ज्ञानवर्धक होने के साथ–साथ रोचक भी है। कृषि तथा गन्ना से संबंधित विभिन्न पहलुओं जैसे नए कृषि कानून, गन्ने की ऐतिहासिक गौरव यात्रा, चुकंदर से ऊर्जा उत्पादन, आत्मनिर्भर कृषि में किसान उत्पादक संगठन की भूमिका इत्यादि विषयों पर बहुमूल्य सूचना पाठक के ज्ञानार्जन में महत्वपूर्ण योगदान देगा। इसके अतिरिक्त अन्य विषयों पर प्रस्तुत जानकारी भी पाठकों को बौद्धिक लाभ पहुँचाने में अहम योगदान देगा। मुझे आशा ही नहीं, अपितु पूर्ण विश्वास है कि 'इक्षु' का यह अंक भी आप सभी पाठकों को पसंद आएगा तथा आगे भी आपका स्नेह 'इक्षु' के सम्पादक मंडल को मिलता रहेगा।

स्थान : लखनऊ
दिनांक : 19 जुलाई, 2021

(अजय कुमार साह)

इक्षु, राजभाषा पत्रिका
राजभाषा प्रकोष्ठ की अर्द्धवार्षिक पत्रिका
वर्ष : 10, अंक : 1
जनवरी–जून, 2021

विषय वस्तु

राजभाषा प्रभाग
हमारी प्राचीन भाषा संस्कृत का वैज्ञानिक महत्व 1
स्वाती चढ्ढा
सम्पर्क भाषा के रूप में हिंदी की लोकप्रियता 4
वीरेन्द्र सिंह यादव
नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति में भाषा का महत्व 9
अभिषेक कुमार सिंह, ब्रह्म प्रकाश एवं अजय कुमार साह
भारतीयता की पोषक हिन्दी और इसका वैश्विक स्वरूप 11
रश्मि संजय श्रीवास्तव
कृषि सुधार अधिनियमः भारत सरकार द्वारा किसान हितैषी एक साकार कदम 13
अश्विनी कुमार शर्मा, ब्रह्म प्रकाश, अभिषेक कुमार सिंह एवं अश्विनी दत्त पाठक
ज्ञान–विज्ञान प्रभाग
भारत में गन्ने व शर्करा की ऐतिहासिक गौरव गाथाः आचार्य चाणक्य कृत 'कौटिल्य अर्थशास्त्र' व 'चाणक्य नीति–दर्पण' (321–316 वर्ष ईसा पूर्व)–में गन्ने की खेती व गुड़ और शर्करा 24
अशोक कुमार श्रीवास्तव
भारत में ऊर्जा के लिए चुकंदर की आवश्यकता व भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान का इस फसल की ओर अहम योगदान 26
आशुतोष कुमार मल्ल, वरुचा मिश्रा एवं अश्विनी दत्त पाठक
गन्ने के मुख्य कवक रोग एवं प्रबंधन 32
संजय कुमार गोस्वामी, चंद्रमणि राज एवं श्वेता सिंह
उपोष्ण क्षेत्रों मे गन्ने की फसल में नाइट्रोजन प्रबंधन 35
एस.के. यादव, सुधीर कुमार शुक्ल, गयाकरन सिंह एवं अश्विनी दत्त पाठक
बिहार में जलभराव से गन्ने में कुप्रभाव एवं संभावनाए 37
संतेश्वरी, वरुचा मिश्रा, अमित मालवीय एवं आशुतोष कुमार मल्ल
गन्ने में एपिरिकेनिया से पायरिला पर हमला 40
राघवेन्द्र कुमार, आँचल सिंह एवं संगीता श्रीवास्तव
इंटरनेट ऑफ थिंग्स आधारित *स्मार्ट* गन्ना कृषि 42
संगीता श्रीवास्तव, आँचल सिंह एवं राघवेन्द्र कुमार
चुकंदर : बीज से चीनी तक की तकनीक 44
मुकुन्द कुमार, आशुतोष कुमार मल्ल, वरुचा मिश्रा एवं सन्तेश्वरी
भारतीय अर्थव्यवस्था में पटसन एवं समवर्गीय रेशा फसलों का महत्व एवं प्रमुख अनुसंधान उपलब्धियाँ 46
मनोज कुमार त्रिपाठी, एस.के. पाण्डेय, आदित्य प्रकाश दिवेदी, विनय कुमार सिंह, अभिषेक कुमार सिंह एवं एस.आर. सिंह
भारतीय किसानों को आत्मनिर्भर बनाने में किसान उत्पादक संगठन की भूमिका 49
अजय कुमार साह एवं हिमांशु पाण्डेय
भारत में पादप किस्मों के संरक्षण में चुनौतियाँ 52
कामिनी सिंह, लाल सिंह गंगवार, ब्रह्म प्रकाश, ओम प्रकाश, अनीता सावनानी एवं अश्विनी दत्त पाठक
जायद की फसलों में उर्वरक प्रबंधन 54
मोना नगरगड़े, विशाल त्यागी, दिलीप कुमार एवं प्रीति सिंह
फसल गुणवत्ता सुधार में क्रिसपर/कास 9 प्रौद्योगिकी 57
वरुचा मिश्रा, आशुतोष कुमार मल्ल, संतेश्वरी एवं अश्विनी दत्त पाठक
मृदा पीएचः एक व्यवहारिक परिचय 59
मुकुन्द कुमार, आशुतोष कुमार मल्ल, संतोष कुमार एवं एस.पी. सिंह

बुन्देलखण्ड़ में घृतकुमारी और अश्वगन्धा की व्यावसायिक खेती 60
कृष्णसिंह तोमर, जगन्नाथ पाठक, अजय कुमार सिंह एवं राकेश कुमार
कीट नियंत्रण : कीटनाशियों की गणना एवं उपयोगी यंत्र 63
उमेश चन्द्र पाण्डेय, मोना नगरगड़े, सुधीर कुमार शुक्ल एवं टी.के. श्रीवास्तव
जलवायु परिवर्तन के दृष्टिकोण में गेहूँ का पर्णीय झुलसा रोगः समस्या एवं निदान 66
जीतेन्द्र कुमार त्रिपाठी, विशाल त्यागी, गोपी किशन, कल्याणी कुमारी एवं राजेश कुमार चौहान
गन्धी बग से धान को कैसे बचाये ? 68
राघवेन्द्र तिवारी, वी.पी. जायसवाल, अरुण कुमार बैठा, अभय श्रीवास्तव, आशा गौर एवं दिव्या साहनी
जैविक कृषि की आधुनिक तकनीकियाँ एवं उसके लाभ 69
आदित्य कुमार सिंह, नरेन्द्र सिंह एवं एच.एस. कुशवाहा
कृषि में जैव–अवशेष का प्रबन्धन कर पर्यावरण संरक्षित बनाएं 71
दीपक पाण्डेय, सुधीर कुमार शुक्ल, उमेश चन्द्र पाण्डेय एवं मनोज कुमार
सतत कृषि उत्पादन प्रणाली के लिए मिट्टी की जैव–विविधता का उपयोग और प्रबंधन 72
प्रीति सिंह, संतोष कुमार एवं मोना नगरगड़े
आत्मनिर्भर भारत में कृषि क्षेत्र की भूमिका 74
हिमांशु पाण्डेय, अजय कुमार साह, अभिषेक कुमार सिंह एवं राहुल कुमार राय
बैकयार्ड पोल्ट्री फार्मिंग (वनराजा मुर्गी पालन) 77
विनय कुमार सिंह, शैलेन्द्र कुमार सिंह, अंगद प्रसाद एवं एस.एन. सिंह चौहान
आत्मनिर्भर भारत में कृषि क्षेत्र का योगदान 78
पंकज कुमार अरोड़ा
महामारीजन्य वैश्विक विकास की चुनौतियां और आर्थिक मंदी प्रवंधन 80
अश्विनी कुमार शर्मा, ब्रह्म प्रकाश, सुमित कुमार एवं लाल सिंह गंगवार
भारत की प्रमुख कृषि क्षेत्र की क्रांतियों का योगदान 83
ओम प्रकाश, पल्लवी यादव, ब्रह्म प्रकाश एवं कामिनी सिंह
पेड़ः एक रोचक तथ्य 84
प्रसून कृष्णा एवं के.जी. शर्मा
वनों की पुर्नस्थापना एवं पारिस्थितिकी 85
दीपक कोहली
कृषि क्षेत्र में महिलाओं की सहभागिता 87
आँचल सिंह, राघवेन्द्र कुमार एवं संगीता श्रीवास्तव
समाज तथा परिवार के उत्थान में महिलाओं की भागीदारी 89
काम्या सिंह

आरोग्य एवं संजीवनी प्रभाग

अच्छे स्वास्थ्य के लिए अत्यंत पौष्टिक है चना का सेवन 90
गोविंद कान्त श्रीवास्तव, राजेद्र प्रसाद श्रीवास्तव, ब्रह्म प्रकाश ओम प्रकाश एवं कामिनी सिंह
कोरोना के बाद अब *ब्लैक फंगस* का संक्रमण 93
राघवेन्द्र कुमार, आँचल सिंह एवं संगीता श्रीवास्तव
स्तनपान अमृत समान 95
काम्या सिंह
पोषण व स्वादः अलसी वाला गुड़ 96
मिथिलेश तिवारी, प्रियंका सिंह, दिलीप कुमार, राजीव रंजन राय एवं ए.के सिंह
गुणों की खान अलसी 98
दीपाली चौहान

आमोद–प्रमोद प्रभाग

सच्चा मित्र 99
ब्रह्म प्रकाश
गन्ना संस्थान 101
मुकुन्द कुमार
कविताएं 101
अनुजा द्विवेदी
नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (कार्यालय–3) की बैठक का आयोजन 102
वाक्यांश 103

राजभाषा प्रभाग

हमारी प्राचीन भाषा संस्कृत का वैज्ञानिक महत्व

स्वाती चढ्ढा

सीएसआईआर–राष्ट्रीय रसायन प्रयोगशाला, पुणे

कहते हैं कि किसी देश की जाति, संस्कृति, धर्म और इतिहास को नष्ट करना है तो उसकी भाषा को सबसे पहले नष्ट किया जाए। मात्र 3,000 वर्ष पूर्व तक भारत में संस्कृत भाषा प्रमुखता से बोली तथा व्यवहार में लाई जाती थी । 1100 ईसवीं तक संस्कृत समस्त भारत की राजभाषा के रूप से जोड़ने की प्रमुख कड़ी थी। अरबों और अंग्रेजों ने सबसे पहले इसी भाषा को खत्म किया और भारत पर अरबी और रोमन लिपि और भाषा को लादा गया। भारत की कई भाषाओं की लिपि देवनागरी थी लेकिन उसे बदलकर अरबी कर दिया गया, तो कुछ को नष्ट ही कर दिया गया। आज भारत में संस्कृत भाषा का महत्व कम होता जा रहा है। संस्कृत भाषा के गौरव और महत्व को भुला दिया गया है। वर्तमान में तो हिंदी की लिपि को भी रोमन में बदलने का छद्म कार्य शुरू हो चला है।

संस्कृत भाषा अत्यंत परिपूर्ण, शास्त्रशुद्ध तथा हजारों वर्ष बीतने पर भी जैसी की वैसी जीवित रहने वाली एकमेव भाषा है। यह संसार की सर्व भाषाओं की जननी है। संस्कृत का महत्व आज पश्चिमी लोगों ने भी जाना है। पश्चिमी वैज्ञानिक ऐसी भाषा के शोध में थे, जिसका संगणकीय / कंप्यूटर प्रणाली में उपयोग कर उसका संसार की किसी भी आठ भाषाओं में उसी क्षण रूपांतर हो जाए। उन्हें 'संस्कृत' ही ऐसी भाषा नजर आई। संस्कृत ही संसार की सर्वोत्तम भाषा है, जो संगणकीय प्रणाली के लिए उपयुक्त है। वेद, उपनिषद, गीता आदि मूल धर्मग्रंथ संस्कृत में हैं।

यूएनओ के अनुसार दुनिया की 97 प्रतिशत भाषाएं प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में संस्कृत से प्रभावित हैं। दुनिया की यह एक ऐसी भाषा है जिसको लिखने के लिए कोई भी क्रम में लिखें उसके अर्थ नहीं बदलते और अन्य भाषाओं के मुकाबले इसके वाक्य कम शब्दों में ही पूरे हो जाते हैं। *फोर्ब्स मैगजीन* ने जुलाई 1987 अंक में संस्कृत को विज्ञान और कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर की भाषा कहा है, अमेरिकी एजेंसी नासा ने संस्कृत को दुनिया भर में बोली जाने समस्त भाषाओं में सबसे स्पष्ट भाषा कहा है। नासा के पास संस्कृत में लिखी 60,000 पांडुलिपियां भी हैं। नासा के द्वारा बनने वाले 6ठीं व 7वीं *जनरेशन* के कम्प्यूटर संस्कृत पर ही आधारित है। संस्कृत के महत्व और उसके वैज्ञानिक आधार को देखते हुए यूनेस्को ने *इंटैजिबल कल्चरल हैरिटेज ऑफ ह्यूमैनिटी* की सूची में संस्कृत में वैदिक चैंटिंग (जाप) को शामिल करने का निर्णय लिया है। यूनेस्को ने यह माना है कि संस्कृत भाषा में वैदिक चैंटिंग का मनुष्य के मन–मस्तिष्क, शरीर और आत्मा पर गहन प्रभाव होता है।

हम सभी जानते हैं कि पूरा कंप्यूटर जगत *थ्योरी ऑफ कम्प्यूटेशन* पर निर्भर करता है। इसी *कम्प्यूटेशन* पर महर्षि पाणिनि (लगभग 500 ई. पू.) ने एक पूरा ग्रन्थ लिखा था। महर्षि पाणिनि संस्कृत भाषा के सबसे बड़े व्याकरण विज्ञानी थे। इनका जन्म उत्तर पश्चिम भारत के गांधार में हुआ था। कई इतिहासकार इन्हें महर्षि पिंगल का बड़ा भाई मानते हैं। इनके व्याकरण का नाम अष्टाध्यायी है जिसमें आठ अध्याय और लगभग चार सहस्र सूत्र हैं। संस्कृत भाषा को व्याकरण सम्मत रूप देने में पाणिनि का योगदान अतुलनीय माना जाता है। अष्टाध्यायी मात्र व्याकरण ग्रंथ नहीं है। इसमें तत्कालीन भारतीय समाज का पूरा चित्र मिलता है। इनके द्वारा भाषा के सन्दर्भ में किए गये महत्त्वपूर्ण कार्य 19वीं सदी में प्रकाश में आने लगे।

19वीं सदी में यूरोप के एक भाषा विज्ञानी फ्रैंज बोप्प (14 सितम्बर 1791 – 23 अक्टूबर 1867) ने श्री पाणिनि के कार्यो पर शोध किया। उन्हें पाणिनि के लिखे हुए ग्रंथों में तथा संस्कृत व्याकरण में आधुनिक भाषा प्रणाली को और परिपक्व करने के नए मार्ग मिले। इसके बाद कई विदेशी विद्वानों ने उनके कार्यो में रूचि दिखाई और गहन अध्ययन किया।

जैसे –फर्डिनंद डीसॉसर (1857–1913), लियोनार्ड ब्लूमफील्ड (1887–1949) तथा एक हाल ही के भाषा विज्ञानी फ्रिट्स स्टाल (1930–2012)। इसी क्रम में आगे बढ़ते हुए 19वीं सदी के एक जर्मन विज्ञानी फ्रैडरिक लडविग गॉटलॉब फ्रेज (8 नवम्बर 1848–26 जुलाई 1925) ने इस क्षेत्र में कई कार्य किये और इन्हें आधुनिक जगत का प्रथम तर्क विज्ञानी कहा जाने लगा। जबकि इनके जन्म से लगभग 2400 वर्ष पूर्व ही महर्षि पाणिनि इन सब पर एक पूरा ग्रन्थ लिख चुके थे।

व्याकरण की रचना के दौरान पाणिनि ने *ऑक्जिलरी सिम्बल* (सहायक प्रतीक) प्रयोग में लिए जिसकी सहायता से कई प्रत्ययों का निर्माण किया और फलस्वरूप ये व्याकरण को और सुद्रढ़ बनाने में सहायक हुए। इसी तकनीक का प्रयोग आधुनिक विज्ञानी *ईमेल पोस्ट* (फरवरी 11, 1897 – अप्रैल 21, 1954) ने किया और आज की समस्त *कम्प्यूटर प्रोग्रामिंग लैंग्वेजेज* की नींव रखी। *आओवा स्टेट यूनिवर्सिटी*, अमेरिका ने पाणिनि के नाम पर एक *प्रोग्रामिंग* भाषा का निर्माण भी किया है जिसका नाम ही पाणिनि *प्रोग्रामिंग लैंग्वेज* रखा है।

एक शताब्दी से भी पहले प्रसिद्ध जर्मन भारतिवद मैक्स मूलर (1823–1900) ने कहा था– "मैं निर्भीकतापूर्वक कह सकता हूँ कि अंग्रेज़ी या लैटिन या ग्रीक में ऐसी संकल्पनाएँ नगण्य हैं जिन्हें संस्कृत धातुओं से व्युत्पन्न शब्दों से अभिव्यक्त न किया जा सके। इसके विपरीत मेरा विश्वास है कि 2,50,000 शब्द सम्मिलित माने जाने वाले अंग्रेज़ी शब्दकोश की सम्पूर्ण सम्पदा के स्पष्टीकरण हेतु वांछित धातुओं की संख्या, उचित सीमाओं में न्यूनीकृत पाणिनीय धातुओं से भी कम है। अंग्रेज़ी में ऐसा कोई वाक्य नहीं जिसके प्रत्येक शब्द का 800 धातुओं से एवं प्रत्येक विचार का पाणिनि द्वारा प्रदत्त सामग्री के सावधानीपूर्वक विश्लेषण के बाद अविशष्ट 121 मौलिक संकल्पनाओं से सम्बन्ध निकाला न जा सकें ।"

अप्रैल 1993 में प्रकाशित *एमएलबीडी न्यूजलैटर* में महर्षि पाणिनि को बिना *हार्डवेयर* के प्रथम *साफ्टवेयर* पुरूष घोषित किया है। जिसका मुख्य शीर्षक था – 'संस्कृत *सॉफ्टवेयर फॉर*

फ्यूचर हार्डवेयर जिसमें बताया गया कि प्राकृतिक भाषाओं (प्राकृतिक भाषा केवल संस्कृत ही है बाकि सब की सब मानव रचित हैं) को *कंप्यूटर प्रोग्रामिंग* के लिए अनुकूल बनाने के तीन दशक की कोशिश करने के बाद वैज्ञानिकों को एहसास हुआ कि *कंप्यूटर प्रोग्रामिंग* में भी हम 2,600 साल पहले ही पराजित हो चुके हैं। हालाँकि उस समय इस तथ्य का किस प्रकार और कहाँ उपयोग करते थे यह तो नहीं कह सकते, पर आज भी दुनिया भर में *कंप्यूटर वैज्ञानिक* मानते हैं कि आधुनिक समय में संस्कृत व्याकरण सभी कंप्यूटर की समस्याओं को हल करने में सक्षम है।

व्याकरण के इस महान ग्रन्थ में पाणिनि ने विभक्ति–प्रधान संस्कृत भाषा के 4,000 सूत्र बहुत ही वैज्ञानिक और तर्कसिद्ध ढंग से संगृहीत किए हैं।

नासा के वैज्ञानिक रिक ब्रिग्स ने अमेरिका में कृत्रिम बुद्धिमत्ता और पाणिनी व्याकरण के बीच की श्रृंखला की खोज की।

पाणिनीय व्याकरण की महत्ता पर विद्वानों के विचार

"पाणिनीय व्याकरण मानवीय मष्तिष्क की सबसे बड़ी रचनाओं में से एक है"–लेनिन ग्राड के प्रोफेसर टी. शेरवात्सकी।

"पाणिनीय व्याकरण की शैली अतिशय–प्रतिभापूर्ण है और इसके नियम अत्यन्त सतर्कता से बनाए गये हैं"–कोल ब्रुक।

"संसार की व्याकरणों में पाणिनीय व्याकरण सर्वशिरोमणि है, यह मानवीय मस्तिष्क का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अविष्कार है"–सर डब्ल्यू. डब्ल्यू. हण्डर।

"पाणिनीय व्याकरण उस मानव–मष्तिष्क की प्रतिभा का आश्चर्यतम नमूना है जिसे किसी दूसरे देश ने आज तक सामने नहीं रखा" – प्रो. मोनियर विलियम्स।

वैज्ञानिक तथा प्रोफेसर डीन ब्राउन, जो *फिज़िसिस्ट*, संस्कृत स्कॉलर, उपनिषदों और योग सूत्रों के अनुवादक भी हैं, ने संस्कृत भाषा के वैज्ञानिक आधार के विषय में काफ़ी कुछ कहा हैं। उनके अध्ययन व शोध से यह बात सामने आई है कि बहुत–सी विदेशी भाषाएं भी संस्कृत से ही जन्मी हैं, चाहे *फ्रेंच* हो या *अंग्रेज़ी*, उनके मूल में कहीं न कहीं संस्कृत ही है। ब्राउन का कहना है कि संस्कृत वैदिक काल में महान चिंतकों और संन्यासियों व ऋषि– मुनियों द्वारा इस्तेमाल की जाती थीं। संस्कृत में ऐसे बहुत–से शब्द हैं, जो आपकी मानसिक चेतना को दर्शाते हैं। अन्य भाषाओं में जहां भावनाएं होती हैं, संस्कृत में वहीं चेतना होती है।

संस्कृत में 1700 धातुएं, 70 प्रत्यय और 80 उपसर्ग हैं, इनके योग से जो शब्द बनते हैं, उनकी संख्या 27 लाख 20 हजार होती है। यदि दो शब्दों से बने सामासिक शब्दों को जोड़ते हैं तो उनकी संख्या लगभग 769 करोड़ हो जाती है। संस्कृत *इंडो–यूरोपियन लैंग्वेज* की सबसे प्राचीन भाषा है और सबसे वैज्ञानिक भाषा भी है। इसके सकारात्मक तरंगों के कारण ही ज्यादातर श्लोक संस्कृत में हैं। जहां विदेशों में इसके प्रति रुझान बढ़ रहा है वहीं भारत में संस्कृत से लोगों का जुड़ाव खत्म हो रहा है और अपने ही देश में अपनी भाषा को लोग महत्व और सम्मान नहीं प्रदान कर रहे हैं।

ब्रह्माण्ड से निकलने वाली कुल 108 ध्वनियों पर संस्कृत की वर्णमाला आधारित है। ब्रह्मांड की इन ध्वनियों के रहस्य का ज्ञान वेदों से मिलता है। इन ध्वनियों को नासा ने भी स्वीकार किया है जिससे स्पष्ट हो जाता है कि प्राचीन ऋषि मुनियों को उन ध्वनियों का ज्ञान था और उन्ही ध्वनियों के आधार पर उन्होंने पूर्णशुद्ध भाषा को अभिव्यक्त किया। अतः प्राचीनतम आर्य भाषा जो ब्रह्मांडीय संगीत थी उसका नाम 'संस्कृत" पड़ा। संस्कृत–संस् + कृत् अर्थात श्वासों से निर्मित अथवा साँसो से बनी एवं स्वयं से कृत, जो कि ऋषियों के ध्यान लगाने व परस्पर–संप्रक से अभिव्यक्त हुई।

कालांतर में पाणिनी ने नियमित व्याकरण के द्वारा संस्कृत को परिष्कृत एवं सर्वम्य प्रयोग में आने योग्य रूप प्रदान किया। पाणिनीय व्याकरण ही संस्कृत का प्राचीनतम व सर्वश्रेष्ठ व्याकरण है। दिव्य व दैवीय गुणों से युक्त, अतिपरिष्कृत, परमार्जित, सर्वाधिक व्यवस्थित, अलंकृत सौन्दर्य से युक्त, पूर्ण समृद्ध व सम्पन्न, पूर्णवैज्ञानिक देववाणी संस्कृत, मनुष्य की आत्मचेतना को जागृत करने वाली, सात्विकता में वृद्धि, बुद्धि व आत्मबल प्रदान करने वाली सम्पूर्ण विश्व की सर्वश्रेष्ठ भाषा है। अन्य सभी भाषाओं में त्रुटि होती है पर इस भाषा में कोई त्रुटि नहीं है। इसके उच्चारण की शुद्धता को इतना सुरक्षित रखा गया कि सहस्त्रों वर्षो से लेकर आज तक वैदिक मंत्रों की ध्वनियों व मात्राओं में कोई पाठभेद नहीं हुआ और ऐसा सिर्फ हम भारतवासी ही नहीं बल्कि विश्व के आधुनिक विद्वानों और भाषाविदों ने भी एक स्वर में संस्कृत को पूर्णवैज्ञानिक एवं सर्वश्रेष्ठ माना है।

संस्कृत की सर्वोत्तम शब्द–विन्यास युक्ति के, गणित के, कंप्यूटर आदि के स्तर पर नासा व अन्य वैज्ञानिक व भाषाविद संस्थाओं ने भी इस भाषा को एकमात्र वैज्ञानिक भाषा मानते हुये इसका अध्ययन आरंभ कराया है और भविष्य में भाषा–क्रांति के माध्यम से आने वाला समय संस्कृत का बताया है।

काफी शर्म की बात है कि हम भारतवासियों में से ही कुछ ऐसे व्यक्ति हैं, जिन्हें अमृतमयी वाणी संस्कृत में दोष व विदेशी भाषाओं में गुण ही गुण नजर आते हैं। वह भी तब, जब विदेशी भाषा वाले संस्कृत को सर्वश्रेष्ठ मान रहे हैं। अतः जब हम अपने बच्चों को कई विषय पढ़ा सकते हैं तो संस्कृत पढ़ाने में संकोच नहीं करना चाहिए। देश–विदेश में हुए कई शोधों के अनुसार संस्कृत मस्तिष्क को काफी तीव्र करती है जिससे अन्य भाषाओं व विषयों को समझने में काफी सरलता होती है, साथ ही यह सत्वगुण में वृद्धि करते हुये नैतिक बल व चरित्र को भी सात्विक बनाती है। अतः सभी को यथायोग्य संस्कृत का अध्ययन करना चाहिए।

वस्तुतः संस्कृत भाषा का प्रत्येक शब्द इस प्रकार से संरचित किया गया है कि उसके स्वर एवं व्यंजनों के मिश्रण का उच्चारण करने पर वह हमारे विशिष्ट ऊर्जा चक्रों को प्रभावित करे। प्रत्येक शब्द स्वर एवं व्यंजनों की विशिष्ट संरचना है जिसका प्रभाव व्यक्ति की चेतना पर स्पष्ट परिलक्षित होता है। इसीलिये कहा गया है कि व्यक्ति को शुद्ध उच्चारण के साथ–साथ बहुत सोच–समझ कर बोलना चाहिए। शब्दों में शक्ति होती है जिसका दुरूपयोग एवं सदुपयोग स्वयं पर एवं दूसरे पर प्रभाव डालता है। शब्दों के प्रयोग से ही व्यक्ति का स्वभाव, आचरण, व्यवहार एवं व्यक्तित्व निर्धारित होता है।

संस्कृत के एक वैज्ञानिक भाषा होने का पता उसके किसी वस्तु को संबोधन करने वाले शब्दों से भी पता चलता है। इसका हर शब्द उस वस्तु के बारे में, जिसका नाम रखा गया है, के सामान्य लक्षण और गुण को प्रकट करता है। ऐसा अन्य भाषाओं में बहुत कम है। पदार्थों का नामकरण ऋषियों ने वेदों से किया है और वेदों में यौगिक शब्द हैं और हर शब्द गुण आधारित हैं। इस कारण संस्कृत में वस्तुओं के नाम उसका गुण आदि प्रकट करते हैं। जैसे हृदय शब्द। हृदय को अंगेजी में *'हार्ट'* कहते हैं और

संस्कृत में 'हृदय' कहते हैं। अंग्रेजी वाला शब्द इसके लक्षण प्रकट नहीं कर रहा, लेकिन संस्कृत शब्द इसके लक्षण को प्रकट कर इसे परिभाषित करता है। बृहदारण्यकोपनिषद 5.3.1 में हृदय शब्द का अक्षरार्थ इस प्रकार किया है– तदेतत् त्र्यक्षर हृदयमिति, हृ इत्येक मक्षरमभिहरित, द इत्येकमक्षर ददाति, य इत्येकमक्षरमिति।

अर्थात हृदय शब्द हृ, हरणे द दाने तथा इण् गतौ इन तीन धातुओं से निष्पन्न होता है। हृ से हरित अर्थात शिराओं से अशुद्ध रक्त लेता है, द से ददाति अर्थात शुद्ध करने के लिए फेफड़ों को देता है और य से याति अर्थात सारे शरीर में रक्त को गति प्रदान करता है। इस सिद्धांत की खोज हार्वे ने 1922 में की थी, जिसे हृदय शब्द स्वयं लाखों वर्षों से उजागर कर रहा था ।

हमारे देश में संस्कृत भारती नामक संस्थाएं इस भाषा के संवर्धन के लिए अच्छा कार्य कर रही है। इसके वर्तमान में देश भर में 585 केंद्र हैं। यह अच्छी बात है कि आज भारत की प्राचीन भाषा की महत्ता धीरे–धीरे ही हमें समझ आने लगी है। इसका अंदाजा इसी से लगया जा सकता है कि 2014 के लोकसभा चुनावों के बाद 37 सांसदों ने संस्कृत में शपथ ली थी और वर्ष 2019 में यह संख्या बढ़कर 47 हो गई। इस भाषा को चीन समेत 40 देशों और दुनिया भर की 254 विश्वविद्यालयों में पढ़ाया जा रहा है व इस पर शोध किया जा रहा है। यह सभी भारतीय भाषाओं की जननी है और यहां तक कि दक्षिण–पूर्वी एशिया की भाषाओं पर भी इसका प्रभाव है। संस्कृत में 45 लाख पांडुलिपियां हैं लेकिन बदकिस्मती से सिर्फ 25,000 ही प्रकाशित हुई हैं।

संस्कृत की इस समृद्धि ने पाश्चात्य विद्वानों को अपनी ओर आकर्षित किया। इस भाषा से प्रभावित होकर सर विलियम जोन्स ने 2 फरवरी, 1786 को एशियाटिक सोसायटी, कोलकाता में कहा– "संस्कृत एक अद्भुत भाषा है। यह ग्रीक से अधिक पूर्ण है, लैटिन से अधिक समृद्ध और अन्य किसी भाषा से अधिक परिष्कृत है।" इसी कारण संस्कृत को सभी भाषाओं की जननी कहा जाता है।

संस्कृत उदीयमान भविष्य की एक महत्वपूर्ण धरोहर है। अपने देश में संस्कृत भाषा वैदिक भाषा बनकर सिमट गयी है। इसे विद्वानों एवं विशेषज्ञों की भाषा मानकर इससे परहेज किया जाता है। किसी अन्य भाषा की तुलना में इस भाषा को महत्त्व ही नहीं दिया गया, क्योंकि वर्तमान व्यावसायिक युग में उस भाषा को ही वरीयता दी जाती है जिसका व्यावसायिक मूल्य सर्वोपरि होता है। कर्मकांड के क्षेत्र में इसे महत्त्व तो मिला है, परन्तु कर्मकांड की वैज्ञानिकता का लोप हो जाने से इसे अन्धविश्वास मानकर संतोष कर लिया जाता है और इसका दुष्प्रभाव संस्कृत पर पड़ता है। यदि इसके महत्त्व को समझकर इसका प्रयोग किया जाए तो इसके अगणित लाभ हो सकते हैं। संस्कृत की भाषा विशिष्टता को समझकर लन्दन के बीच बनी एक पाठशाला ने अपने *जूनियर डिवीजन* में इसकी शिक्षा को अनिवार्य बना दिया है। श्री आदित्य घोष ने *सन्डे हिंदुस्तान टाइम्स* (10 फरवरी, 2008) में इससे सम्बंधित एक लेख प्रकाशित किया था। उनके अनुसार लन्दन की उपर्युक्त पाठशाला के अधिकारियों की यह मान्यता है कि संस्कृत का ज्ञान होने से अन्य भाषाओं को सीखने व समझने की शक्ति में अभिवृद्धि होती है। इसको सीखने से गणित व विज्ञान को समझने में आसानी होती है। *सेंट जेम्स इन्डिपेन्डेन्ट स्कूल* नामक यह विद्यालय लन्दन के *कैनिंगस्टन ओलंपिया* क्षेत्र की डेसर्स स्ट्रीट में अवस्थित है। पाँच से दस वर्ष तक की आयु के इसके अधिकांश छात्र *काकेशियन* है। इस विद्यालय की आरंभिक कक्षाओं में संस्कृत अनिवार्य विषय के रूप में सम्मिलित है। इस विद्यालय के बच्चे अपनी पाठ्य पुस्तक के रुप में रामायण को पढ़ते हैं। बोर्ड पर सुन्दर देवनागरी लिपि के अक्षर शोभायमान होते हैं। बच्चे अपने शिक्षकों से संस्कृत में प्रश्नोत्तरी करते हैं और अधिकतर समय संस्कृत में ही वार्तालाप करते हैं। कक्षा के उपरांत समवेत स्वर में श्लोकों का पाठ भी करते हैं। दृश्य ऐसा होता है मानों यह पाठशाला वाराणसी एवं हरिद्वार के किसी स्थान पर अवस्थित हो और वहां पर किसी कर्मकांड का पाठ चल रहा हो। इस पाठशाला के शिक्षकों ने अनेक शोध–परीक्षण करने के पश्चात् अपने निष्कर्ष में पाया कि संस्कृत का ज्ञान बच्चों के सर्वांगीण विकास में सहायक होता है। संस्कृत जानने वाला छात्र अन्य भाषाओं के साथ अन्य विषय भी शीघ्रता से सीख जाता है। यह निष्कर्ष उस विद्यालय के विगत बारह वर्ष के अनुभव से प्राप्त हुआ है।

आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय से संस्कृत में *पीएच.डी.* करने वाले डॉक्टर वारविक जोसफ उपर्युक्त विद्यालय के संस्कृत विभाग के अध्यक्ष हैं। उनकी अथक लगन ने संस्कृत भाषा को इस विद्यालय के 800 विद्यार्थियों के जीवन का अंग बना दिया है। डॉक्टर जोसफ के अनुसार संस्कृत विश्व की सर्वाधिक पूर्ण, परिमार्जित एवं तर्कसंगत भाषा है। यह एकमात्र ऐसी भाषा है जिसका नाम उसे बोलने वालों के नाम पर आधारित नहीं है। वरन संस्कृत शब्द का अर्थ ही है "पूर्ण भाषा"। इस विद्यालय के प्रधानाध्यापक पॉल मौस का कहना है कि संस्कृत अधिकांश यूरोपीय और भारतीय भाषाओँ की जननी है। वे संस्कृत से अत्यधिक प्रभावित है। प्रधानाचार्य ने बताया कि प्रारंभ में संस्कृत को अपने पाठ्यक्रम का अंग बनाने के लिए बड़ी चुनौती झेलनी पड़ी थी।

प्रधानाचार्य मौस ने अपने दीर्घकाल के अनुभव के आधार पर बताया कि संस्कृत सीखने से अन्य लाभ भी हैं। देवनागरी लिपि लिखने से तथा संस्कृत बोलने से बच्चों की जिह्वा तथा उँगलियों का कड़ापन समाप्त हो जाता है और उनमें लचीलापन आ जाता है। यूरोपीय भाषाएँ बोलने से और लिखने से जिह्वा एवं उँगलियों के कुछ भाग सक्रिय नहीं होते है। जबकि संस्कृत के प्रयोग से इन अंगों के अधिक भाग सक्रिय होते हैं। संस्कृत अपनी विशिष्ट ध्वन्यात्मकता के कारण प्रमस्तिष्कीय *सेरिब्रल* क्षमता में वृद्धि करती है। इससे सीखने की क्षमता, स्मरण शक्ति, निर्णय क्षमता में आश्चर्यजनक अभिवृद्धि होती है। संभवतः यही कारण है कि पहले बच्चों का विद्यारम्भ संस्कार कराया जाता था और उसमें मंत्र लेखन के साथ बच्चे को जप करने के लिए भी प्रोत्साहित किया जाता था। संस्कृत से छात्रों की गतिदायक कुशलता भी विकसित होती है।

आज आवश्यकता है संस्कृत के विभिन्न आयामों पर फिर से नवीन ढंग से अनुसंधान करने की, इसके प्रति जनमानस में जागृति लाने की; क्योंकि संस्कृत हमारी संस्कृति का प्रतीक है। संस्कृति की रक्षा एवं विकास के लिए संस्कृत को महत्त्व प्रदान करना आवश्यक है। इस विरासत को हमें पुनः शिरोधार्य करना होगा तभी इसका विकास एवं उत्थान संभव है।

राजभाषा प्रभाग

सम्पर्क भाषा के रूप में हिंदी की लोकप्रियता

वीरेन्द्र सिंह यादव
डॉ0 शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय, लखनऊ

भारतीय संविधान में हिंदी की तीन भूमिकाएँ अपेक्षित हैं, एक तो संघ की राजभाषा के रूप में, दूसरी राज्यों और प्रदेशों की राजभाषा के रूप में तथा तीसरी संघ और राज्यों के बीच तथा एक दूसरे राज्यों के बीच आपसी पत्राचार की भाषा अर्थात सम्पर्क भाषा के रूप में। इनमें से दूसरी भूमिका तो हिन्दी निभा रही है और स्थिति पूर्णतः सन्तोषजनक न भी हो तो कम से कम असन्तोषजनक तो नहीं ही है। हिंदी भाषी राज्यों और एक केन्द्र शासित प्रदेश (दिल्ली) ने इसे राजभाषा के रूप में प्रतिष्ठित किया है।

स्वतंत्रता के बाद भारत के संविधान के निर्णय के लिए संविधान सभा की स्थापना हुई थी, और उस भारत के संविधान में हिंदी को राजभाषा ही घोषित किया गया था। राष्ट्र भाषा नही। ऐसी स्थिति में यही उचित था कि हिंदी को राजभाषा के नाम से ही सम्बोधित किया जाए। राजभाषा वह है जिसका प्रयोग राजकाज में हो। तत्वतः राजकाज के लिए ही हिंदी की स्वीकृति दी गई है। भारतीय संविधान में राजभाषा के रूप में हिंदी को जो स्वीकृति मिली, उसकी पृष्ठभूमि में युगों से निरन्तर विकासमान हिन्दी की प्राचीन परम्परा ही महत्वपूर्ण रही। जब कोई बोली आदर्श भाषा बनकर मानक भाषा का रूप ले लेती है और बाद में उन्नति कर अपने क्षेत्र में व्यापकता स्थापित कर लेती है तो और भी अधिक महत्वपूर्ण बन जाती है। फलतः पूरे राष्ट्र में अन्य भाषा–भाषी क्षेत्रों तथा अन्य भाषा परिवार के क्षेत्रों में भी उस भाषा का प्रयोग सार्वजनिक कामों में होने लगता है और वही भाषा 'राष्ट्रभाषा' का पद प्राप्त कर लेती है।[1] राष्ट्रभाषा का विश्लेषणात्मक अर्थ है–राज की भाषा, राजा या शासक की भाषा। आज इसको सरकारी भाषा समझा जाता है अर्थात सरकारी काम–काज, पत्राचार इत्यादि की दफ्तरी भाषा।[2]

भारत संघ की राजभाषा क्या हो? अनुच्छेद 343 में लिखा है: संघ की राजभाषा हिंदी और लिपि देवनागरी होगी। इस हिंदी का स्वरूप क्या हो? इसके अनुच्छेद 351 में स्पष्ट उल्लेख है कि ''संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिंदी भाषा का प्रसार बढ़ाए, उसका विकास करें, ताकि वह भारत की सामाजिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके और उसकी प्रवृत्ति में हस्तक्षेप किये बिना हिन्दुस्तानी के और आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट भारत की अन्य भाषाओं के प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात करते हुए और जहाँ आवश्यक या वांछनीय हो वहाँ उसके शब्द भण्डार के लिए मुख्यतः संस्कृत से और गौणतः अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करें।

राजभाषा अधिनियम में देवनागरी लिपि अपनाए जाने के पीछे इसकी वैज्ञानिकता थी। हिंदी को राजभाषा के रूप में अपनाने के पीछे जो मूलभूत कारण रहे उनमें से एक था इसका भारोपीय परिवार को प्रथम भाषा वैदिक संस्कृत से पालि प्राकृत और अपभ्रंश होते हुए जन्मना। भारोपीय परिवार की अन्य भाषाएँ–गुजराती, मराठी, बांग्ला, उड़िया आदि भी भारोपीय परिवार की भाषाएँ हैं। इसलिए इन सभी को सत्तर फीसदी शब्दावली आपस में मिलती है। दूसरा कारण इसके बोलने वालों व समझने वालों की संख्या का देश में सर्वाधिक होना। तीसरा कारण सन् 1857 ई. के प्रथम स्वतंत्रता आन्दोलन में गुवाहाटी से चौपाटी, सागर से कंचनजंघा तक देश को एक सूत्र में बाँधने में तथा फिरंगियों के प्रति विद्रोह करने में एक सशक्त भूमिका निभाई थी। इसलिए राजभाषा का दर्जा देते समय इसको प्रधानता दी गई। भारत को सांस्कृतिक व धार्मिक दृष्टि से भी हिंदी ने ही जोड़ा। लिपि के मामले में देवनागरी व अन्य भारतीय लिपियाँ विकसित हुईं। आज भी नेपाली, मराठी, संस्कृत आदि की लिपि तो देवनागरी है ही साथ ही गुजराती, असमिया, उड़िया, बांग्ला व पंजाबी (गुरूमुखी) की लिपियाँ देवनागरी से काफी मिलती–जुलती हैं।[4]

अंग्रेजी को सहभाषा के रूप में मान्यता देते समय इसकी समय सीमा बाँध दी कि संविधान लागू होने के पन्द्रह वर्ष बाद भारत संघ की राजभाषा हिंदी हो जाएगी और अंग्रेजी को समाप्त कर दिया जाएगा। इसके तदनंतर राजभाषा आयोगवर्ता और इसके बाद सन् 1963 ई. में राजभाषा अधिनियम पारित किया गया। सन् 1976 ई. में राजभाषा नियम पारित किये गये और हिंदी कार्यान्वयन की समीक्षा के लिए एक संसदीय राजभाषा समिति बनाई गई। इन सबके पीछे भारत सरकार की यह मंशा रही कि एक चरणबद्ध तरीके से हिंदी को सरकारी कामकाज की भाषा के रूप में विकसित किया जाए। इसके लिए हिंदी शिक्षण, हिंदी के उपकरण (यंत्र) व शब्दावली आदि का निर्माण किया जाए। शब्दावली निर्माण के लिए एक शब्दावली आयोग अलग से बना दिया गया। जिसने तकनीकी व विज्ञान की हर शाखा के शब्दकोश निर्मित किए हैं। इसमें कोई दो राय नहीं कि भाषा की हर प्रयुक्ति में कुछ न कुछ अपनी–अपनी रूढ़ियाँ होती हैं। पर सामान्य रूप में जो भाषा बोली जाती है वही सबका आधार है। संविधान के विधाताओं ने दो भाषाओं की कल्पना नहीं की थी। केवल भारतीय भाषाओं की साझेदारी की शब्दावली को ध्यान में रखकर यह निर्देश दिया था कि राजभाषा में ऐसे शब्द लिए जायें जो सबकी ग्राहता के दायरे में आने वाले हों। स्पष्ट है कि संस्कृत मूल के शब्दों और उनसे बनने वाले नये संभावित शब्द की ग्राहता

अधिक है, यह ध्यान रहा होगा। परन्तु उन्हें हिंदी भाषा के चतुर्दिक विकास का भी ध्यान था। इसलिए उन्होंने इसके विकास के लिए एक अलग निर्देश दिया। उसी के फलस्वरूप शिक्षा मंत्रालय में हिंदी के विकास का काम अलग करने का प्रावधान हुआ।[5] राजभाषा नियमानुसार भारत संघ के अधीन आने वाले कार्यालयों में सेवारत कोई भी कर्मचारी अपना कामकाज हिन्दी या अंग्रेजी में कर सकता है। इसके कारण वह अंग्रेजी के विकल्प को चुन लेता है। जहाँ एक ओर राजभाषा अधिनियम की धारा जम्मू–कश्मीर पर लागू नहीं होती वहीं राजभाषा नियम 1976 पूरे तमिलनाडु राज्य पर लागू ही नहीं होते फिर वहाँ द्विभाषिकता का क्या होगा? यही कारण रहा है कि राजभाषा कार्यान्वयन एक आंकड़ापरक बनकर रहा गया है।

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में राजभाषा की परम्परा की ओर अवलोकन किया जाए तो इसका प्रयोग अशोक की राजाज्ञाओं में प्राप्त होता है। संस्कृत काल की बात की जाए तो प्राचीन भारत में मध्यदेश की संस्कृत ही इसका मानक रूप था। पूरे देश में संस्कृत–प्रयोक्ता औपचारिक अवसरों पर संस्कृत के मध्य देशीय रूप का ही प्रयोग करते थे। कहना न होगा कि यह मध्यदेश मोटे रूप से वही क्षेत्र है जो आज के केन्द्रीय हिंदी प्रदेश हैं। उस प्राचीनकाल से लेकर लगभग बारहवीं सदी तक मुख्य सभी भारतीय राज्यों में संस्कृत का यही रूप राजभाषा था। यों बीच में कभी–कभी कुछ और भाषा–रूपों के भी व्यापक प्रयोग हुए। उदाहरण के लिए पालिकाल (500 ई. से 1 ई.) पालि का व्यापक प्रयोग हुआ। किन्तु यह उल्लेखनीय है कि पालि भी मूलतः मध्य देशीय भाषा ही थी और आधुनिक हिंदी का ही एक प्रकार से प्राचीन रूप थी। हाँ, उस पर पूर्वी प्रभाव अवश्य था किन्तु वह प्रभाव भी मगध का ही था, और वह हिन्दी प्रदेश ही है। अशोक के राज्य में पालि भाषा का आदर था, किन्तु इसके राज्यकाल की भाषा प्राचीन शौरसेनी थी अर्थात शौरसेनी प्राकृत का प्राचीन रूप। यह शौरसेनी प्राकृत भी मध्यदेशीय भाषा थी। ब्रज खड़ी बोली आदि का अत्यन्त प्राचीन रूप। प्राकृतकाल (1ई. से 500 ई.) में इसी शौरसेनी का सबसे अधिक प्रयोग होता था। संस्कृत नाटकों में इसलिए उच्चस्तरीय पुरूषों को छोड़कर अन्य पात्र शौरसेनी का प्रयोग करते मिलते हैं। कलिंग के जैन राजाओं तथा अंध्रवंशी राजाओं के यहाँ यही राजभाषा थी। आगे चलकर इसी परम्परा में पश्चिम की साहित्यिक अपभ्रंश (शौरसेनी अपभ्रंश) का प्रयोग सातवाहन, प्रवरसेन, यशोधर्मन आदि परवर्ती राजाओं ने अपने यहाँ राजभाषा के रूप में किया। इस तरह मध्यदेशीय भाषा के प्रयोग की परम्परा आगे बढ़ी।[6] राष्ट्रभाषा की भूमिका, प्रादेशिक भाषाओं के बीच सेतु की तरह होना चाहिए, मात्र राजभाषा की तरह नहीं। हिंदी की नियति तो यह होगी कि स्वतंत्रता प्राप्ति से पहले तक इस महादेश में संघर्ष की मुख्यधारा की भाषा थी क्योंकि भारत की समस्त सामाजिक, सांस्कृतिक और स्वातंत्रय–चेतना की केन्द्रीय भाषा होने का श्रेय उसे प्राप्त था।[7]

भारत में तुर्कों और अफगानों के आगमन (बारहवीं सदी के बाद) से राजभाषा फारसी बनी, किन्तु आंशिक रूप से तत्कालीन केन्द्रीय भाषा पुरानी हिंदी को भी सहभाषा के रूप में स्वीकृति मिली थी, क्योंकि अधिकांश सरकारी कर्मचारी भारतीय थे और उन सभी के लिए फारसी का प्रयोग बहुत सरल नहीं था। हिसाब–किताब का तो काफी काम हिंदी में ही चलता था।[8] देहली सुल्तानों के समय अर्थात अलाउद्दीन खिलजी का दक्षिणी विजयों के परिणामस्वरूप हिन्दी, दक्षिण भारत में पहुँची और उसे, अरबी–फारसी शब्दों के साथ आदिल शाही, कुतुब शाही, वरीद शाही, हमाम शाही, निजाम शाही राज्यों में संरक्षण मिला। दक्खिनी के रूप में आज यही भाषा जानी जाती है।[9] देश में मुगलों के आने पर हिन्दी सहभाषा के रूप में कार्य करती रही। हिंदी के सहभाषा होने की बात का सबसे बड़ा प्रभाव यह है कि शेरशाह से लेकर बाद तक के सिक्कों पर प्रायः फारसी के साथ हिंदी का प्रयोग मिलता है। इस तरह धीरे–धीरे भारतीय भाषाओं में हिंदी स्वतः राजभाषाओं के रूप में उभरकर आगे बढ़ रही थी तथा हिन्दी प्रदेश के बाहर तरह–तरह से अखिल भारत वर्षीय भाषा के रूप में प्रचार–प्रसार पा रही थी। राजपूत शासन की भाषा हिंदी ही थी। इसी तरह मराठों के राजकाज की भाषा भी हिन्दी ही बनी। इस परम्परागत प्रचार–प्रसार का ही परिणाम हुआ कि बहुत पहले से विभिन्न प्रदेशों के लोग हिंदी में भी साहित्य रचना करते रहे। इस दृष्टि से यदि पंजाब का उदाहरण लिया जाए तो गोरखनाथ, चरपटनाथ आदि की रचनाएँ हिंदी में प्राप्त होती हैं। सिक्ख गुरूओं की अधिकतर रचनाएँ हिंदी में ही देखने को मिलती हैं। इस तरह से गुजरात, मराठा एवं आन्ध्र प्रदेश, बंगला तथा उड़ीसा के कई ऐसे कवि थे जो अपना सृजन हिंदी में करते थे। उदाहरण के लिए मराठी कवि रामदास, ज्ञानेश्वर, एकनाथ आदि हिंदी के कवि थे। शिवाजी के दरबार में हिंदी कवि भूषण राजकवि थे। केरल के राजाराम वर्मा हिंदी के बहुत अच्छे कवि थे। आंध्र के प्रसिद्ध कवि पेद्दन्ना, बांग्ला कवि गुणकर तथा उड़िया कवि ब्रजनाथ बड़जेना ने भी हिंदी में रचनाएँ कीं।[10]

वास्तव में उन्नीसवीं सदी तक हिंदी लगातार केन्द्रीय अथवा क्षेत्रीय प्रशासनों की भाषा बनी रही। आधुनिक काल में भारत के महान नेताओं ने हिंदी के प्रचार–प्रसार को अपनी वरीयता में रखा। इसकी प्रमुख विशेषता यह दी कि ये सब प्रचारक अहिंदी भाषा–भाषी थे। जिनका नाम राजाराम मोहन राय, केशव चन्द्र सेन, बंकिम चन्द्र, महात्मा गांधी आदि ने हिंदी को अखिल भारतीय स्तर पर अपनाने पर बल दिया। ब्रिटिश साम्राज्य के आने के बाद राजभाषा की कहानी पूर्ववर्ती परम्परा के बहुत कुछ अनुरूप ही रही थी। मुगलों के समय में फारसी के साथ–साथ एक सीमा तक हिंदी भी चलती रही। मुगल शासन के पतन के बाद फारसी का महत्व न के बराबर हो गया। जिसके परिणामस्वरूप सन् 1837 ई. में फारसी का स्थान राजकाज की भाषा में अंग्रेजी ने ले लिया। यह वही समय था जब अंग्रेजों ने यहाँ की स्थानीय भाषाओं को अपनी सहभाषा बनाया। जैसे हिंदी प्रदेश (उ.प्र., म.प्र., बिहार) में अंग्रेजी के साथ हिन्दुस्तानी की अरबी–फारसी मिश्रित शैली उर्दू को कचहरियों की भाषा बनाया

गया। वैसे बंगाल में अंग्रेजी के साथ बंगला तो महाराष्ट्र में अंग्रेजी के साथ मराठी। हिंदी के प्रति थोड़ा भ्रम बना हुआ था। लेकिन गिलक्रिस्ट ने सन् 1800 ई. के आस–पास ही कहा था, हिन्दी–हिन्दुस्तानी–उर्दू एक ही भाषा की तीन शैलियाँ हैं क्योंकि इनका व्याकरण एक है, अंतर केवल शब्दों का है। जैसे आपका घर कहाँ है? (हिन्दुस्तानी) आपका शुभ स्थान कहाँ है? (हिंदी)–आपका दौलतखाना कहाँ है? (उर्दू)। प्रस्तुत ये वाक्य तीन भाषाओं में न कहे जाकर एक भाषा के कहे जाएगें क्योंकि इनका अंतर व्याकरण का न होकर मात्र शब्दों का है। स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान हिंदी राजभाषा के रूप में संघर्षरत आमजन की भाषा रही तो वहीं राजभाषा के रूप में हिंदी के प्रचार–प्रसार और समुचित विकास के आगे की कहानी इसके बाद से शुरू होती है। यद्यपि 14 दिसम्बर, 1949 ई. को भारतीय संविधान में हिंदी को राजभाषा के रूप में स्वीकृत तो किया गया। और संविधान के सत्रहवें भाग के अनुच्छेद 349 खण्ड एक के अनुसार सन् 1955 ई. में राजभाषा आयोग बनाया गया जिसने यथासमय कुछ बातों की सिफारिशें कीं। इस समिति ने सन् 1959 ई. में अपनी रिपोर्ट दी। इसके एक वर्ष बाद राष्ट्रपति ने सन् 1950 ई. में एक आदेश जारी कर इसकी कुछ महत्वपूर्ण मांगों को स्वीकार कर लिया। इसकी कुछ महत्वपूर्ण बातें निम्न हैं:– 1. वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली के निर्माण के लिए शिक्षा मंत्रालय को एक स्थायी आयोग स्थापित करना चाहिए। 2. शिक्षा मंत्रालय सांविधिक नियमों, विनियमों और आदेशों के अतिरिक्त सभी मैनुअलों तथा कार्य विधि साहित्य का अनुवाद हाथ में ले और भाषा में एकरूपता सुनिश्चित करने की आवश्यकता दृष्टि से यह काम केवल एक ही अभिकरण को सौंपा जाए। 3. एक मानक विधि शब्दकोश बनाने, हिंदी में विधि के पुनः अधिनियम और विधि शब्दावली के निर्माण के लिए विभिन्न राष्ट्रीय भाषाओं का प्रतिनिधित्व करने वाले कानून के विशेषज्ञों का एक स्थायी आयोग स्थापित किया जाए। 4. तृतीय श्रेणी के नीचे के कर्मचारियों, औद्योगिक संस्थानों के कर्मचारियों और कार्य–प्रभावित कर्मचारियों को छोड़कर उन सभी केन्द्रीय सरकारी कर्मचारियों के लिए, हिंदी का सेवाकालीन प्रशिक्षण अनिवार्य कर दिया जाए जिनकी आयु 01.01.1961 को पैंतालीस वर्ष से कम हो। गृह मंत्रालय टंककों और आशुलिपिकों को हिंदी टंकण तथा आशुलेखन का प्रशिक्षण देने के लिए प्रबंध करे। इन सबके साथ ही सरकारी कर्मचारियों में हिंदी–भाषा और साहित्य के प्रति अभिरूचि उत्पन्न करने, सरकारी काम काज में हिंदी भाषा के रास्ते में आने वाली कठिनाईयों को दूर करने तथा हिंदी के अधिकाधिक प्रयोग का प्रचार और प्रसार करने के उद्देश्य से तीन मई सन् 1960 ई. को केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद नाम की एक संस्था का गठन किया गया।

इस परिषद के द्वारा अनेक तरह के कार्य किए गए जो हिंदी को समय–समय पर समृद्धि करने के लिए आवश्यक थे। इस सबके पीछे भारत सरकार का उद्देश्य येन–केन प्रकारेण धीरे–धीरे हिंदी को सरकारी काम–काज की भाषा बनाना है। सैद्धान्तिक तौर पर भारत सरकार द्वारा तथा निजी संस्थाओं द्वारा इस दिशा में अथक प्रयास किए जा रहे हैं। लेकिन सच्चाई यह है कि अंग्रेजी के बढ़ते व्यामोह तथा कम्प्यूटर में केवल अंग्रेजी का प्रयोग कुछेक तौर पर हिंदी का प्रयोग भी हो रहा है। जिस कारण अभी फिलहाल इस उद्देश्य को प्राप्त करने में समय लग सकता है। क्योंकि भारत विविध भाषाओं, धर्मों व जातियों वाला देश है। यहाँ भाषा को एक साथ नहीं थोपा जा सकता है। थोड़ा धीरज तथा उदारता के साथ चरणबद्ध तरीके से ही इसे भारत संघ की सम्पूर्ण राजभाषा बनाया जा सकेगा।

राष्ट्रभाषा बनाम राजभाषा की परिभाषा और विकास प्रक्रिया पर चर्चा के क्रम में यहाँ एक प्रश्न फिर से उठता है कि आखिर भारत की राष्ट्रभाषा कौन सी है और यदि राष्ट्रभाषा नही है तो कौन सी भाषा राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार की जा सकती है। वर्तमान में आज पूरे देश में हिंदी की स्थिति यह है कि हिन्दी संघ की यानी कि केन्द्र सरकार के अधीन आने वाले केन्द्र सरकार के मंत्रालयों, विभागों, अधीनस्थ कार्यालयों, निगमों, उपक्रमों, बैंकों, बीमा कम्पनियों आदि की राजभाषा है।[11] राजभाषा उस भाषा को कहा जा सकता है जो समूचे राष्ट्र में संविधान जैसी लागू हो सके, पूरे देश का काम–काज और शिक्षण जिस भाषा में हो सके। इस तरह से स्पष्ट है कि वर्तमान में हमारे देश में कोई एक भाषा नहीं है जिसके माध्यम से समूचे देश का काम काज होता हो। भारत के हर प्रान्तों की अपनी अलग भाषाएं हैं वहां का सरकारी काम–काज वहाँ की प्रांतीय भाषाओं में होता है। लेकिन इन सबके बीच केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों की भाषा के रूप में हिन्दी को अवश्य स्वीकार किया गया है। इस संदर्भ में यदि हम वैधानिक पक्ष को छोड़ दें और लोकपक्ष को रखकर हिंदी पर विचार करें तो हिन्दी ही राष्ट्रभाषा का दर्जा प्राप्त कर सकी है। इसमें कोई दो राय नही है कि लोकजनमानस में हिंदी ही वह भाषा है जिसने अंग्रेजी शासन के खिलाफ वातावरण बनाने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। प्रसिद्ध भाषाविद डॉ. सुनीति कुमार चटर्जी ने हिंदी को भारत की अन्य भाषाओं की अपेक्षा अधिक वैज्ञानिक बताया। आपके अनुसार हिंदी का व्याकरण केवल एक पोस्ट कार्ड पर लिखा जा सकता है। हिंदी की लिपि देवनागरी इतनी सुस्पष्ट है कि इसमें हिंदी के अलावा गुजराती, मराठी, नेपाली, सिंधी, कोंकणी आदि भाषाएँ भी लिखी जाती हैं। हिंदी की सरलता और व्यापकता को ध्यान में रखते हुए ही बंगाल के सुप्रसिद्ध विद्वान श्री केशव चन्द्र सेन जो कि राष्ट्रभाषा हिंदी के अगुवा माने जाते हैं के सुझाव पर अड़तालीस वर्ष की उम्र में स्वामी दयानंद सरस्वती ने हिंदी सीखी और आर्य समाज के माध्यम से हिंदी भाषा को घर–घर तक पहुँचाया।[12]

महात्मा गाँधी ने इंदौर के हिंदी साहित्य सम्मेलन में हिंदी की वकालत करते हुए कहा था कि हिंदी वह भाषा है जिसको उत्तर में हिन्दू व मुसलमान बोलते हैं, यह हिंदी एकदम संस्कृतमयी नहीं है, न एकदम फारसी शब्दों से बनी है। सच्चाई यह है कि हिंदी साहित्य के क्षेत्र में विश्व की सम्पन्न भाषाओं में से एक होने के साथ ही सम्पूर्ण देश को एक सूत्र में बांधने का कार्य भी कर रही है। इसलिए हिंदी ही राष्ट्रभाषा पद की सच्ची

अधिकारिणी हो सकती है। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि यदि राष्ट्रभाषा एक बड़ा बगीचा है तो राजभाषा इसी बड़े बगीचे से चुने हुए एक विशेष प्रकार का गुलदस्ता है। इसलिए दोनों नाम से भले अलग–अलग हैं लेकिन दोनों का अपना महत्व और वैशिष्ट्य असंदिग्ध हैं।

सम्पर्क भाषा के रूप में हिन्दी की विकास यात्रा की बात की जाए तो हिंदी देश को जोड़ने वाली प्रमुख भाषा हो गई है क्योंकि पूर्व से पश्चिम और उत्तर से दक्षिण तक सभी सामान्य जनों के सम्पर्क व्यवहार की भाषा है। आज हिन्दी वृहत्तर भूमिका का इसलिए संवहन कर रही है क्योंकि इसका प्रयोग राजकाज, साहित्य, शास्त्र लेखन, विज्ञान एवं तकनीकी, जनसंचार, वाणिज्य एवं व्यापार आदि क्षेत्रों में होता है। हिंदी भारत में राष्ट्रीय समाज के विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न स्तरों पर एक से अधिक भूमिकाएं निष्पादित करने में सक्षम एक मात्र स्वदेशी भाषा है। देश के बाहर पारस्परिक संप्रेषण के माध्यम के साथ–साथ सांस्कृतिक प्रेरणा का स्रोत भी है।

भारत में हिंदी एकमात्र ऐसी स्वदेशी भाषा है जो देश की भौगोलिक सीमाओं के भीतर राष्ट्रीय समाज के विभिन्न स्तरों पर एक से अधिक भूमिकाएँ निष्पादित करती है। न केवल मातृभाषा और सह–मातृभाषा के रूप में हिंदी बोलने वालों की संख्या सबसे अधिक है, अपितु अन्य भाषा के रूप में इसे अपनाने वालों का अनुपात भी सर्वाधिक है। हिंदी भाषी राज्यों और केन्द्र शासित प्रदेशों में, जहाँ स्थानीय स्तर पर भिन्न बोलियों का व्यवहार होता है। हिंदी की एक और भूमिका है संघीय गणराज्य (केन्द्रीय सरकार) की राजभाषा संघ की विभिन्न इकाईयों में परस्पर तथा इकाईयों एवं केन्द्र के बीच प्रशासनिक सम्प्रेषण की भाषा। देश के आर्थिक, औद्योगिक तथा प्रौद्योगिक क्षेत्रों में संघीय गतिविधियों के प्रसार के साथ–साथ अखिल भारतीय स्तर पर हिंदी की प्रयोजन मूलक भूमिका भी विकसित हो गई है जिससे वह उपर्युक्त क्षेत्रों की व्यावसायिक गतिविधियों का माध्यम बनकर प्रयुक्त हो रही है।[13]

कश्मीर यदि केरल से आज किसी विदेशी भाषा में पत्राचार करता है और उसके स्थान पर भारत की किसी भाषा का प्रयोग करना चाहता है तो वह भाषा हिंदी होनी चाहिए। इसलिए भारतीय संविधान के भाग 17 के अनुच्छेद 346 में यह प्रावधान किया गया है कि केन्द्र और राज्यों के बीच तथा राज्यों में एक दूसरे के बीच पारस्परिक संप्रेषण व पत्राचार आदि की भाषा भी वही होगी जो संघ की राजभाषा स्वीकृत है। संविधान की इस धारा के पारित होते समय इसका आशय यह था कि सन् 1950 ई. से लेकर पन्द्रह वर्षों तक जब तक कि अंग्रेजी को भी संघ की सह राजभाषा माना गया है, हिंदी या अंग्रेजी इस सम्पर्क–भाषा की भूमिका निभाएगी और पन्द्रह वर्ष बाद केवल हिन्दी ही रहेगी। अपने विकास क्रम में हिंदी के लिए सन् 1963 ई. में राजभाषा अधिनियम संसद ने पारित किया, सन् 1967 ई. पुनः राजभाषा अधिनियम में संशोधन किया गया। जिसके तहत पुनः पन्द्रह वर्ष के लिए अंग्रेजी संघ की सहभाषा के रूप में स्वीकृति हुई। इस तरह संघ के कार्यों में द्विभाषी नीति स्थापित हुई। शेष बचा सम्पर्क भाषा का प्रश्न, तो उसके लिए भी यह व्यवस्था हुई कि हिंदी भाषी राज्यों और केन्द्र के बीच तथा ऐसे व करार–शुदा राज्यों के बीच आपस के संचार के लिए सम्पर्क–भाषा हिंदी होगी, शेष राज्य केन्द्र से तथा आपस में एक दूसरे से अंग्रेजी में सम्पर्क करेंगे।[14]

वस्तुतः भाषा सम्पर्क की स्थिति ही किसी सम्पर्क भाषा के उद्भव तथा विकास को प्रेरित करती है या एक सुप्रतिष्ठित भाषा के सम्पर्क कार्य को संतुष्ट करती है। हिंदी के साथ दोनों स्थितियों का सम्बन्ध है। आंतरिक स्तर पर हिन्दी अपनी बोलियों के व्यवहारकर्ताओं के बीच सम्पर्क की स्थापना करती रही है और अब भी कर रही है तथा वाह्य स्तर पर वह अन्य भारतीय भाषा–भाषी समुदायों के मध्य एक मात्र सम्पर्क भाषा के रूप में उभर आयी है। जिसके अब विविध आयाम विकसित हो चुके हैं।

यहाँ यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि केवल हिंदी को सम्पर्क भाषा के रूप में देखना भूल होगी। क्योंकि हिंदी आधुनिक भारतीय भाषाओं के उद्भव काल (लगभग एक हजार ई.) से मध्यदेश के निवासियों के सामाजिक सम्प्रेषण तथा साहित्यिक सांस्कृतिक अभिव्यक्ति की भाषा रही है और वर्तमान में भी है। भाषा सम्पर्क की बदली हुई परिस्थितियों में (जो पहले फारसी–तुर्की–अरबी तथा बाद में मुख्य रूप से अंग्रेजी के साथ सम्पर्क के फलस्वरूप विकसित हुई) तथा स्वतंत्र भारतीय गणराज्य में सभी भारतीय भाषाओं को अपने–अपने भौगोलिक क्षेत्र में व्यावसायिक और सांस्कृतिक व्यवहार की अभिव्यक्ति के लिए प्रयोग में लाने के निर्णय के बाद, हिंदी का सम्पर्क भाषा प्रकार्य, गुण और परिणाम की दृष्टि से इतना विकसित हो गया है कि उसके सम्बन्ध में चिंतन तथा अनुवर्ती कार्य, एक सैद्धान्तिक और व्यावहारिक आवश्यकता बन गए हैं।[15]

जो लोग जनसंख्या के तर्क पर कहते हैं कि हिंदी सम्पर्क भाषा है वे गलत तर्क करते हैं। इस सन्दर्भ में जनसंख्या का तर्क बहुत छोटा तर्क है। आबादी के तर्क का एक उदाहरण इस संदर्भ में देखा जा सकता है–हिंदेशिया की आबादी लगभग तेरह–चौदह करोड़ है। उसमें इंडोनेशिया की अस्सी प्रतिशत की जो भाषा है, वह राजभाषा नहीं है, बीस प्रतिशत की भाषा सम्पर्क भाषा है। उसका कारण यह है कि वह बारह–तेरह हजार द्वीपों का देश है। उन द्वीपों में सम्पर्क करने वाले जो मछुआरे, नाविक और व्यापारी हैं वे सभी अस्सी प्रतिशत में से नहीं हैं, वे बीस प्रतिशत हैं। दूसरे देश के रहने वाले हैं वे और उसी भाषा का एक बड़ा चलता बाजारू रूप इस्तेमाल करते हैं। जावनीज में जबा की भाषा में बड़ी संस्कृतगर्भता है। लेकिन उन्होंने, जो बिल्कुल व्यापारियों की, साधारण नाविकों की, मछुआरों की भाषा थी उसको राजभाषा बनायाः क्योंकि वह जन सामान्य की भाषा थी। जन सामान्य का सम्पर्क एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र तक उसी भाषा के माध्यम से था। इसलिए जनसंख्या का तर्क है कि जिस देश में क्षेत्रीय विविधता हो, जिस देश में अनेक रंगते हों, जिस देश में अनेकता में एकता हो अर्थात जहाँ एकता का निरंतर अनुसंधान होता रहा हो, उस देश में जनसंख्या के आधार पर कोई निर्णय

लेना समुचित निर्णय नहीं है। निर्णय लेना चाहिए सर्वग्राहिता के आधार पर हिन्दी अंग्रेजी के आने के पूर्व से ही सर्वग्राह भाषा थी। हिंदी की एक और यह विशेषता है कि यह लेने में उदार है, हाथ पसार करके इसने लिया है। किसी को हीन नहीं समझा है, किन्तु अपनी सत्ता, अस्मिता खोकर नहीं। जैसे गाँव का आदमी कर्ज लेता है, तो कर्ज देता है, कर्ज बाकी नहीं रखता। हिन्दी ने कर्ज लिया है, दिया है और हिंदी को जब–जब आवश्यकता महसूस होती है, खुलकर कर्ज लेती है। गाँव की भाषा से बाजार की भाषा से, बोलियों से खुलकर लेती है और लेती है, तभी उसमें प्राण हैं, न ले तो वह ठहर जाएगी। आज इतने वर्षों के बाद यदि हिंदी का जो रूप निखरा है, वह केवल संस्कृत के शब्दों से नहीं निखरा है, तमाम बोलियों के शब्द उसमें आये हैं।[16]

लेकिन इन सबके बाद सरकार की दृष्टि एवं हिंदी प्रदेश के निवासियों में सम्पर्क भाषा की भूमिका द्विभाषी नीति की शिकार हो रही है। लेकिन यह स्थिति बहुत दिनों तक चलने वाली नहीं है। जिस दिन लोगों का स्वाभिमान जाग गया तो वे विदेशी भाषा के इस जुँए को उतार फेंकेंगे। इसलिए हमें ऐसे समय के लिए उचित भूमिका का माहौल तैयार रखना पड़ेगा। इसे सुखद ही कहा जाएगा कि भारतीय जनमानस की वजह से हिन्दी के प्रति उचित माहौल तैयार भी हो गया है। खेलों की *कमेण्टरी* पहले से ही हिंदी में होती है। अब हिंदी के *टेली प्रिन्टर* देश में समाचार भेजते हैं, कम्प्यूटर में हिंदी के नये *साफ्टवेयर* आ जाने से हिंदी अब सहज हो गई है। इण्टरनेट में नए एप्स आ जाने के कारण अधिक से अधिक सामग्री हिंदी में उपलब्ध हो जाती है। वैश्विक परिदृश्य में वहाँ के विश्वविद्यालयों में भारतीय *विजिटिंग प्रोफेसर* वहाँ जाकर हिंदी को पढ़ा रहे हैं जिसके लिए उन्हें विदेशी मुद्रा अच्छी खासी तादाद में प्राप्त हो रही है। अब इसमें कोई दो राय नहीं है कि कमाई के क्षेत्र में भारतीय हिंदी फिल्म में भारत में ही नहीं बल्कि विश्व में अरबों का व्यापार कर रही हैं। इसके साथ ही हिंदी की पत्र–पत्रिकाएँ एवं पुस्तकों की संख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है। कुल मिलाकर यह कहा जाए कि आज हिन्दी बाजार की दिशा को भी निर्धारित करने का कार्य भी सुनिश्चित कर रही है। किन्तु इन सबके बावजूद हिंदी को जो सम्मान एवं स्थान मिलना चाहिए वह उसे प्राप्त नहीं हो पा रहा है। हमारी अपनी समझ के अनुसार योजनाबद्ध प्रयत्न जो उसे सम्पर्क भाषा के बनाने के लिए होने चाहिए, वह चाहे व्यक्तिगत हो या राजनैतिक कारण हों, नहीं हो पा रहे हैं।

सहायक सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. हिंदी विकास और सम्भावनाएँ–कैलाश चन्द्र भाटिया, पृ. 01
2. राजभाषा हिंदी और उसका स्वरूप–सुनील जोगी, पृ. 52
3. सम्पर्क भाषा हिंदी–विविध आयाम सुरेश कुमार–केन्द्रीय हिन्दी संस्थान आगरा, 1996, पृ. 42
4. राजभाषा की प्रवृत्तियाँ–डॉ. माणिक मृगेश, पृ. 16
5. हिंदी और हम–विद्यानिवास मिश्र, पृ. 118
6. राजभाषा–हिंदी–डॉ. भोलानाथ तिवारी, पृ. 39
7. राजभाषा हिंदी और उसका स्वरूप–सुनील जोगी, पृ. 54
8. भारत की राष्ट्रीय संस्कृति–आबिद हुसैन, पृ. 55
9. राजभाषा हिंदी–भोलानाथ तिवारी, पृ. 40
10. राजभाषा हिंदी–डॉ. भोलानाथ तिवारी, पृ. 40
11. राजभाषा की प्रवृत्तियाँ–माणिक मृगेश, पृ. 91
12. राजभाषा की प्रवृत्तियाँ–माणिक मृगेश, पृ. 11
13. सम्पर्क भाषा हिंदी विविध आयाम–सुरेश कुमार, पृ. 15
14. राजभाषा हिंदी–गोपी कृष्ण राठी मधुकर, पृ. 74
15. सम्पर्क भाषा हिंदी–विविध आयाम–सुरेश कुमार, पृ. 17
16. हिंदी और हम–विद्या निवास मिश्र, पृ. 25–26

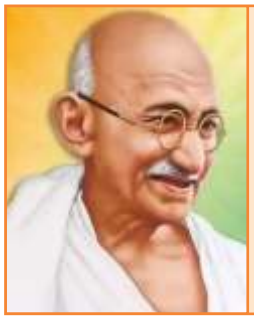

राष्ट्रीय व्यवहार में हिंदी को काम में लाना
देश की एकता और उन्नति के लिए आवश्यक है।
-महात्मा गांधी

राजभाषा प्रभाग

नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति में भाषा का महत्व

अभिषेक कुमार सिंह, ब्रह्म प्रकाश एवं अजय कुमार साह
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

शिक्षा प्रत्येक देश, प्रदेश, समाज व परिवार में प्रगति का आधार है। ज्ञान ही शक्ति है। सूचना मुक्ति है। शिक्षा सभ्यता का प्रसारण है। शिक्षा नेतृत्व की जननी है। शिक्षा ही सब कुछ है। शिक्षा जीवन के लिए तैयारी का साध्य नहीं अपितु शिक्षा ही जीवन है। शिक्षा वह नींव है जिस पर हम अपने भविष्य का निर्माण करते हैं। शिक्षा हमारी अनभिज्ञता की एक प्रगतिशील खोज है। शिक्षा ही आपकी शक्ति है जो कुछ भी आप करना चाहते हैं उसके लिए शिक्षा जीवन में आपका मार्ग है। शिक्षा सबसे शक्तिशाली हथियार है जिसका उपयोग आप दुनिया को बदलने के लिए कर सकते हैं। शिक्षा का उद्देश्य एक खुले दिमाग के साथ एक खाली दिमाग को बदलना है। ज्ञान में एक निवेश सबसे अच्छा ब्याज देता है। शिक्षा की जड़ें कड़वी होती हैं लेकिन इसका फल अत्यंत मीठा होता है। शिक्षा बच्चे को उसकी क्षमताओं का एहसास कराने में मदद करती है। शिक्षा का उद्देश्य तथ्यों का नहीं अपितु मूल्यों का ज्ञान है। शिक्षा का सम्पूर्ण उद्देश्य दर्पण को खिडकियों में बदलना है। एक गुणवत्तापूर्ण शिक्षा हमें अज्ञानता और गरीबी का युद्ध लड़ने की क्षमता प्रदान करती है। उपरोक्त सभी कथन शिक्षा के महत्व को रेखांकित करते हैं। अतः किसी भी देश की राष्ट्रीय शिक्षा नीति अत्यंत सावधानी के साथ बनानी चाहिए।

प्राचीन समय में शिक्षा प्राप्त करने का उद्देश्य ज्ञान का अर्जन करना ही मात्र नहीं था अपितु वह पूर्ण आत्म–ज्ञान एवं मुक्ति के रूप में मानी जाती थी। हमारे देश में प्राचीन काल में नालंदा, विक्रमशिला एवं तक्षशिला जैसे विश्वस्तरीय शैक्षणिक संस्थान विविध क्षेत्रों में अध्ययन व शोध के ऊँचे प्रतिमानों को स्थापित करने हेतु स्थापित किए गए थे। इसी शिक्षा व्यवस्था ने चरक, पाणिनी, आर्यभट, पतंजलि, चाणक्य, पिंगला, वराहमिहिर एवं गार्गी जैसे महान विद्वानों को जन्म दिया था। इन विद्वानों ने गणित, खगोल विज्ञान, चिकित्सा विज्ञान इत्यादि में प्रमाणिक रूप से उनके द्वारा दिए गए योगदानों को आज सम्पूर्ण विश्व मान रहा है। यूनेस्को और विश्व की अन्य संस्थाओं ने इस विषय पर जोर दिया है कि अपनी मातृभाषा में सीखना, आत्मसम्मान और अपनी पहचान बनाने के साथ–साथ बच्चे के सम्पूर्ण विकास के लिए भी परम आवश्यक है।

भारत की स्वतंत्रता के पूर्व प्रथम विधि आयोग के अध्यक्ष के रूप में लॉर्ड थॉमस बेविंग्टन मैकाले 10 जून 1834 को भारत पहुंचे थे। इसी वर्ष लॉर्ड मैकाले ने भारत में नई शिक्षा नीति की नींव रखी थी। मैकाले ने यहाँ के सामाजिक भेदभाव, शिक्षण में भेदभाव व दंड संहिता में भेदभाव देखकर ही आधुनिक शिक्षा पद्धति की नींव रखी। इसमें इतिहास, भूगोल, कला, भाषा विज्ञान, विज्ञान, अभियांत्रिकी, चिकित्सा, प्रबंधन अथवा आधुनिक विधाएँ सम्मिलित थीं। इनका माध्यम आरंभ में अंग्रेजी भाषा रखा गया परंतु बाद में इसके साथ सभी प्रमुख क्षेत्रीय भाषाएँ माध्यम बना दी गईं। लार्ड मैकाले ने संस्कृत–साहित्य पर प्रहार करते हुए लिखा है "कि क्या हम ऐसे चिकित्सा शास्त्र का अध्ययन कराएं जिस पर अंग्रेजी पशु–चिकित्सा को भी लज्जा आ जाए? क्या हम ऐसे ज्योतिष को पढ़ायें जिस पर अंग्रेज बालिकाएं हँसें, क्या हम ऐसा भूगोल बालकों को पढ़ने को दें जिसमें शीरा तथा मक्खन से भरे समुद्रों का वर्णन हो"? लार्ड मैकाले संस्कृत, तथा फारसी भाषा पर धन व्यय करना मूर्खता समझते थे।

एक प्राचीन कहावत है "अगर किसी देश को कमजोर करना है तो उसकी शिक्षा नीति को कमजोर कर दो, वह देश अपने आप कमजोर हो जाएगा"। इस कहावत से यह ज्ञात होता है कि किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व के निर्माण में शिक्षा का अत्यंत महत्वपूर्ण योगदान है। 2 फरवरी 1835 को ब्रिटिश संसद में भाषण देते हुए लार्ड मैकाले ने कहा था "मैंने भारत की ओर–छोर की यात्रा की है पर मैंने एक भी आदमी ऐसा नहीं देखा जो भीख माँगता हो या चोर हो। मैंने इस मुल्क में अपार सम्पदा देखी है। उच्च उदार मूल्यों को देखा है। इन योग्य मूल्यों वाले भारतीयों को कोई कभी जीत नहीं सकता। यह मैं मानता हूँ, तब तक; जब तक कि हम इस मुल्क की रीढ़ ही न तोड़ दें, और भारत की रीढ़ है उसकी आध्यात्मिक और साँस्कृतिक विरासत। इसलिए मैं यह प्रस्ताव करता हूँ कि भारत की पुरानी शिक्षा व्यवस्था को हम बदल दें। उसकी संस्कृति को बदलें ताकि हर भारतीय यह सोचे कि जो भी विदेशी है वह बेहतर है। वे यह सोचने लगें कि अंग्रेजी भाषा महान है, अन्य देशी भाषाओं से। इससे वे अपना सम्मान खो बैठेंगे। अपनी देश व जातीय परम्पराओं को भूलने लगेंगे और फिर वे वैसे ही हो जाएँगे जैसा हम चाहते हैं, सचमुच एक आक्रान्त एवं पराजित राष्ट्र।"

कालांतर में 15 अगस्त 1947 को भारत आज़ाद हुआ। स्वतंत्र भारत की प्रथम शिक्षा नीति का गठन 24 जुलाई 1968 को किया गया था जिसमें राष्ट्रीय एकता व समाजवाद का प्रतिबिंब मुख्य था। वर्ष 1986 में शिक्षा नीति में दूसरी बार बदलाव किया गया। जिस समय पुरानी शिक्षा नीति बनाई गई थी, उस समय के भारत और आज के भारत में बहुत परिवर्तन आ चुका है। क्योंकि समय के साथ–साथ सभी का बदलाव जरूरी है। अतः यह समय की आवश्यकता थी कि हम अपनी शिक्षा नीति को बदलें। सन् 1986 की शिक्षा नीति में बदलाव नितान्त आवश्यक था। लेकिन यह कार्य करे कौन? इसके लिए हम सभी को इस समय की केंद्र सरकार को धन्यवाद देना चहिए कि उसने इसको बदलने के लिए सोचा। वर्तमान शिक्षा नीति प्राचीन और सनातन भारतीय ज्ञान और विचार की समृद्ध परंपरा को ध्यान में रखकर तैयार की गई है। जैसा कि माना जाता है कि बच्चों के मस्तिष्क का 85 प्रतिशत विकास 6 वर्ष की अवस्था से पूर्व ही पूरा हो जाता है। इसलिए जन्म से लेकर 6 वर्ष तक की आयु बच्चों के उचित विकास एवं शारीरिक वृद्धि के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। लेकिन आज भी हमारे देश में करोड़ों बच्चे सामाजिक–आर्थिक रूप से वंचित हैं जिन्हें गुणवत्तापूर्ण प्रारंभिक देखभाल एवं शिक्षा उपलब्ध नहीं हो पा रही है। इसीलिए इस नई शिक्षा नीति में ऐसी व्यवस्था

को लागू किया गया है कि जो अब तक शिक्षा से वंचित थे, उन्हें अब वंचित न रहना पड़े।

वर्ष 2016 में प्रधान मंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी ने नई शिक्षा नीति बनाने का कार्य आरंभ किया तथा तीन वर्षों की मेहनत व दूरदर्शिता के उपरांत नवीन शिक्षा नीति की घोषणा की गई। इस प्रकार 34 वर्षों के लंबे अंतराल के बाद भारत में नई शिक्षा नीति लागू की जा रही है। नई शिक्षा नीति से निश्चित रूप से हिंदी भाषा को प्रोत्साहन मिलेगा। नई शिक्षा नीति में स्कूली शिक्षा में त्रिभाषी *फॉर्मूला* चलेगा। इसमें हिन्दी व संस्कृत के साथ सभी क्षेत्रीय भाषाओं का विकल्प रहेगा। नई शिक्षा नीति में पाँचवी कक्षा तक मातृभाषा अथवा क्षेत्रीय भाषा पढ़ाई का माध्यम बनेंगी। पुरानी शिक्षा नीति में लोगों का रुझान अंग्रेजी भाषा की ओर बढ़ता जा रहा था। बच्चा घर में अपनी मातृभाषा बोलता व सुनता था परंतु विद्यालय में उसे अंग्रेजी में शिक्षा दी जाती थी। इससे बच्चों को विभिन्न अवधारणा एवं सिद्धान्त स्पष्ट नहीं हो पाते थे तथा वह असमंजस में रहते थे,मातृभाषा में पढ़ाई होने से बच्चे सभी विषयों को भली–भांति समझ सकेंगे।

भाषा का महत्व

भाषा संचार का सबसे बड़ा सशक्त माध्यम है। नई शिक्षा नीति में हिंदी व अन्य क्षेत्रीय भाषाओं को प्राथमिकता मिलेगी। नई शिक्षा नीति में प्राथमिक स्तर की पढ़ाई मातृभाषा व स्थानीय भाषा के प्रयोग पर अधिक ज़ोर दिया गया है। इसका मुख्य उद्देश्य बच्चों को उनकी मातृभाषा व संस्कृति से जोड़कर रखते हुए उन्हें शिक्षा के क्षेत्र में आगे बढ़ाना है। हम सबको सर्वविदित है कि बच्चे सबसे ज्यादा अपनी मातृभाषा में ही सीखते हैं। इसलिए इस शिक्षा नीति में बच्चों को अपनी भाषा/मातृभाषा/स्थानीय भाषा/क्षेत्रीय भाषा में सिखाने पर जोर दिया जा रहा है। इसके लिए आवश्यक है कि हमारे पास पढ़ने की जो पाठय पुस्तकें हैं, वह क्षेत्रीय भाषा/स्थानीय भाषाओं में हों। जैसा कि हम जानते हैं कि बच्चे सबसे ज्यादा 2 और 8 वर्ष की आयु के बीच भाषा को जल्दी समझते और सीखते हैं। इन्हीं बातों को ध्यान में रखकर इस नवीन शिक्षा नीति में यह जोर दिया गया है कि बच्चों को विभिन्न भाषाओं में सिखाया जाए, लेकिन मातृभाषा पर विशेष जोर दिया जाए। शिक्षा नीति 2020 में अग्रेजी को सिर्फ एक भाषा की तरह पढ़ाया जाएगा जिससे विद्यार्थी अपनी मातृभाषा के प्रति जागरूक हो सकें। पाँचवी कक्षा तक विद्यार्थी मातृभाषा, स्थानीय व क्षेत्रीय भाषा में ही पढ़ाई कर पाएगा। यद्यपि नई शिक्षा नीति में यह भी स्पष्ट किया गया है कि किसी पर कोई भी भाषा थोपी नहीं जाएगी। आगे की कक्षाओं में यह ध्यान रखा गया है कि बच्चों को क्षेत्रीय भाषा और संविधान की आठवीं अनसूची में वर्णित सभी भाषाओं में पढ़ने की सामग्री उपलब्ध हो। उच्चतर गुणवत्ता वाले विषय विज्ञान और गणित में द्विभाषी पाठयपुस्तकों और शिक्षण सामग्री उपलब्ध हो सके जिससे विद्यार्थी मातृभाषा और अंग्रेजी जैसे दोनो ही विषयों में सक्षम हो सकें। संस्कृत के अतिरिक्त, भारत की अन्य भाषाएं और साहित्य विकल्प के रूप में उपलब्ध होंगी जिससे कि वह सभी भाषा और साहित्य जीवित और जीवंत रह सकें। किसी भी पठन सामग्री को जितना सुगमता से विद्यार्थी अपनी मातृभाषा में समझ सकता है वह दूसरी भाषा में नहीं समझ सकता। इसके लिए सरकार पढ़ाई की सामग्री विद्यार्थियों की मातृभाषा में ही उपलब्ध कराने के लिए जुट गई है। प्रख्यात भौतिकशास्त्री और नोबेल पुरस्कार से सम्मानित, सर सीवी रमन ने कहा था, "हमें विज्ञान को मातृभाषा में पढ़ना– पढ़ाना चाहिए, अन्यथा वह एक गर्व या घमंड का विषय बन जाएगा। वह ऐसा विषय नहीं बन सकेगा जिसमें हर कोई शिरकत कर सके।"

नई शिक्षा नीति में भारतीय भाषाओं और अंग्रेजी के अतिरिक्त, अन्य विदेशी भाषाएं जैसे *जर्मन, फ्रेंच, स्पेनिश, थाई* इत्यादि भाषाएं भी अध्ययन हेतु उपलब्ध रहेंगी। जिससे कि यदि कोई छात्र इन सब भाषाओं में से किसी भी भाषा में अपना ज्ञान बढ़ाना चाहता है तो वह बढ़ा सकता है, जिससे कि उसे वैश्विक ज्ञान की प्राप्ति हो सकें।

हाल ही में देश के आठ राज्यों के 14 *इंजीनियरिंग कालेजों* ने आगामी सत्र में चुने हुए पाठयक्रमों को अपनी स्थानीय भाषाओं में भी उपलब्ध कराने का फैसला किया है जो कि एक स्वागत योग्य कदम है। अभी आने वाले समय में बहुत सारे *इंजीनियरिंग* और चिकित्सा से जुड़े हुए *कालेज* अपने यहा स्थानीय भाषा में पढ़ाने का विकल्प देंगे। स्थानीय भाषा में उच्चतर शिक्षा पाने के लिए सबसे बड़ी बाधा हमारे शिक्षार्थियों को अपनी भारतीय भाषाओं में सामग्री की उपलब्धता का न होना भी है, जिसके कारण हमारे विद्यार्थी चाह कर भी अपनी मातृभाषा में शिक्षा ग्रहण नहीं कर सकते। इस कमी को दूर करने के लिए हमारे देश में भी प्रयास प्रारंभ हो गये हैं। हमारे देश की अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद (*एआईसीटीई*) और भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (*आईआईटी*), मद्रास के सहयोग से पाठ्य सामग्री को तमिल, हिंदी, तेलगु, कन्नड, बांग्ला, मराठी, मलयालम और गुजराती आदि भाषाओं में उपलब्ध करा रही है जो कि एक सराहनीय कदम है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति की पहली वर्षगांठ के अवसर पर देश के प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने कहा था कि नई शिक्षा नीति में मातृभाषा के माध्यम से शिक्षा दिए जाने से बहुत से ऐसे छात्र जो ग्रामीण, गरीब और जनजातीय पृष्ठभूमि से हैं, उनके अन्दर एक नया आत्मविश्वास पैदा होगा। इस शुभ अवसर पर 'विद्या प्रवेश' नाम के एक कार्यक्रम का शुभारंभ भी किया गया। इस नीति से जो बच्चे केवल भाषा का ज्ञान न होने के कारण आगे की पढ़ाई को अच्छे ढ़ग से नहीं कर पा रहे थे, उनके लिए यह नई शिक्षा नीति अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध होगी। *इंजीनियरिंग* और चिकित्सा से जुड़े हुए विषयों की सामग्री अंग्रेजी के अतिरिक्त अन्य स्थानीय भाषाओं में उपलब्ध नहीं होने के कारण छात्रों को बहुत ही दिक्कत का सामना करना पड़ता था। इन सबको ध्यान में रखते हुए अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद (*एआईसीटीई*) ने 11 क्षेत्रीय भाषाओं में अनुवाद के लिए कृत्रिम बुद्धि (*आर्टिफ़िशियल इंटेलिजेंस*) *सॉफ्टवेयर* तैयार किया है जिसकी सहायता से स्थानीय भाषाओं में *इंजीनियरिंग* पाठ्यक्रम तैयार किए गए हैं। यही नहीं, अपितु इससे जुड़े अन्य विषयों का भी अनुवाद किया जा रहा है। आने वाले समय में भाषा की समस्या समाप्त करने की तरफ तेजी से सरकार द्वारा प्रयास किए जा रहे हैं।

इस प्रकार यह स्पष्ट दृष्टिगोचर हो रहा है कि नई शिक्षा नीति से आने वाले समय में भाषा का महत्व बढ़ने वाला है। इस शिक्षा नीति के अंतर्गत किए जाने वाले प्रयासों के फलस्वरूप आने वाले समय में किसी भी विषय में अध्ययन के लिए भाषा किसी भी प्रकार की परेशानी का सबब नहीं होगी। यह नवीन शिक्षा नीति केवल हिंदी ही नहीं, अपितु सभी क्षेत्रीय भाषाओं को पुष्पित–पल्लवित करने का अवसर देकर सभी भाषाओं को और अधिक समृद्ध करेगी।

राजभाषा प्रभाग

भारतीयता की पोषक हिंदी और इसका वैश्विक स्वरूप

रश्मि संजय श्रीवास्तव
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

प्राचीन काल में भारत में प्रमुख रूप से आर्य परिवार एवं द्रविड़ परिवार की भाषाएं बोली जाती थीं। उत्तर भारत की भाषाएं आर्य परिवार की तथा दक्षिण भारत की भाषाएं द्रविड़ परिवार की थीं। उत्तर भारत की आर्य भाषाओं में संस्कृत सबसे प्राचीन है, जिसका प्राचीनतम रूप ऋग्वेद में मिलता है। इसी की उत्तराधिकारिणी हिन्दी है।

आज हम जिस भाषा को हिन्दी के रूप में जानते हैं, वह आधुनिक आर्य भाषाओं में से एक है। हिन्दी वस्तुतः फारसी भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ है हिन्दी या हिंद से सम्बंधित। हिन्दी शब्द की निष्पत्ति सिन्धु–सिंध से हुई है क्योंकि ईरानी भाषा में 'स' को 'ह' बोला जाता है। इस प्रकार हिन्दी शब्द वास्तव में सिन्धु शब्द का प्रतिरूप है। कालातंर में हिंद शब्द सम्पूर्ण भारत का पर्याय बनकर उभरा है। इसी 'हिंद' शब्द से हिन्दी बना।

आधुनिक आर्य भाषाओं में, जिनमें हिन्दी भी है, का जन्म 1,000 ई. के आस–पास ही हुआ था किन्तु उसमें साहित्य रचना का कार्य 1,150 ई. या इसके बाद आरंभ हुआ। हिन्दी भाषा का विकास अपभ्रंश के शौरसेनी, मागधी और अर्ध–मागधी रूपों से हुआ है।

वैश्वीकरण, *ग्लोबलाइजेशन* या भूमण्डलीयकरण का अर्थ है विश्व में चारो ओर अर्थव्यवस्थाओं का बढ़ता हुआ एकीकरण। निःसंदेह यह एक आर्थिक अवधारणा है जो आज एक सांस्कृतिक एवं बहु–अर्थों में भाषाई संस्कार से भी जुड़ चुकी है। वैश्वीकरण आधुनिक विश्व का वह स्तंम्भ है जिस पर खड़े होकर दुनिया के हर समाज को देखा, समझा और महसूस किया जा सकता है। वैश्वीकरण आधुनिकता का वह मापदण्ड है, जो किसी भी व्यक्ति, समाज, राष्ट्र को उसकी भौगोलिक सीमाओं से परे हटाकर एक समान धरातल उपलब्ध कराता है, जहाँ वह अपनी पहचान के साथ अपने स्थान को मजबूत करता है। इसके प्रवाह में आज कोई भी भाषा और साहित्य अछूता नहीं रह गया है, वह भी अपनी सरहदों को पारकर दुनिया भर के पाठकों तक अपनी पहचान बना चुका है, जिसमें दुनिया भर के प्रबुद्ध पाठक भी एक दूसरे से जुड़ चुके हैं और साहित्य का वैश्विक परिप्रेक्ष्य में मूल्यांकन संभव हो पा रहा है।

असंख्य अहिन्दी भाषी क्षेत्रों के विद्वानों ने न केवल हिन्दी को अपनाया वरन उन्होंने हिन्दी को राजभाषा और राष्ट्रभाषा के रूप में स्थापित भी कराना चाहा और सभी जगह घूम–घूमकर हिन्दी का बिगुल बजाया। साथ ही विदेशों में भी जाकर हिन्दी की पुरजोर वकालत की और अंतराष्ट्रीय परिदृश्य में हिंदी का परचम लहराया। इस सम्बंध में राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी का योगदान महत्वपूर्ण है। गुजराती भाषी महात्मा गाँधी ने कहा था "हिन्दी ही देश को एक सूत्र में बाँध सकती है। मुझे अंग्रेजी बोलने में शर्म आती है और मेरी दिली इच्छा है कि देश का हर नागरिक हिन्दी सीख ले व देश की हर भाषा देवनागरी में लिखी जाए" गाँधी का मानना था कि हर भारतवासी को हिन्दी सीखना चाहिए। इसी तरह मराठी भाषी लोकमान्य बालगंगाधर तिलक ने एक अवसर पर कहा था "हिन्दी ही भारत की राजभाषा होगी।" स्वामी दयानन्द सरस्वती, स्वामी विवेकानंद, सुभाषचंद्र बोस, चक्रवर्ती राजगोपालाचारी, केशवचंद्र सेन आदि अनेक अहिन्दी भाषी विद्वानों ने हिन्दी भाषा का प्रबल समर्थन किया और हिन्दी को भारत का भविष्य माना। स्वामी विवेकानन्द ने तो सन 1893 ई. में शिकागो के विश्व धर्म सम्मेलन में *'पार्लियामेंट आफ रिलीजन'* में अपने भाषण की शुरूआत भाइयों और बहनों से करके सब को मंत्रमुग्ध कर दिया था। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने 'सत्यार्थ प्रकाश' जैसा क्रांतिकारी ग्रंथ हिन्दी में रचकर हिन्दी को एक प्रतिष्ठा प्रदान की। कवि, राजनेता और भारत के पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी बाजपेयी ने जनता सरकार के तत्कालीन विदेशमंत्री के रूप में संयुक्त राष्ट्र महासभा में हिंदी में पहला भाषण देकर इसके अंतर्राष्ट्रीय स्वरूप और महत्व में अत्यंत वृद्धि की।

14 सितम्बर 1949 को संविधान सभा ने हिन्दी को भारतीय संघ की राजभाषा घोषित किया। तब से लेकर अब तक हिन्दी के स्वरूप में उत्तरोत्तर विकास औए परिवर्तन हुआ है। आज हिन्दी भी वैश्वीकरण की बयार से अछूती नहीं है। आज हम यह कह सकते हैं कि हिन्दी भाषा एक बार फिर नई चाल में ढल रही है।

मैं कहना चाहूँगी कि आज हिन्दी भारत के साथ–साथ विश्व भाषा बनने को तैयार है। आज हिन्दी बाजार और व्यापार की प्रमुख भाषा बनकर उभरी है। हिन्दी आज अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अपनी मजबूत जगह बना चुकी है। अमेरिकी राष्ट्रपति ने स्पष्टतया घोषणा की कि "हिन्दी ऐसी विदेशी भाषा है जिसे 21वीं सदी में राष्ट्रीय सुरक्षा और समृद्धि के लिए अमेरिका के नागरिकों को सीखना चाहिए"। अमेरिका में भी आज हिन्दी भाषा का प्रयोग बढ़ा है। इस प्रकार हम कह सकते हैं आज हिन्दी अंतराष्ट्रीय स्तर पर किसी पहचान की मोहताज नहीं है वरन उसने विश्व परिदृश्य में एक नया मुकाम हासिल किया है।

आज अप्रवासी भारतीय पूरे विश्व में फैले हैं। एक आँकड़े के अनुसार इनकी संख्या पूरे विश्व में लगभग 2 करोड़ हैं। जिनके मध्य हिन्दी का पर्याप्त प्रचार प्रसार है। विश्व में हिन्दी शिक्षण को बढ़ावा देने के लिए निजी संस्थाएं, धार्मिक संस्थाए और सामाजिक संस्थाएं तो आगे आ ही रही है, सरकारी स्तर पर विद्यालय एवं विश्वविद्यालय द्वारा भी हिन्दी शिक्षण का बखूबी संचालन किया जा रहा है। उच्च अध्ययन संस्थानों में भी अध्ययन–अध्यापन एवं अनुसंधान की अच्छी व्यवस्था है। इस सम्बंध में अमेरिकी विद्वान, डा. शोमर का कहना है कि "अमेरिका

में ही 113 विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों में हिन्दी अध्ययन की सुविधाएं उपलब्ध हैं। जिनमें से 13 तो शोध स्तर के केंद्र बने हुए हैं।" आँकड़े बताते हैं कि इस समय विश्व के 143 विश्वविद्यालयों में हिन्दी शिक्षा की विविध स्तरों पर व्यवस्था है ।

भारत के बाहर जिन देशों में हिन्दी को बोलने, लिखने–पढ़ने तथा अध्ययन और अध्यापन की दृष्टि से प्रयोग होता है उनको अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से निम्न वर्गों में बाँटा जा सकता है–

1. जहाँ भारतीय मूल के लोग अधिक संख्या में रहते हैं, जैसे पाकिस्तान, नेपाल, भूटान, बांग्लादेश, म्यामांर, श्रीलंका व मालदीव आदि ।
2. भारतीय संस्कृति से प्रभावित दक्षिण पूर्वी एशियाई देश जैसे इंडोनेशिया, मलेशिया, थाईलैंड, चीन, मंगोलिया, कोरिया तथा कनाडा।
3. जहाँ हिन्दी को विश्व की आधुनिक भाषा के रूप में पढ़ाया जाता है, जैसे अमेरिका, आस्ट्रेलिया, कनाडा और यूरोप के देश ।
4. अरब तथा अन्य इस्लामी देश जैसे संयुक्त अरब अमीरात (दुबई), अफगानिस्तान, कतर, मिश्र, उजबेकिस्तान, कजाकिस्तान, तुर्कमेनिस्तान आदि।

अंत में मैं यह कहना चाहती हूँ कि भारतीयता की पोषक हिन्दी और इसका वैश्विक स्वरूप आज अपने श्रेष्ठ रूप में परिलक्षित हो रहा है। हिंदी संयुक्त राष्ट्र संघ की भाषा बनने के लिए प्रयत्नशील है। 21वीं सदी के पहले दशक में हिन्दी भाषा में जो परिवर्तन हुए हैं वे साधारण नहीं है। आज हिन्दी का स्वरूप *ग्लोबल* हो चला है। भाषा और व्याकरण में नए प्रयोग किये जा रहे हैं। साथ ही आज हिन्दी का महत्व अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी बढ़ रहा है।

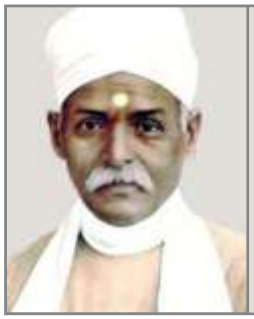

हिंदी भाषा एक ऐसी सार्वजनिक भाषा है,
जिसे बिना भेद-भाव प्रत्येक भारतीय
ग्रहण कर सकता है।
-मदन मोहन मालवीय

राजभाषा प्रभाग

कृषि सुधार अधिनियमः भारत सरकार द्वारा किसान हितैषी एक साकार कदम

अश्विनी कुमार शर्मा, ब्रह्म प्रकाश, अभिषेक कुमार सिंह एवं अश्विनी दत्त पाठक
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

भारत एक कृषि प्रधान देश है जहां की अधिकांश जनसंख्या कृषि पर ही निर्भर रहती है। स्वतन्त्रता के पश्चात देश के कृषि क्षेत्र में उल्लेखनीय विकास हुआ है। इसके बावजूद अन्नदाता किसानों की आर्थिक स्थिति आज भी अच्छी नहीं है। कृषि अनुसंधान के क्षेत्र में उल्लेखनीय शोध कार्य होने से भारत कृषि के अधिकांश उत्पादों में आत्मनिर्भर हो गया है परंतु इस स्थिति का समुचित लाभ किसानों को नहीं मिल पाया है। सरकार द्वारा कई प्रयास किए जाने के बावजूद आज भी लघु एवं सीमांत किसानों की सामाजिक–आर्थिक दशा में सुधार गैर कृषि व कृषि से बाहर की आय द्वारा ही संचालित होता है। भारत की स्वतन्त्रता के बाद से शायद ही कोई वर्ष ऐसा रहा हो जब सरकार ने कृषि संबंधी कोई हस्तक्षेप नहीं किया हो अथवा किसी वर्तमान नीति में कोई संशोधन न किया हो। कृषि विपणन हस्तक्षेपों में गौरवशाली विरासत का आरंभ कृषि पर *रॉयल कमीशन* (1928) की संस्तुतियों के आधार पर बनाए गए *मॉडल बिल* से किया गया था। स्वतन्त्रता प्राप्त करने से पूर्व, मूल्य नीति उपभोक्ताओं तथा उद्योग के लिए मूल्यों को कम रखने पर केन्द्रित थी। स्वतन्त्रता के पश्चात के युग में, उत्पादन बढ़ाने के लिए उचित एवं पारदर्शी तरीके से लाभकारी मूल्यों के माध्यम से कृषकों को प्रोत्साहित करने की आवश्यकता थी। यद्यपि, कम मूल्यों की प्राप्ति, विपणन की उच्च लागत तथा कटाई उपरांत होने वाले नुकसान ने विनियमित प्राथमिक थोक बाज़ारों के विकास को आवश्यक बना दिया। 1960 के दशक में कृषि उत्पाद बाजार विपणन समिति (*एपीएमसी*) शुरू किया गया था जिसके अंतर्गत कृषि विपणन क्रियाओं का नियमन किया गया। 1960 तथा 1970 के दशक में राज्यों नें कृषि विपणन समिति के अधिनियमों को लागू किया गया जिसके अंतर्गत सभी प्राथमिक कृषि बाजार को अपने अधीन कर लिया गया। प्रत्येक बाजार क्षेत्र के लिए नियम बनाने तथा लागू करने के लिए एक कृषि उत्पाद विपणन समिति (*एपीएमसी*) का गठन किया गया। विनियमित बाज़ारों की स्थापना के पीछे का उद्देश्य कृषि व्यापार के लिए एक निष्पक्ष एवं पारदर्शी वातावरण सुनिश्चित करना था। 1950 में, भारत में 236 विनियमित बाजार थे, जिनकी संख्या आज बढ़कर 6,600 को पार कर गई है। आज भी 22,000 से अधिक ग्रामीण आवधिक बाजार या हाट मौजूद हैं जिनमें अवसंरचनात्मक सुविधाओं एवं बुनियादी ढांचे का अभाव है।

1980 के दशक के पश्चात बनाई गई कई समितियों एवं आयोगों ने इस असंतुलन को दूर करने के विभिन्न उपाय सुझाए हैं। वर्ष 2001 में शंकरलाल गुरु विशेषज्ञ समिति की संस्तुतियों एवं कई शोध अध्ययनों में गत दो दशकों में कृषि क्षेत्र में व्यापक सुधार करने की सिफ़ारिशें की गईं हैं। राष्ट्रीय किसान आयोग (2006) ने भी अपनी संस्तुतियों में इस बात को अहं बताया है कि फसल या पशु उत्पाद पैदा करना इतना अहम नहीं है बल्कि उसका सही विपणन सुनिश्चित कर कृषकों द्वारा उचित आय प्राप्त करना अहम है। तालिका संख्या 1 में पिछले दो दशको में गठित समितियां और किए गए सुधारों के बारे में जानकारी दी गई है। कृषि के कुछ क्षेत्रों में कई सुधार किए गए लेकिन ये सुधार किसानों की आर्थिक दशा में व्यापक सुधार करने में सक्षम सिद्ध नहीं हो सके। किसानों की समस्याओं को उस गहराई से नहीं समझा गया जिसकी आवश्यकता थी। समितियों के सुझावों पर सही ढंग से अमल नहीं हो पाने से खासतौर से ग्रामीण क्षेत्रों में स्पष्ट रूप से देखा गया है कि *कमीशन एजेंट*, आढ़तिए तथा व्यापारी आर्थिक रूप से किसानों से अधिक समृद्ध होते हैं। इसका कारण अत्यंत सीधा एवं स्पष्ट है कि किसी भी स्थिति में अपनी *कमीशन* कम न करके लघु व किसानों का हर संभव रूप से शोषण करके लाभ कमाने से ये बिचौलिये किसानों से अधिक समृद्ध हो सके हैं। यह भी विडम्बना रही है कि गेहूँ व धान उगाने वाले कृषक फल एवं सब्जियों तथा अन्य औद्यानिक फसलें उगाने वाले कृषकों की तुलना में अधिक समृद्ध होते गए। वास्तव में

तालिका 1 : भारत में कृषि विपणन में गत दो दशकों में सरकार द्वारा किए गए प्रयास

वर्ष	पूर्व में किए गए सुधारों के प्रयास
2001	विशेषज्ञ समिति रिपोर्ट, कृषि मंत्रालय
2002	कृषि विपणन सुधारों पर अंतर–मंत्रालय *टास्कफोर्स* की रिपोर्ट
2003	सभी राज्यों को मॉडल कृषि उत्पाद विपणन समिति अधिनियम, 2003 वितरित किया गया
2004–06	राष्ट्रीय किसान आयोग
2007	*मॉडल एपीएमसी* अधिनियम, 2007 मुद्रित
2013	सुधारों को बढ़ावा देने के लिए कृषि विपणन के प्रभारी राज्य मंत्रियों की समिति की *रिपोर्ट*
2015	*}–नाम* लाँच की गईं
2016	कृषि विकास पर नीति आयोग *टास्कफोर्स* का गठन
2017	किसानों की आय को दोगुनी करने की समिति की रिपोर्ट, *मॉडल एपीएलएम एक्ट*, 2017
2018	*मॉडल* अनुबंध खेती अधिनियन, 2018, ग्रामीण कृषि बाज़ारों के संचालन व प्रबंधन के लिए संचालन नीतिनिर्देश
2019	मुख्य मंत्रियों की उच्च स्तरीय समिति
2020	कृषि विपणन में सुधार के लिए तीन एतिहासिक बिल संसद में पेश किए गए

किसानों की आय उन राज्यों में ही बढ़ सकी जहां पर खाद्यान्नों में न्यूनतम समर्थन मूल्य नीति के अंतर्गत सरकारी खरीद की उचित व्यवस्था थी। इन्हीं समस्याओं के चलते बहुत लंबे समय से कई राज्यों में *एपीएमसी* अधिनियम को समाप्त करने के प्रयास किए जा रहे थे तथा कुछ राज्य उसमें सफल भी हो गए थे। भारत सरकार द्वारा तीन क़ानूनों के बनाए जाने तक व्यापारी– किसान सम्बन्धों का रूपान्तरण अत्यंत जटिल प्रक्रिया के रूप में प्रतीत हो रही थी।

सुधार की आवश्यकता

प्रत्येक समस्या का समाधान उसी समस्या के गर्भ में ही छिपा होता है। पुराने पड़े हुए सुधारों को गतिमान करने के लिए एवं नए अवसर उपलब्ध कराने के लिए ही हर नई समस्या जन्म लेती है। सदी की सबसे बड़ी कोविड–19 महामारी की विश्वव्यापी समस्या ने भी भारतीय कृषि नीति को अर्थपूर्ण एवं प्रयोजनात्मक रूप देने का अवसर प्रदान किया है। पिछले दो दशकों से स्पष्ट था कि कृषि विपणन के क्षेत्र में वर्तमान में कई कमियां व्याप्त हैं जैसे विखंडित एवं अपर्याप्त बाजार उपलब्धता, अधिक मंडी शुल्क, अपर्याप्त आधारभूत विपणन आवश्यकता एवं सुविधाएं, कटाई उपरांत क्षति का उच्च स्तर (वर्ष 2014 के एक अनुमान के अनुसार 90,000 करोड़ रुपए से अधिक की क्षति हुई थी), *लाइसेंसिंग* में प्रतिबंध (*लाइसेन्स* प्राप्त अभिकर्ता के रूप में प्रवेश प्रतिबंधित था, प्रतिस्पर्धा को हतोत्साहित करना एवं *कार्टेलाइजेशन* को प्रोत्साहित करना), उच्च मध्यस्थता लागत (उपभोक्ताओं के लिए लागत बढ़ाने के बावजूद किसानों द्वारा प्राप्त निराशाजनक मूल्य), सूचना विषमता (किसान एवं *कमीशन* अभिकर्ताओं के मध्य) तथा ऋण सुविधाओं की अनुपलब्धता। इसके अलावा किसानों की छोटी जोत का होना उनकी आय वृद्धि में बहुत बड़ी रुकावट है। अतः कृषि विपणन में हमारे किसानों के कल्याण के लिए तुरंत सुधार किए जाने की आवश्यकता थी।

विभिन्न समितियों एवं आयोगों द्वारा सुझाए गए विभिन्न उपायों के अनुसार किसानों को कृषि उत्पाद विपणन समिति (*एपीएमसी*) के बाहर निकालकर व्यापारियों तथा साहूकारों के चंगुल से निकालना अत्यंत आवश्यक था। साथ ही कृषि विपणन में सभी क्षेत्रों, राज्यों तथा किसानों में एकरूपता लाना भी आज के समय की महती आवश्यकता थी। किसानों के उत्पाद अंतिम उपभोक्ता तक पहुँचने से पहले उनकी उत्पाद लागत का 50% अधिक मूल्य मिलने की भी आवश्यकता थी। यद्यपि कृषि राज्य सरकारों का विषय है। सभी राज्य सरकारें अपने–अपने हिसाब से कृषि संबंधी कानून बनाती हैं। उनकी आय को बढ़ाने के ठोस उपाय करना सरकार की पहली प्राथमिकता बनी हुई थी। भारत के संघीय ढांचे के *डिजाइन* का अर्थ था कि राज्यों को इन सुधारों को करने में अग्रणी भूमिका निभानी थी। फिर भी, सुधारों की आवश्यकता की ओर इशारा करने वाले सभी साक्ष्यों के बावजूद, राज्यों द्वारा की गई गति असमान एवं धीमी थी जिसने 17वीं लोकसभा की कृषि संबंधी स्थायी समिति को आश्चर्यचकित कर दिया। व्यापक जनहित में इन लंबे समय से चली आ रही मांगों को पूरा करने के लिए मजबूत एवं निर्णायक कार्यवाही की आवश्यकता थी। बहुत समय तक हमने कृतिम सीमाएं बनाकर अपने किसानों को पीछे रखा था।

परंतु सम्पूर्ण देश में कृषि में कुछ बुनियादी सुधारों की आस किसान भाई लंबे अरसे से कर रहे थे। इन कमियों को दूर करने, कोविड–19 महामारी से उत्पन्न हालातों से निपटने तथा प्रधान मंत्री जी की महत्वाकांक्षी योजना वर्ष 2022 तक किसानों की आय को दोगुना करने हेतु सरकार ने कृषि क्षेत्र में व्यापक सुधार किए हैं। केंद्र सरकार ने पहल करते हुए सितम्बर 2020 में कृषि सुधार संबंधी तीन विधेयक पारित किए हैं जिन्होंने अब कानून का रूप ले लिया है तथा ये अब सम्पूर्ण भारत के विभिन्न राज्यों में लागू होंगे। भारत सरकार द्वारा तीन क़ानूनों के माध्यम से भारतीय कृषि को नए आयाम देने तथा किसानों को पूर्ण स्वतन्त्रता देने का काम किया गया हैं। यह तीन कृषि विधेयक हैं – कृषक उपज व्यापार और वाणिज्य (संवर्धन और सरलीकरण) अधिनियम (2020), कृषक (सशक्तिकरण और संरक्षण) मूल्य आश्वासन और सेवा का करार अधिनियम (2020) और आवश्यक वस्तुएं (संशोधन) विधेयक (2020)।

कृषि सुधारों पर वर्ष 2020 में बनाए गए तीन विधेयकों/अधिनियमों के मुख्य तथ्य बिन्दु निम्नवत हैं:

1: कृषक उपज व्यापार और वाणिज्य (संवर्धन और सरलीकरण) अधिनियम (2020)

- इस विधेयक से किसान एपीएमसी (*एग्रीकल्चर प्रोड्यूस मार्केट कमिटी*) अधिनियमों के अंतर्गत पोषित मंडी के बाहर भी अपनी कृषि पैदावार को खरीद व बेच सकते हैं। वर्तमान परिस्थितियों में किसान द्वारा ऐसे क्षेत्र में खेती करने पर जहां उसके द्वारा बोई जा रही फसल बहुत बड़े क्षेत्र में बोई जा रही है, तो उसे स्थानीय मंडी में ही अपनी उपज बेचनी पड़ती है। अतः कई किसानों द्वारा एक ही कृषि उत्पाद की बहुत बड़ी मात्रा मंडी में लाने के कारण उनको अपनी उपज के कम मूल्य मिलते थे। परंतु इस विधेयक के आ जाने से कृषक अपनी उपज को देश में कहीं भी बेचने को स्वतंत्र होगा जिससे वह कम पैदावार वाले क्षेत्रों में जहां उस फसल के कम उत्पादन होने के कारण मूल्य अधिक होते हैं, वहाँ ले जाकर अपनी फसल बेचकर अधिक लाभ अर्जित कर सकेगा।
- कृषि उत्पादों के राज्य के अंदर या अंतर्राजकीय परिवहन व व्यापार पर किसी भी प्रकार का कोई प्रतिबंध नहीं रहेगा।
- किसानों को आढ़तियों एवं बिचौलियों के चंगुल से मुक्ति मिल जाएगी क्योंकि आढ़तिए तथा बिचौलियों का एकाधिकार समाप्त हो जाएगा।
- किसानों को अपने कृषि उत्पाद बेचने के लिए कई नए खरीदार मिल सकेंगे।
- कृषि के विपणन की शृंखला से बिचौलियों के हट जाने से सामान्य उपभोक्ताओं को भी उच्च गुणवत्ता के कृषि उत्पाद सस्ते मूल्य पर उपलब्ध हो सकेंगे।
- कंपनियों को *इलेक्ट्रॉनिक* व्यापार करने की स्वतंत्रता रहेगी।
- इस विधेयक के अंतर्गत मंडी क्षेत्र के बाहर मंडी शुल्क भी समाप्त कर दिया गया है।

संक्षेप में इस कानून का मुख्य उद्देश्य किसानों को अपने

उत्पाद अधिसूचित कृषि उत्पाद विपणन समिति *एपीएमसी* अर्थात तय मंडियों से बाहर बेचने की छूट प्रदान करना है। इसका लक्ष्य किसानों को उनकी उपज के लिये प्रतिस्पर्धी वैकल्पिक व्यापार माध्यमों से लाभकारी मूल्य उपलब्ध कराना है। यह कृषि उपज के लिए अंतर्राज्य व्यापार के लिए बाधाओं को दूर करता है और *इलेक्ट्रॉनिक* ट्रेडिंग के लिए एक ढांचा प्रदान करता है। यह राज्य सरकारों को *एपीएमसी* बाजारों के बाहर व्यापार शुल्क, उपकर या लेवी एकत्र करने से रोकता है।

2. कृषक (सशक्तिकरण और संरक्षण) मूल्य आश्वासन और सेवा का करार अधिनियम (2020)

इस अधिनियम का उद्देश्य अनुबंध आधारित कृषि के लिए किसानों को अनुकूल व्यवस्था प्रदान करना है जिसके अंतर्गत कृषक बुआई सत्र प्रारम्भ होने से पूर्व किसी निर्धारित मूल्य पर कृषि उत्पाद को बेचने के लिए क्रेता के साथ एक सीधा अनुबंध कर सकें।

- इस अधिनियम से लघु एवं सीमांत किसान भी बड़ी कंपनियों के साथ अनुबंध करके खेती कर सकेंगे।
- किसानों द्वारा खेत में अपनी फसल की बुवाई से पूर्व ही उनकी फसलों की कीमतें निश्चित हो सकेंगी।
- अगर कोई तृतीय पार्टी (उत्पाद इकठा करने में संलग्न इकाईयां इत्यादि) भी विपणन में मदद करेगी तो उसका अनुबंध में पूर्ण विवरण होगा।
- आपसी सहमति से अनुबंध में उच्च गुणवत्ता के बीज, खाद, मशीनरी एवं कीटनाशक की उपलब्धता सुनिश्चित किया जाना शामिल किया जा सकता है।
- निजी कंपनियाँ खेती में निवेश करेंगी और इसे अंतर्राष्ट्रीय बाजार से जोड़ेंगी।
- अनुबंध के अंतर्गत उत्पन्न पैदावार में राज्य का क्रय–विक्रय का कोई भी कानून मान्य नहीं होगा। अतः राज्य इस उत्पाद पर *एमएसपी* लागू नहीं कर पाएगा।

संक्षेप में यह अधिनियम अनुबंध कृषि से संबंधित है, जो कृषि उपज की बिक्री और खरीद के लिए व्यापार समझौतों पर एक रूपरेखा प्रदान करता है। इस कानून में परिकल्पित पारस्परिक रूप से सहमत उचित मूल्य–ढांचे को किसानों की रक्षा और सशक्त बनाने वाले के रूप में पेश किया गया है। इस अधिनियम के अंतर्गत किसानों को उनके होने वाले कृषि उत्पादों को पहले से तय दाम पर बेचने के लिये कृषि व्यवसायी फर्मों, प्रसंस्करणकर्ताओं, थोक विक्रेताओं, निर्यातकों या बड़े खुदरा विक्रेताओं के साथ अनुबंध करने का अधिकार मिलेगा। अब किसान अपनी उपज का मूल्य तय करने को स्वतंत्र होगा।

3. आवश्यक वस्तुएं (संशोधन) अधिनियम (2020)

- अनाज, दालें, तिलहन, खादय तेल, प्याज और आलू जैसे कृषि उत्पादओं को आवश्यक वस्तुओं की सूची से हटा दिया गया है।
- अभी तक अनाज, दालें, तिलहन, खाद्य तेल, प्याज और आलू जैसे कृषि उत्पादों के भंडारण की एक सीमा सरकार द्वारा निश्चित थी। जिससे अधिक मात्रा में भंडारण करने पर सरकार द्वारा आढ़तियों एवं व्यापारियों पर दंडात्मक कार्यवाही की जाती थी। इस विधेयक के अंतर्गत उपरोक्त उत्पादों पर लगी सीमा अब समाप्त कर दी गई है जिससे आढ़तियों एवं व्यापारियों का उत्पीड़न नहीं हो सकेगा तथा वह अपनी आवश्यकतानुसार किसी भी सीमा तक भंडारण कर सकेंगे।
- कृषि उत्पादों की भंडारण सीमा मूल्यों के बढ़ने पर परिवर्तित की जा सकेगी।
- निजी कंपनियाँ खाद्य उत्पादों के संरक्षण के लिए शीत–गृह और भंडार गृह बनाना आरंभ कर सकेंगी।
- युद्ध, अकाल, असाधारण मूल्य वृद्धि एवं प्राकृतिक आपदा की परिस्थिति में उपरोक्त उत्पादों की भंडारण सीमा बदली जा सकेगी एवं मूल्य का नियमन भी किया जा सकेगा।

संक्षेप में इस आवश्यक वस्तुओं की सूची से अनाज, दाल, तिलहन, प्याज और आलू जैसी कृषि उपज को युद्ध, अकाल, असाधारण मूल्य वृद्धि व प्राकृतिक आपदा जैसी 'असाधारण परिस्थितियों' को छोड़कर सामान्य परिस्थितियों में हटाने का प्रावधान रखा गया है। जिससे किसानों को अच्छी कीमत मिले।

अधिनियमों से अपेक्षित लाभ

तीन कृषि विधेयकों से कृषि क्षेत्र में होने बाले सकारात्मक प्रभाव निम्नवत हैं:

कृषक उपज व्यापार और वाणिज्य (संवर्धन और सरलीकरण) अधिनियम (2020)

- किसानों को पूरे देश में अपने उत्पाद बेचने की स्वतन्त्रता होने से सभी किसानों की पहुँच देश की सभी छोटी–बड़ी मंडियों तक हो जाएगी। इस प्रावधान से कृषकों को कहीं भी अपने उत्पाद बेचने में कोई भी बाधा नहीं पहुंचा सकता। इससे किसानों को पुलिस द्वारा होने वाले उत्पीड़न से भी बचाव हो सकेगा। अतः किसान किसी भी स्थान पर अपने उत्पाद को बेचने को स्वतंत्र होगा।
- यह अधिनियम किसानों को सरकार द्वारा नियंत्रित बाजारों से स्वतंत्र कर देगा। उनकी उपज बेचने पर आने वाली लागत को कम करेगा, और उन्हें उनकी उपज का बेहतर मूल्य दिलाने का कार्य करेगा। इस विधेयक से *एपीएमसी* अधिनियमों के अंतर्गत लगाए गए प्रतिबंधों से पूरी तरह से स्वतंत्रता मिल जाएगी। मंडी शुल्क के हटाए जाने तथा किसानों के खेतों से कृषि उत्पाद की विपणन व्यवस्था हो जाने से विपणन लागत में काफी कमी आएगी। अतः किसानों को राज्य सरकार द्वारा अधिसूचित *एपीएमसी* के बाहर यानि खेत पर, भंडार गृह, शीत गृह इत्यादि से भी विपणन कार्य करने की स्वंत्रता होगी।
- कम्पनियाँ, *पार्टनर फ़र्में* तथा समितियां सीधी एवं *ऑनलाइन* व्यापार के लिए *इलेक्ट्रॉनिक* प्लैटफ़ार्म विकसित कर सकेंगे।
- यह अधिनियम किसानों के लिये नए विकल्प उपलब्ध कराएगा। जिससे किसानों को खेती करने में अधिक सहायता प्राप्त होगी। इस अध्यादेश के लागू होने से कृषि क्षेत्र को बदलने और किसानों की आय बढ़ाने की काफी संभावना है। कृषि अर्थव्यवस्था में सुधार के साथ–साथ भारतीय अर्थव्यवस्था में सुधार होगा।

- इस अधिनियम के अंतर्गत जिस राज्य में ज्यादा उत्पादन हुआ हो उस राज्य के किसान कमी वाले दूसरे प्रदेशों में अपनी कृषि उपज बेचकर बेहतर दाम प्राप्त कर सकेंगे और अच्छा मुनाफा कमा सकेंगे।

कृषक (सशक्तिकरण और संरक्षण) मूल्य आश्वासन और सेवा का करार अधिनियम (2020)

- किसानों द्वारा की जाने वाली आत्महत्याओं के मुख्य कारणों में उनके कृषि उत्पाद के प्राप्त होने वाले मूल्यों में उनकी लागत का न निकल पाना एक प्रमुख कारण था। इस अधिनियम से कृषक अगर किसी कंपनी के साथ अनुबंध के आधार पर खेती करता है तो उसे एक निर्धारित मूल्य का आश्वासन उपलब्ध होगा। अतः इस प्रकार इस विधेयक से किसानों को उनके उत्पाद का उचित मूल्य मिल सकेगा।
- लिखित कृषि समझौता होने से किसी भी कृषि उपज के उत्पादन या पालन से पहले उपज आपूर्ति, उसकी गुणवत्ता, *ग्रेड*, मानक तथा कृषि उपज और सेवाओं की कीमत के लिए नियम और शर्तों को दर्ज एवं सूचीबद्ध किया जा सकेगा जिससे कृषि में पारदर्शिता रहेगी।
- फसल की बुवाई से पूर्व ही किसानों की फसलों की कीमतें निश्चित हो सकेंगी।
- इस विधेयक से किसानों का बड़ी कंपनियों के साथ अनुबंध होगा जिससे उनकी निर्भरता बाजार गुटबंदी के मूल्यों पर नहीं रहेगी। ये पाँच हेक्टेयर से कम भूमि वाले छोटे और सीमांत किसानों के लिए लाभ प्रदान करेंगे।
- इस अधिनियम के अंतर्गत समझौतों पर एक रूपरेखा तैयार की जाएगी जो किसानों को कृषि प्रौद्योगिकी कंपनियों, निर्यातकों और खुदरा विक्रेताओं के साथ जुड़ने के लिए सक्षम बनाने का कार्य करेगी तथा आधुनिक तकनीक से किसान की पहुंच प्रदान करते हुए सेवाओं और उपज की बिक्री भी सुनिश्चित करेगा।
- इस अधिनियम में यह प्रावधान किया गया है कि किसानों द्वारा लिए गए कर्ज को न चुकाने की स्थिति में कोई भी किसानों की कृषि योग्य भूमि पर कोई कार्यवाही नहीं कर सकता है।
- इस अधिनियम के आने से अब किसान की फसल में होने वाले जोखिम में खरीदार (जिनके साथ अनुबंध किया हो) भी भागीदार होगा। जिससे किसानो की फसल में होने वाले जोखिम की समस्या कम हो जाएगी। साथ ही किसान आधुनिक तकनीक और बेहतर कृषि निवेश तक पहुंच बना पाएंगे और यह कानून विपणन लागत को कम करके किसान की आय को बढ़ावा देता है।

आवश्यक वस्तुएं (संशोधन) अधिनियम (2020)

- आवश्यक वस्तुओं की सूची से अनाज और दालों जैसी वस्तुओं को हटाने के परिणामस्वरूप कटाई उपरांत प्रबंधन के क्षेत्र जैसे भंडार गृह व शीत गृह की अवस्थापना हेतु निजी निवेश/विदेशी प्रत्यक्ष निवेश को आकर्षित करने के साथ–साथ मूल्य स्थिरता लाने में मदद मिलेगी जिससे किसान अपनी उपज के लिए अच्छे दाम हासिल कर सकते हैं। इससे कटाई उपरांत प्रबंधन क्षेत्र मजबूत होगा।
- इससे आम उपभोक्ता को कृषि उत्पादों की निर्बाध आपूर्ति होती रहेगी एवं किसी भी प्रकार की कृत्रिम कमी नहीं होगी।
- कृषि उत्पादों की कीमतें स्थिर होंगी जिससे किसानों की आमदनी में वृद्धि होगी तथा आम उपभोक्ता को भी लाभ होगा।
- भंडार गृह एवं शीत गृह की अवस्थापना विकसित होने से कृषि उत्पादों का उचित रख–रखाव होगा एवं कृषि उत्पाद में नुकसान कम होने से किसानों एवं व्यापारियों को लाभ होगा।
- निजी क्षेत्र में निवेशकों के कारोबार में नियमन के डर को दूर करने में मदद मिलेगी।
- भण्डारण की सीमा मूल्य वृद्धि पर आधारित होने से जमाखोरी एवं कालाबाजारी पर लगाम लगाने का प्रावधान है।
- अत्यंत असाधारण परिस्थितियों में भंडारण सीमा बदली जा सकेगी लेकिन निर्यातकों एवं प्रसंस्करण इकाईयों के लिए स्टॉक सीमा में छूट रहेगी। अतः इन्हें किसी प्रकार की रुकावट का सामना नहीं करना पड़ेगा।

अधिनियम से होने वाले नुकसान

इन अधिनियमों से कुछ क्षेत्रों में नकारात्मक प्रभाव पड़ने का भी अंदेशा है। तीनों कृषि क़ानूनों से होने वाला नुकसान निम्नवत रहेंगे:

कृषक उपज व्यापार और वाणिज्य (संवर्धन और सरलीकरण) अधिनियम (2020)

- इस विधेयक से व्यापारियों, *कमीशन* अभिकर्ताओं तथा अन्य कर्मियों जिन्होने अपने लाभ के लिए गठजोड़ बना रखा है, को नुकसान होगा।
- इससे नए व्यापारियों एवं *कमीशन* अभिकर्ताओं को मंडी *यार्डों* में प्रवेश आसान होगा। इससे पहले से लगे व्यापारियों एवं *कमीशन* अभिकर्ताओं में प्रतियोगिता बढ़ेगी और उनका *कमीशन* कम होगा।
- इस अधिनियम से कृषि उत्पादों के विपणन के बहुत सारे *चैनेल्स* बंद हो जाएंगे। साथ ही *चैनेल* में लगे बिचौलियों में भी कमी हो जाएगी।
- राज्य को *कमीशन* और मंडी शुल्क से होने बाली आय बंद हो जाएगी।

कृषक (सशक्तिकरण और संरक्षण) मूल्य आश्वासन और सेवा का करार अधिनियम (2020)

- *कॉन्ट्रैक्ट फार्मिंग* देश के किसानों के लिए एक नई अवधारणा नहीं है। धान्य, अनाज और कुक्कुट क्षेत्रों में औपचारिक अनुबंधों के लिए अनौपचारिक अनुबंध आम हैं। कृषि क्षेत्र की असंगठित प्रकृति और निजी *कॉर्पोरेट* संस्थाओं के साथ कानूनी लड़ाई के लिए संसाधनों की कमी के कारण औपचारिक दायित्व सही से निभाए जाएंगे। इनके बारे में कई किसान संगठन आशंकित हैं।
- इस अधिनियम से क्रेता को कृषि उत्पाद का समर्थन मूल्य देने की बाध्यता नहीं है। यह अधिनियम मूल्य शोषण के

खिलाफ किसानों को सुरक्षा प्रदान करते हुए, मूल्य निर्धारण के लिए तंत्र को निर्धारित नहीं करता है। ऐसी आशंका है कि निजी *कार्पोरेट* घरानों को दिए जाने वाले *फ्री हैण्ड* से किसान का शोषण हो सकता है।

- इस अधिनियम में बड़ी कंपनियों के साथ समझौते के अंतर्गत किसी भी प्रकार का विवाद हो सकता है। बड़ी कंपनियों द्वारा किसानों के उत्पीड़न की संभावनाएं भी बनी रहेगी।

सेवा विधेयक और आवश्यक वस्तुएं (संशोधन) अधिनियम

- भंडारण सीमा की बाध्यता न होने से कालाबाजारी की संभावना हो सकती है।
- राज्यों को राज्य के अंदर खाद्यान्नों के भण्डारण की स्थिति के बारे में सटीक जानकारी उपलब्ध नहीं होगी।
- इससे बिचौलियों को नुकसान होगा क्योंकि वह आवश्यक वस्तुओं की कृतिम कमी पैदा करके कृषि उत्पादों के मूल्य नहीं बढ़ा सकेंगे।
- इससे बिचौलियों के लाभ का अंश कम होगा।

अधिनियम के बारे में विरोध

राजनीतिक दल, भारतीय किसान यूनियन (*बीकेयू*) जैसे कृषि संगठन और अखिल भारतीय किसान संघर्ष समन्वय समिति (*एआईकेएससीसी*) जैसे बड़े कृषि निकाय और पंजाब, हरियाणा एवं कुछ अन्य हिस्सों के किसानों के कुछ वर्ग इन अधिनियमों का विरोध कर रहे हैं। जैसे ही इन अधिनियमों को संसद में बहस के लिए पेश किया गया, विशेषकर पंजाब एवं हरियाणा के अधिकांश किसान संघों ने "दिल्ली चलो" नाम का एक आंदोलन खड़ा करके साथी किसानों से देश की राजधानी को चलने का आह्वान किया। 30 नवंबर 2020 को दिल्ली की सभी सीमाओं पर हजारों लोगों की भीड़ जमा हो गई। 26 जनवरी 2021 को गणतन्त्र दिवस के अवसर पर ट्रैक्टर सहित सैकड़ों किसान दिल्ली में घुस गए जिसने बाद में हिंसक रूप अपना लिया।

गत एक वर्ष से केंद्र सरकार और किसानों के बीच गतिरोध देखा जा रहा है। 14 अक्टूबर 2020 से 22 जनवरी 2021 के मध्य केंद्र सरकार और किसान संघों के प्रतिनिधित्व वाले किसानों के मध्य विभिन्न दौरों की बातचीत हो चुकी हैं। परंतु सभी सरकार के साथ किसी एक मत पर अनिर्णायक रहे। केवल पराली जलाने और बिजली अध्यादेश से संबंधित किसानों की दो मांगों पर सहमति हो सकीं। किसान नेताओं ने 18 महीने के लिए कानूनों को निलंबित करने के 21 जनवरी 2021 के सरकारी प्रस्ताव को भी खारिज कर दिया। भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने 21 जनवरी 2021 में कृषि कानूनों के कार्यान्वयन पर रोक लगा दी जो अभी तक प्रभावी है। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा नियुक्त समिति ने माननीय न्यायालय के समक्ष अपनी गोपनीय रिपोर्ट प्रस्तुत कर दी है।

26 जनवरी 2021 को लाल किले पर विरोध और हिंसा के बाद, कुछ समूहों के निहित स्वार्थ सार्वजनिक हो गए और कुछ किसान समूहों ने उसके बाद विरोध को छोड़ दिया। किसान संघों का एक वर्ग जहां विरोध कर रहा है, वहीं कुछ किसान संघ कृषि कानूनों के समर्थन में सामने आए हैं। भारत के सर्वोच्च न्यायालय को दिल्ली के आसपास प्रदर्शनकारियों द्वारा बनाई गई नाकेबंदी को हटाने के लिए याचिकाओं का एक समूह प्राप्त हुआ था। कुछ किसान नेताओं ने यह भी कहा है कि न्यायालय द्वारा कृषि कानूनों पर रोक लगाना कोई समाधान नहीं है। अब काफी कम संख्या में किसान विरोध में बैठे रह गए हैं।

कई किसान संघों द्वारा प्रायः किसान बिल कहे जाने वाले अधिनियमों को "किसान विरोधी कानूनों" के रूप में संबोधित किया जा रहा है। कई किसान संघों और राजनीतिज्ञों के प्रतिनिधि इन क़ानूनों को निरस्त करने की मांग करते हुए किसी भी प्रकार के समझौता स्वीकार नहीं करने की बात कर रहे हैं। विपक्ष के कई राजनेताओं का भी यही मानना है कि यह किसानों को *कार्पोरेटस* की दया पर छोड़ देगा। किसानों के संघों का मानना है। नए कानून धीरे धीरे न्यूनतम समर्थन मूल्य प्रणाली को समाप्त कर देंगे। किसान अपनी फसल के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य की *गारंटी* मांग रहे हैं। वो इसे किसानों का कानूनी अधिकार बनवाना चाहते हैं जिससे निश्चित मूल्य से कम पर खरीद करने वाले जेल में डाले जा सकें। न्यूनतम समर्थन मूल्य के एकाधिकार के विघटन को न्यूनतम समर्थन मूल्य पर खाद्यान्न की सुनिश्चित खरीद को समाप्त करने के संकेत के रूप में देखते है। किसान "एक राष्ट्र, एक बाजार" तथा "एक राष्ट्र, एक *एमएसपी*" की मांग कर रहे हैं। किसान यह भी मांग कर रहे हैं कि न्यूनतम समर्थन मूल्य बिल लाया जाए जो सुनिश्चित करे कि *कार्पोरेटस* मूल्यों पर नियंत्रण नहीं कर सकेंगे। उनका यह भी मानना है कि अगर इन क़ानूनों को लागू करेंगे तो किसान अपनी ही जमीन पर अधिकार खो सकते हैं। उनके अनुसार इन क़ानूनों से किसानों की जमीन छिन जाएगी तथा पूंजीपति व्यापारियों का उन पर कब्जा हो जाएगा। किसानों के अनुसार ये अधिनियम बड़े *कार्पोरेटस* को छोड़कर किसी को मदद नहीं करेंगे और किसानों की आजीविका को नष्ट कर देंगे। किसान नेता इस बात पर अत्यंत आक्रोशित हैं कि ये अधिनियम उन अन्नदाताओं की परेशानी बढ़ाएंगे, जिन्होंने अर्थव्यवस्था को संभाल रखा है। किसानों का कहना है कि अनुबंध कानून को भारतीय खाद्य व कृषि व्यवसाय पर हावी होने की इच्छा रखने वाले बड़े उद्योगपतियों के अनुरूप बनाया गया है। जिससे किसानों की फसल की मोल–तोल करने की शक्ति कमजोर हो जाएगी। साथ ही सभी बड़ी निजी कंपनियों, निर्यातकों, थोक विक्रेताओं और प्रसंस्करणकर्ताओं को इससे कृषि क्षेत्र में बढ़त मिल सकती है। इस कानून से किसानों में एक बड़ा डर यह भी है कि *कांट्रैक्ट फार्मिंग* में किसान व कंपनी के बीच विवाद होने की स्थिति में न्यायालय का दरवाजा नहीं खटखटाया जा सकता। कोई भी विवाद होने पर उसका फैसला सुलह बोर्ड में होगा, जिसका सबसे शक्तिशाली अधिकारी *एसडीएम* और *डीएम* को बनाया गया है। इसकी अपील सिर्फ जिलाधिकारी के यहां होगी। इस मुद्दे को लेकर किसानों का कहना है चूंकि जिलाधिकारी व *एसडीएम* राज्य सरकार के अधीन काम करते हैं, क्या वे सरकारी दबाव से मुक्त होकर काम कर सकते हैं? वो किसानों के हित में और सरकार के विरोध में कैसे कार्य करेंगे? कुल मिलाकर इसके खिलाफ किसान और व्यापारी दोनों एकजुट हो गए हैं।

क्योंकि कृषि और बाजार राज्य के विषय हैं। सूची 14 में क्रमशः 14 और 28 में दर्ज अध्यादेशों को राज्यों के कार्यों एवं संविधान में निहित सहकारी संघवाद की भावना के विरुद्ध प्रत्यक्ष अतिक्रमण के रूप में देखा जा रहा है। राज्य सरकारों के अंतर्गत

आने वाली कृषि उत्पादन विपणन समितियों से प्राप्त मंडी शुल्क एवं अन्य कर राजस्व का बड़ा स्त्रोत हैं तथा उनको भी इन अधिनियमों से राजस्व का बड़ा नुकसान होगा। राज्य सरकारें मंडी कर के रूप में राजस्व खो देंगी। यही कारण है कि विरोधी दलों की राज्य सरकारें इन अधिनियमों का विरोध कर रहीं हैं। छह राज्य सरकारें (केरल, पंजाब, छत्तीसगढ़, राजस्थान, दिल्ली तथा पश्चिम बंगाल) ने इन किसान अधिनियमों के विरुद्ध अध्यादेश पास किए हैं तथा तीन सरकारें (पंजाब, छत्तीसगढ़,तथा राजस्थान) ने अपने–अपने राज्य की विधान सभा में इन अधिनियमों के प्रभाव को समाप्त करने के नए अध्यादेश भी पास किए हैं। यद्यपि किसी भी राज्य के राज्यपाल द्वारा अभी तक इन *काउंटर* अध्यादेशों को पास नहीं किया गया है।

केंद्र सरकार इसे कृषि सुधार की दिशा में *मास्टर स्ट्रोक* बता रही है। केंद्रीय कृषि एवं किसान कल्याण, ग्रामीण विकास तथा पंचायती राज्य मंत्री ने स्पष्ट किया है कि इन अधिनियमों के माध्यम से अब किसानों को कानूनी बंधनों से आज़ादी मिलेगी, न्यूनतम समर्थन मूल्य को बरकरार रखा जाएगा तथा राज्यों के अंतर्गत संचालित मंडियाँ भी राज्य सरकारों के अनुसार चलती रहेंगी। इनसे कृषि विपणन में वर्तमान में संलग्न लोगों के साथ को भी दूर नहीं किया जा सकेगा। यह केवल किसानों को अपनी उपज का बेहतर मूल्य लेने के लिए विकल्प देते हैं। सरकार ने अनुबंध खेती में कोई भी विवाद होने पर उसका निर्णय *एसडीएम*/ जिलाधिकारी की अध्यक्षता वाले सुलह बोर्ड के स्थान पर उच्च न्यायालय में सुलझाने की किसानों की शर्त को मानने पर अपनी सहमति भी दे दी है। सरकार का यह भी तर्क है कि ये तीनों विधेयक किसानों को बिचौलियों के चंगुल से मुक्त कर सकते हैं। इन क़ानूनों से किसानों को अपने कृषि उत्पाद को सीधे बेचना संभव हो सकेगा तथा यह विरोध प्रदर्शन गलत सूचनाओं पर आधारित हैं। पंजाब एवं हरियाणा दोनों प्रमुख कृषि उत्पाद्क राज्यों की मंडियों में लाखों *कमीशन एजेंट* किसानों पर अपना नियंत्रण खोने तथा राजस्व में भारी कमी के विरोध में खड़े हैं।

अधिनियम के बारे में भ्रम एवं सत्य की स्थिति

यह जानना अत्यंत आवश्यक है कि आखिर वे कौन से पहलू हैं जिन्हें लेकर किसानों एवं व्यापारियों दोनों की चिंताएँ बढ़ गई हैं। क्या उनका अपने भविष्य को लेकर आकलन ठीक हैं? इन कानूनों को लेकर किसानों एवं व्यापारियों को किस बात का भय है जिसे सरकार इन अर्थव्यवस्था नायकों के मन–मस्तिष्क से नहीं निकाल पा रही है? इन क़ानूनों के बारे में तरह–तरह के भ्रम फैलाए गए हैं एवं इन्हीं भ्रमों से किसानों को गुमराह करके इनका विरोध भी किया जा रहा है। इन भ्रमों के एवज में सत्य का भान होना आवश्यक है जिसे निम्नवत वर्णित किया गया है:

1. कृषक उपज व्यापार और वाणिज्य (संवर्धन और सरलीकरण) अधिनियम (2020)

किसानों का भ्रमः

- किसान अपनी उपज के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य प्राप्त करने को लेकर आशंकित हैं। किसानों को बताया जा रहा है कि इस कानून में न्यूनतम समर्थन मूल्य का निर्धारण बंद हो जाएगा। किसानों को यह भय है कि यह अधिनियम धीरे धीरे मंडियों को समाप्त कर देगा। यदि वैकल्पित मंचों के माध्यमों से व्यापार पर्याप्त रूप से चलता है तो *एपीएमसी* निष्क्रिय हो सकती हैं तथा इसे बंद करना पड़ सकता है। किसानों का कहना है कि सरकार के नए क़ानूनों में साफ लिखा है कि मंडी के अंदर फसल आने पर मंडी शुल्क लगेगा तथा मंडी के बाहर अनाज बिकने पर बाजार शुल्क नहीं लगेगा। ऐसे में मंडियाँ धीरे–धीरे समाप्त हो जाएंगी। कोई मंडी से माल क्यों खरीदेगा? किसानों को भय है कि मंडियाँ *बीएसएनएल* तथा *एमटीएनएल* की तरह निरर्थक हो जाएंगी। किसान इस कानून को 'एक राष्ट्र दो बाजार' की तरह मानते हैं।
- कई किसानों एवं व्यापारियों का मानना है कि जब किसानों के उत्पाद की खरीद मंडी में नहीं होगी और मंडी के बाहर न्यूनतम समर्थन मूल्य की गारंटी नहीं दी जा सकेगी। तो सरकार यह सुनिश्चित एवं नियमित नहीं कर पाएगीं कि किसानों को न्यूनतम समर्थन मूल्य मिल रहा है अथवा नहीं। किसानों को यह भी डर है कि बड़े खुदरा व्यापारी एवं *कार्पोरेट* घरानों (बहुराष्ट्रीय कंपनियों) का गठजोड़ भारतीय कृषि पर धन व बल से हावी हो सकता है। निजी कंपनियों को बढ़ावा मिलेगा जिससे ये कंपनियां वस्तुओं की कीमतें निर्धारित कर सकती हैं।
- संभावना है कि लघु एवं सीमांत किसानों को उनकी फसल का उचित मूल्य नहीं मिलेगा। लघु किसानों एवं व्यापारियों की भी आय कम हो जाने की संभावना है। किसानों का मत है कि उनकी उपज के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य प्राप्त करने एवं *एपीएमसी* की खामियों को सही करने के बजाय मंडी तंत्रों को निरर्थक बनाया रहा है। व्यापारी एवं किसान इस अधिनियम को लाने में किसी ऊपरी हाथ शामिल होने की बात भी करते हैं।

सत्यता

सरकार एवं किसानों के मध्य समझौते के लिए हुई बातचीत में सरकार ने किसानों को स्पष्ट किया है कि मंडियों की व्यवस्था समाप्त नहीं की जाएगी। इस कानून के लागू होने से न तो मंडियाँ ही समाप्त होंगी, न ही न्यूनतम समर्थन मूल्य समाप्त होगा तथा न ही सरकारी खरीद को बंद किया जाएगा। मंडी व्यवस्था पहली जैसी ही चलती रहेंगी। मंडी व्यवस्था में केवल यह फर्क पड़ेगा कि किसानों को आढ़तियों एवं बिचौलियों से मुक्ति मिल सकेगी। नए कानून के अंतर्गत गरीबी रेखा से नीचे जीवन–यापन कर रहे लोगों को रियायती मूल्यों पर गेहूँ एवं चावल उपलब्ध कराया जाता रहेगा। *एपीएमसी* अधिनियम में अभी यह होता है कि किसी भी मंडी में सभी आढ़तिए एवं बिचौलिए प्रत्येक दिन सुबह–सुबह आपस में बैठकर इस बात का निर्णय लेते थे कि अमुक फसल आज इस मूल्य पर खरीदनी है। उससे अधिक मूल्य वे देते ही नहीं थे। अब किसानों के पास आज़ादी होगी कि यदि एक मंडी में उनको उनके कृषि उत्पाद का उचित मूल्य नहीं प्राप्त हो रहा है तो वह अपने उत्पाद को किसी अन्य मंडी में ले जाने को स्वतंत्र होंगे। पहले दूसरे शहर व दूसरे राज्य में कृषि उत्पाद ले जाने वाले ट्रकों को पुलिस रोककर पुलिस द्वारा अवैध उगाही करने के भी कई मामले सामने आए हैं। अब इस कानून बन जाने पर किसानों का भी किसी प्रकार का उत्पीड़न नहीं हो सकेगा तथा वह अधिक मूल्य वाली मंडी में अपने उत्पाद बेचकर अधिक

मूल्य प्राप्त कर सकेंगे। यह विधेयक *ऑनलाइन* विपणन की भी सुविधा प्रदान करता है। किसान संगठनों का मानना है कि किसान आज भी मंडी के अतिरिक्त किसी अन्य विकल्प पर भरोसा नहीं करते हैं, सत्यता से परे है। मंडियों में *ऑनलाइन* व्यापार भी लोकप्रिय हो रहा है। उत्तर प्रदेश राज्य कृषि उत्पादन मंडी परिषद के अनुसार प्रदेश की 100 मंडी समितियाँ केंद्र सरकार की महत्वाकांक्षी *ई– नाम* योजना से जुड़ी हैं तथा लाखों क्विंटल से अधिक कृषि उत्पादों का व्यापार प्रति वर्ष *ई–नाम* के माध्यम से किया जा रहा है।

क़ानूनों के अंतर्गत किसानों को अपने उत्पाद किसी भी स्थान पर किसी भी व्यक्ति अथवा संस्था को बेचने की सुविधा मिल गई है जिससे किसानों पर मंडियों, बिचौलियों, कृषि उत्पाद विपणन समिति की मार न पड़े तथा वे अपने कृषि उत्पाद को उचित मूल्य पर बेच सकें। इस कानून के अंतर्गत किसान सीधे *फैक्ट्री,* भंडार गृहों तथा शीत गृहों को *एपीएमसी* अधिनियम के अंतर्गत लागू विपणन शुल्क तथा अन्य शुल्कों के खर्च किए बिना बेच सकेंगें। इस अधिनियम के अंतर्गत यह भी प्रावधान किया गया है कि किसानों को उनके कृषि उत्पाद बेचने वाले दिन ही अथवा अधिकतम तीन दिनों के भीतर भुगतान अवश्य करना होगा।

पैन कार्ड रखने वाला कोई भी व्यक्ति राज्य कृषि उत्पाद विपणन समितियों *(एपीएमसी)* द्वारा अधिसूचित या संचालित बाजारों के बाहर 'व्यापार क्षेत्र' में किसानों की उपज खरीद सकता है। खरीदारों को 'व्यापार क्षेत्र' में ऐसी खरीदारी के लिए लाइसेंस लेने या उन्हें कोई कर देने की आवश्यकता नहीं है। *एपीएमसी* को भी इस कानून से कोई खतरा नहीं हैं क्योंकि किसानों के पास अपने कृषि उत्पादों को उचित मूल्य पर बेचने का पारंपरिक तरीका भी उपलब्ध रहेगा। चावल और गेहूँ के अतिरिक्त अन्य फसलों को भी न्यूनतम समर्थन मूल्यो के अंतर्गत बढ़ावा दिया जा सकेगा। इस अधिनियम के माध्यम से भारत सरकार "एक देश – एक बाजार" की संकल्पना को साकार करना चाहती है जिससे किसान को जहां अधिक मूल्य प्राप्त होगा वहाँ अपने उत्पाद को बेच सकेंगे।

विगत 12 वर्षों से अब तक रबी फसलों के न्यूनतम समर्थन मूल्यों की घोषणा सितंबर के बाद होती आ रही थी। लेकिन वर्ष 2020 एवं 2021 में केंद्र ने सितंबर में ही इसकी घोषणा कर स्पष्ट कर दिया है कि सरकार न्यूनतम समर्थन मूल्य की नीति समाप्त नहीं कर रही है। कृषि अधिनियम लागू होने के उपरांत मंडियाँ समाप्त होने का हल्ला मचाकर किसानों को बरगलाने वालों को तथ्यों पर भी नजर डालनी चाहिए कि कोरोना जैसी महामारी के दौरान भी मंडियाँ गुलजार रहीं। उत्तर प्रदेश में न्यूनतम समर्थन मूल्य पर किसानों का धान सीधे खरीदने के लिए मंडी परिषद द्वारा 492 क्रय केंद्र स्थापित कराए गए हैं। मंडी परिसरों में किसानों व व्यापारियों की आवाजाही भी भरपूर रही है। आवंटित पर्चियों के आंकड़ों के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि किसानों का मंडियों पर भरोसा बरकरार है। मंडियों के प्रति किसानों व व्यापारियों का आकर्षण बनाए रखने के लिए सरकार ने मंडी शुल्क में एक प्रतिशत की कमी की घोषणा भी की है। सब्जियों एवं फल उत्पादक कृषकों के लिए मंडी शुल्क समाप्त कर दिया गया है। तालिका 2 से यह भी स्पष्ट है कि सरकार द्वारा खाद्यान्नों (विशेषकर गेहूँ तथा चावल) की खरीद इन क़ानूनों के लागू होने के बाद भी बढ़ी है, कम नहीं हुई है। पंजाब और हरियाणा में वर्ष 2019–20 में गेहूँ के कुल उत्पादन का क्रमशः 71% व 62% और चावल के कुल उत्पादन का क्रमशः 99.5 व 99% तक सरकार द्वारा खरीदारी की गई है (तालिका 3)। न्यूनतम समर्थन मूल्य होने से इन राज्यों में इन फसलों के घटिया उत्पादन या किसी भी गुणवत्ता के उत्पादन की बिक्री पर मानो गारंटी मिली हुई थी जो अब नए कानूनों से प्रभावित होगी।

तालिका 1. मुख्य राज्यवार खाद्यान्न अधिप्राप्ति (लाख टन में)

वर्ष	हरियाणा	पंजाब	उत्तर प्रदेश	भारत
धान				
2019–20	43.03	108.76	37.90	519.9
2018–19	39.42	113.30	32.33	444.0
गेहूत्र				
2020–21	74.00	127.14	35.77	389.3
2019–20	73.90	127.10	35.30	341.3
2018–19	93.20	129.10	37.00	357०9

तालिका 2: पंजाब एवं हरियाणा में अनाज के कुल उत्पादन में उसकी अधिप्राप्ति का अंश

वर्ष	हरियाणा	पंजाब	उत्तर प्रदेश
धान			
2019–20	99.54	90.63	23.64
2018–19	87.29	88.36	20.80
गेहूत्र			
2019–20	61.85	71.00	10.98
2018–19	74.12	70.69	11.30

खाद्यान्नों की खरीद मुख्य रूप से कुछ राज्यों में, कुछ फसलों के लिए और कुछ किसानों के लिए केंद्रित थी। देश में 46% गेहूं का उत्पादन करने वाले तीन राज्यों (मध्य प्रदेश, पंजाब और हरियाणा) ने 2019–20 में इसकी 85% खरीद की है। धान के लिए, 40 प्रतिशत उत्पादन वाले छह राज्यों (पंजाब, तेलंगाना, आंध्र प्रदेश, छत्तीसगढ़, ओडिशा और हरियाणा) की खरीद में 74% हिस्सेदारी है। इस बारे में यह भी उल्लेखनीय है कि अभी भी न्यूनतम समर्थन मूल्य योजना का लाभ गेहूँ व चावल उत्पादन करने वाले मात्र 6 प्रतिशत किसानों को ही मिल पा रहा है जिसका वार्षिक मूल्य ₹ 203 लाख करोड़ है। नीति आयोग की एक रिपोर्ट (वर्ष 2016) के अनुसार पंजाब एवं हरियाणा के किसान रबी की फसल का 42 प्रतिशत एवं खरीफ की फसल का 25 प्रतिशत ही मंडियों में बेचते हैं, जबकि बाकी फसल मंडी के बाहर बेचते हैं।

भारत में केवल 23 फसलों का ही न्यूनतम समर्थन मूल्य

निर्धारित करके घोषित किया जाता है जिसमें केवल गन्ना ही अकेला ऐसा उत्पाद है जिसके कुल उत्पादन पर न्यूनतम समर्थन मूल्य की गारंटी है। इसके बावजूद किसानों का करोड़ों रुपया चीनी मिलों पर बकाया है। दूसरी ओर अंतर्राष्ट्रीय बाजार में चीनी का मूल्य अधिक होने के कारण भारतीय चीनी को बाजार नहीं मिल पा रहा है। निर्यात के लिए सरकार को अनुदान भी देना पड़ रहा है। इसके विरुद्ध विश्व के 11 गन्ना उत्पादक राष्ट्रों ने विश्व व्यापार संगठन से भारत की शिकायत करके अनुदान रोकने की मांग उठाई है। गेहूँ एवं धान जैसी फसलों का न्यूनतम समर्थन मूल्य बढ़ाए जाने पर भी प्रमुख गेहूँ एवं धान उत्पादक देशों की अपील पर विश्व व्यापार संगठन दो वर्ष पूर्व भी भारत को गंभीर चेतावनी दे चुका है। न्यूनतम समर्थन मूल्यों वाली फसलों की कुल कीमत ₹ 9.25 लाख करोड़ आँकी गई है जिसे सरकार खरीद नहीं सकती। इसी प्रकार बागवानी क्षेत्र में उत्पादन बढ़ने के कारण इसकी खपत के लिए निर्यात ही सबसे उत्तम विकल्प है। न्यूनतम समर्थन मूल्य की बढ़ोत्तरी को अंतर्राष्ट्रीय बाजार मूल्यों के अनुरूप ही सुनिश्चित किया जाना चाहिए। तभी घरेलू कृषि उत्पाद की वैश्विक स्तर पर प्रतिस्पर्धात्मक खेती सुनिश्चित हो सकती है।

खाद्य पदार्थों में व्यापार और वाणिज्य, समवर्ती सूची का हिस्सा है। इस प्रकार ये केंद्र सरकार को संवैधानिक स्वामित्व प्रदान करते हैं। अतः यह सहकारी संघवाद की भावना के विरुद्ध अतिक्रमण नहीं है। इस कानून से कुछ राज्य सरकारों की हजारों करोड़ रुपए की आय अवश्य समाप्त हो जाएगी जो वर्तमान में 6 से 8 प्रतिशत की दर से मंडी कर एवं अन्य उपकर आदि से प्राप्त होती थी। वर्तमान में पंजाब की 1800 से अधिक मंडियों में लगभग 6.5% मंडी शुल्क और 2.5% आढ़तियाँ शुल्क वसूला जाता है जिससे लगभग 5,000 करोड़ रुपए की वसूली की जाती है। *जीएसटी* लागू होने से पूर्व पंजाब में यह दर 14 प्रतिशत थी और हरियाणा में 11.5% थी। इस प्रकार जो राजस्व में कमी होगी उसको आर्थिक क्षति नहीं माना जा सकता। क्योंकि मंडी कर *एपीएमसी* में पूंजीवाद को बढ़ावा देता है और किसानों के लिए एक प्रकार का कर है जो उनकी आय को कम करता है। नए अधिनियमों से यह राशि किसानों एवं उपभोक्ताओं के पास पहुंचेगी। कई बड़े किसान आढ़तिया भी हैं जो अपना *कमीशन* और ब्याज की आय खो देंगे। लेकिन विडंबना यह है कि लघु एवं सीमांत किसानों के लिए अच्छी व्यवस्था का बड़े किसान समर्थन नहीं करते हैं। मंडियों का यह अर्थशास्त्र भी इस आंदोलन में अप्रत्यक्ष रूप से अपनी भूमिका निभा रहा है। राज्य सरकारें जो भी मंडी शुल्क या उपकार तय करती है, उसे अंततः भरते किसान ही हैं। जब सरकार को गेहूँ या धान खरीदना हो तो पहले किसानों से उन उत्पादों को आढ़तिये खरीदते थे और फिर उनसे सरकारी संस्था भारतीय खाद्य निगम खरीदता है। आढ़तियों का किसी–किसी राज्य में मकड़जाल है जैसे पंजाब में लगभग 48,000 आढ़तिए पंजीकृत हैं।

2. कृषक (सशक्तिकरण और संरक्षण) मूल्य आश्वासन और सेवा का करार अधिनियम (2020)

किसानों का भ्रमः किसानों को इस प्रकार भी भड़काया जा रहा है कि इस कानून के बन जाने पर बड़ी कंपनियाँ किसानों का शोषण करेंगी। किसान संगठनों का कहना है कि इस कानून से किसान अपने ही खेत में मजदूर बन कर रह जाएंगें। उनके कथनानुसार केंद्र सरकार पश्चिम देशों के खेती का *मॉडल* किसानों पर थोपना चाहती है। *कांट्रैक्ट* खेती में कंपनियां किसानों का शोषण करती हैं। उनके उत्पाद को खराब बताकर अमान्य कर देती हैं। दूसरी ओर व्यापारियों को डर है कि जब बड़े *मार्केट लीडर* कृषि उपज को खेतों से ही खरीद लेंगे तो आढ़तियों को कौन पूछेगा? मंडी में कौन जाएगा? यह भी आशंका उठाई जा रही है कि इस विधेयक के कानून बनने से किसानों की जमीन पूँजीपतियों को चली जाएंगी। इस बात का भ्रम फैलाया जा रहा है कि इस अधिनियम से बड़े *कार्पोरेट* को लाभ होगा जबकि किसानों का नुकसान होगा।

सत्यः

इस कानून से खेती का जोखिम कम होगा और किसानों की आय में सुधार होगा। किसानों को समानता के आधार पर प्रसंस्करणकर्ताओं, थोक विक्रेताओं, बड़े खुदरा कारोबारियों, निर्यातकों आदि के साथ जुड़ने एवं सक्षम होने का मौका मिलेगा। किसानों की आधुनिक तकनीक एवं बेहतर कृषि निवेशों तक पहुँच सुनिश्चित होगी। इसका अर्थ यह है कि इसके अंतर्गत *कांट्रैक्ट* खेती को बढ़ावा दिया जाएगा। जिसमें बड़ी– बड़ी कंपनियां किसी विशेष उत्पाद के लिए किसान से अनुबंध करेंगी। इससे अच्छा मूल्य मिलना पहले से ही तय हो जाएगा। इस अधिनियम के अंतर्गत किसानों एवं बड़ी कंपनियों के बीच में एक अनुबंध (करार) होगा जिससे किसानों को निर्धारित मूल्य पाने की *गारंटी* मिल सकेगी। इस अधिनियम में इस बात का भी विशेष प्रावधान किया गया है कि किसानों को किसी भी करार में बांधा नहीं जा सकेगा। किसान कभी भी करार से बाहर निकलने को स्वतंत्र होगा। करार से बाहर निकलने के लिए उस पर किसी भी प्रकार का जुर्माना नहीं लगाया जाएगा।

कानून बनने से किसानों की जमीन पूँजीपतियों को चली जाएगी। यह आशंका भी निर्मूल है। इस अधिनियम के अंतर्गत किसी भी *कार्पोरेट* द्वारा किसी भी किसान की जमीन ले सकना असंभव है क्योंकि उसका अनुबंध किसान द्वारा उत्पादित कृषि उत्पाद के बारे में होता हैं, न कि जमीन के बारे में। इस अधिनियम में यह स्पष्ट निर्देशित हैं कि किसानों की जमीन की बिक्री, *लीज* एवं गिरवी रखना पूरी तरह से प्रतिबंधित है। बड़ी कंपनियों एवं किसानों के मध्य करार केवल उनके कृषि उत्पाद का होगा, न कि जमीन का। इन क़ानूनों के अनुसार जमीन का मालिक तो किसान ही रहेगा परंतु खेती के तौर तरीके तथा तकनीक बाजार की मांग के अनुरूप कम्पनी उपलब्ध कराएगी। इस कानून के प्रावधानों के अनुसार कोई भी *कार्पोरेट* अथवा व्यापारी किसान की जमीन पर किसी भी प्रकार का अवसंरचनात्मक निर्माण नहीं कर सकता। किसान व खरीदार के मध्य विवाद होने पर उनके समाधान के लिए भी स्पष्ट उल्लेख किए गए हैं।

यह बात भी बिलकुल असत्य है कि अधिनियम से बड़े *कार्पोरेट* का लाभ होगा जबकि किसानों का नुकसान होगा। आज भी भारत के कई राज्यों में किसान सफलतापूर्वक बड़े *कार्पोरेटस* के साथ गन्ना, कपास, चाय व कॉफी जैसे उत्पाद उत्पादित कर रहे हैं। बड़े *कार्पोरेटस* के साथ करार करने से

किसानों द्वारा फसल बेचने पर उनको अपनी फसल का उचित मूल्य प्राप्त होता है। बीज उत्पादन तथा गन्ने की खेती वर्षों से अनुबंध खेती के अंतर्गत ही की जा रही है। भारत में 60 प्रतिशत से अधिक *बॉयलर* मुर्गे का उत्पादन अनुबंध खेती के अंतर्गत ही किया जाता है तथा *डेयरी मॉडल* भी अनुबंध खेती पर ही आधारित है। पंजाब में ही वर्ष 2012 से *इथेनॉल* से चीनी बनाने के लिए चुकंदर की वाणिज्यिक खेती को अनुबंध के आधार पर ही संभव बनाया जा सका है जो अन्य स्थानों पर संभव नहीं हो सका है। ठेके पर खेती कई प्रकार के अवसर तथा मूल्य से आश्वासन प्रदान करती है। अगर किसानों को लाभ ही न होता तो अनुबंध पर आधारित खेती कैसे संभव हो पाती? इस अधिनियम के पास होने से छोटे किसानों को भी लाभ होगा। उनको मुनाफे की *गारंटी* के साथ प्रौद्योगिकी एवं उपकरणों का लाभ मिलेगा। किसानों के खेत से कृषि उत्पादन की बिक्री से उपभोक्ताओं तक पहुँचने में कम समय लगेगा, कृषि उत्पादों को मंडी तक ले जाने का किसानों का खर्चा बचेगा तथा कृषि उत्पाद की गुणवत्ता भी प्रभावित नहीं होगी। इसके अतिरिक्त कृषकों एवं प्रायोजकों के मध्य कृषि उत्पादों की खरीद एवं कटाई पूर्व प्रक्षेत्र सेवाओं के लिए अनुबंध का प्रावधान भी किया गया है जिसमें किसानों को अपने कृषि उत्पादों को अविलंब सुगमता से बेचने में भी सहायता मिलेगी। अनुबंध में खरीदने वाले मूल्य को भी उल्लिखित करने का स्पष्ट प्रावधान किया गया है। इसके अतिरिक्त सरकार द्वारा आदर्श कृषि के लिए दिशा–निर्देश भी प्रदान किए जाएंगें।

क्रय केन्द्रों पर *इंस्पेक्टर* राज, नियमों के मकड़जाल तथा लंबी प्रतीक्षा जैसी जटिल समस्याओं से अब किसानों को हमेशा के लिए मुक्ति मिल जाएगी तथा अब यह समस्याएँ इतिहास के पन्नों तक ही सीमित हो जाएंगी। इन क़ानूनों के प्रावधान से किसान को फसल काटने के पश्चात क्रय केन्द्रों पर अनाज बेचने एवं मूल्य प्राप्त करने के लिए महीनों की प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ेगी। किसानों के खेतों पर ही व्यापारियों के पहुँचने से किसानों के खेत ही अब बाजार के रूप में परिवर्तित हो जाएंगे। कृषि सुधार के नए क़ानूनों से किसान के खेत अब अन्न भंडार तथा खाद्य प्रसंस्करण के *हब* के रूप में विकसित हो सकेंगे। व्यापारी अब किसानों के खेतों पर दमनकारी शोषक के रूप में हीं, अपितु एक क्रेता की हार के रूप में आएगा।

3. आवश्यक वस्तुएं (संशोधन) विधेयक (2020)

किसानों का भ्रम:

इस विधेयक के विरोध में कुछ किसान संगठनों का कहना है कि इस अधिनियम में संशोधन बड़ी कंपनियों एवं बड़े व्यापारियों के हित में किया गया है। ये कंपनियाँ एवं *सुपर मार्केट* सस्ते मूल्य पर उपज खरीदकर अपने बड़े गोदामों में उसका भंडारण करेंगे तथा बाद में ऊंचे मूल्यों पर ग्राहकों को बेचेंगे। किसान संगठनों का यह भी कहना है कि कालाबाजारी रोकने के लिए ही आवश्यक वस्तुएँ अधिनियम बनाया गया था जिसके अंतर्गत व्यापारियों द्वारा कृषि उत्पादों के एक सीमा से अधिक भंडारण पर रोक थी। लेकिन अब इसमें संशोधन करके सरकार ने उन्हें कालाबाजारी करने की खुली छूट दे दी है। यदि अनाज, दाल, तिलहन, खाद्य तेल, आलू, प्याज आदि को आवश्यक वस्तुओं की सूची से हटाया जाएगा तो इन खाद्य वस्तुओं के उत्पादन, भंडारण, संचालन एवं वितरण के विनिमयन को निष्क्रिय कर देगा। ऐसा होने से बड़ी कंपनियों को इन कृषि उत्पादों के भंडारण की छूट मिल जाएगी। व्यापारी जमाखोरी करके आवश्यक वस्तुओं के मूल्य बढ़ा सकेंगे। किसान संगठनों को ड़र है कि बड़ी कंपनियाँ किसानों पर अपनी मर्जी चला सकेंगी। युद्ध, अकाल में असाधारण मूल्य वृद्धि और प्राकृतिक आपदा के दौरान आपूर्ति के विनिमयन आपूर्ति की अनुमति आवश्यक होगी। जबकि ऐसे समय में निर्यातकों तथा प्रसंस्करणकर्ताओं के लिए इन संशोधनों में छूट प्रदान की गई है। यह खाद्य सुरक्षा को कमजोर कर सकता है क्योंकि राज्यों को राज्य के भीतर *स्टॉक* की उपलब्धता के बारे में कोई जानकारी नहीं होगी।

इस अधिनियम में कुछ अस्पष्टता भी पायी गई है जो इस प्रकार हैं। इस अधिनियम में युद्ध तथा अकाल को छोडकर "असाधारण परिस्थितियां", "असाधारण मूल्य वृद्धि" तथा "प्राकृतिक गंभीर आपदा" आदि व्यक्तिगत शब्दों का उल्लेख किया गया है जिनके विभिन्न लोगों द्वारा भिन्न–भिन्न अर्थ लगाए जा सकते हैं। इसके अतिरिक्त एक प्राकृतिक आपदा का किसानों को तब तक पता नहीं लग पाता है कि ऐसी कोई आपदा हो गई है जब तक सरकार उनको सीधे सूचित नहीं करती। दूसरी तरफ, मूल्य वृद्धि को उप धारा 3(1ए)(बी) में परिभाषित किया गया है परंतु इसको भी विभिन्न लोगों द्वारा अलग–अलग अर्थ समझने से भी समस्या उत्पन्न हो सकती है। "में कर सकते हैं" जैसे शब्दों के प्रयोग से इन कानूनी संशोधनों में अस्पष्टता प्रतीत होती है। इसके अतिरिक्त, बागवानी उत्पाद तथा शीघ्र खराब होने वाले खाद्य पदार्थों के बारे में भी अलग–अलग अर्थ समझा जा सकता है। हर राज्य का इन उत्पादनों के लिए स्थानीय परिस्थितियों के कारण अलग–अलग दृष्टिकोण है। संशोधित अधिनियमों में कृषि खाद्य पदार्थों के खुदरा मूल्य स्तर में 50 या 100 प्रतिशत की वृद्धि होने की सीमा अत्यंत बड़ी है। इस सीमा से कहीं कम अधिक कम मूल्य वृद्धि भी काफी खराब स्थिति होगी। इसके अतिरिक्त, किसी भी कृषि उत्पाद के प्रसंस्करण की मूल्य श्रृंखला के भागीदार की *स्टॉक* सीमा यदि कुल प्रसंस्करण क्षमता या उस उत्पाद के निर्यातक के लिए निर्यात की मांग से कम होगी तो उस पर *स्टॉक* सीमा लागू नहीं होगी। इस प्रावधान से भी समस्या उत्पन्न होने की संभावना है। सही स्थिति जानने तथा उनका सत्यापन करने के लिए सरकार के पास कोई तंत्र नहीं है जिससे यह मूल्य श्रृंखला के विभिन्न भागीदार नियमों के अनुसार अपनी सीमा के भीतर ही *स्टॉक* रखें।

सत्यता

आवश्यक वस्तुएं अधिनियम में संशोधन से पूर्व भी व्यापारी किसानों से उनकी उपज को औने–पौने मूल्यों पर खरीदकर पहले उसका भंडारण कर लेते थे तथा बाद में उसकी कमी बताकर कालाबाजारी करते थे। जो कार्य व्यापारी स्वयं करते थे, वे ही अब कंपनियों द्वारा ऐसा ही करने के बारे में बता रहे हैं। कालाबाजारी अगर होगी तो मूल्य में वृद्धि होगी और ऐसी स्थिति में सरकार के पास भंडारण सीमा परिवर्तित करने के अधिकार हैं।

देश में अधिकतर कृषि उत्पाद आधिक्य हैं। इसके बावजूद

शीत–गृहों एवं प्रसंस्करण के अभाव में किसान अपनी उपज का उचित मूल्य पाने में असमर्थ रहे हैं क्योंकि आवश्यक वस्तु अधिनियम की तलवार लटकती रहती थी। ऐसे में जब भी शीघ्र खराब हो जाने वाली कृषि उपज की *बम्पर* पैदावार होती है तो किसानों को भरी नुकसान उठाना पड़ता था। अतः आवश्यक वस्तु अधिनियम में संशोधन करके अनाज, खाद्य तेल, तिलहन, दलहन, प्याज एवं आलू आदि को भी इस अधिनियम से बाहर कर दिया गया है। इसके साथ ही व्यापारियों द्वारा इन कृषि उत्पादों की एक सीमा से अधिक भंडारण पर रोक हट गई है।

जब सरकार को आवश्यकता अनुभव होगी तो वह फिर से पुरानी व्यवस्था लागू कर देगी। इस कानून में यह प्रावधान रखा गया है कि खराब न होने वाले कृषि खाद्य पदार्थों के खुदरा मूल्य में 50% की वृद्धि होने तथा बागवानी उत्पादों (फल एवं सब्जियाँ) जैसी खराब होने वाली कृषि खाद्य पदार्थों के खुदरा मूल्यों के आधार मूल्यों के आधार मूल्य में से 50 से 100% की वृद्धि होने प सरकार भंडारण सीमा में परिवर्तन कर सकती है। आधार मूल्यों में यह वृद्धि *बेंचमार्क* गत 12 महीनों के औसत फुटकर मूल्यों अथवा गत पाँच वर्षों के औसत फुटकर मूल्यों में जो कम हो, उसके आधार पर गणना की जाएगी। इस कानून से आशा है कि इससे कृषि विपणन अवसंरचना में निवेश बढ़ेगा तथा कृषि उत्पादों में होने वाले उतार–चढाव में कमी आएगी।

निष्कर्ष एवं सुझावः

बहुत सारे लोग कृषि अर्थव्यवस्था की बारीकियों को बिना जाने इन कृषि क़ानूनों का विरोध कर रहे हैं। यहाँ यह समझना आवश्यक है कि विगत में सरकार की न्यूनतम समर्थन मूल्य योजना सहित तमाम कृषि कार्यक्रमों के लागू होने के बावजूद भी किसानों की स्थिति दयनीय बनी हुई है। पंजाब विश्वविद्यालय के एक अध्ययन के अनुसार एक से दो हेक्टेयर अथवा एक हेक्टेयर से कम भूमि वाले छोटे किसान ही ऋण की मार को अधिक झेलते हैं। आज भी ये कृषक आधे से अधिक ऋण गैर बैंकिंग स्त्रोत से ही प्राप्त करते हैं जिनकी ब्याज दर बहुत अधिक होती है। यही कारण है कि आत्महत्या करने वाले 72 प्रतिशत कृषक लघु एवं सीमांत हैं। इसी प्रकार यदि लागत की बात की जाए तो भी इसका जोखिम भी छोटे किसानों पर ही अधिक होता है। भू–जोत का आकार कम होने से कृषि की लागत बढ़ती जा रही है तो दूसरी ओर जल की उपलब्धता, मृदा का टिकाऊपन एवं कीटनाशक प्रबंधन जैसे कारक लागतों को अत्यधिक बढ़ा देते हैं। इन किसानों के लिए कृषि निवेश की उचित व्यवस्था करने में भी मदद करेंगे।

न्यूनतम समर्थन मूल्यों की गारंटी का राग आलाप रहे किसान संघों तथा राजनीतिक दलों को शायद इसके परिणाम का भान नहीं है। संपूर्ण विश्व में कहीं भी इसकी गारंटी नहीं है कि न्यूनतम समर्थन मूल्यों से कम मूल्य पर कुछ नहीं बिकेगा। यदि ऐसा होता है तो घरेलू *जिंस* बाज़ार का स्वाभाविक ताना–बाना ही बिगड़ने के खतरे के साथ–साथ आयात एवं निर्यात का संतुलन भी बिगड़ने लगेगा तथा संपूर्ण विश्व में अलग–थलग पड़ने की भी संभावना हैं। जिसके परिणामस्वरूप इसका प्रभाव घरेलू बाजार में घरेलू उत्पादकों पर भी पड़ेगा जिसका खामियाजा अंततः कृषकों को ही उठाना पड़ेगा। शोध अध्ययनों से ज्ञात हो चुका है कि न्यूनतम समर्थन मूल्यों में 10 प्रतिशत की वृद्धि सकल घरेलू उत्पाद में 0.33 प्रतिशत तथा निवेश में 1.9 प्रतिशत की कमी कर देती है तथा समेकित मूल्य सूचकांक में 1.5 प्रतिशत की वृद्धि कर देती है। इस प्रकार सरकार द्वारा न्यूनतम समर्थन मूल्यों को कानूनी ढांचा प्रदान करना कई आर्थिक प्रभाव डालेगा जिससे कृषि उत्पाद वैश्विक प्रतियोगिता से बाहर हो जाएंगे।

एमएसपी ने फसल *पैटर्न* को भी प्रभावित किया है। आर्थिक सर्वेक्षण 2019–20 में पाया गया है कि *एमएसपी* में नियमित वृद्धि को किसानों द्वारा एक सुनिश्चित खरीद प्रणाली वाली फसलों को चुनने के संकेत के रूप में देखा जाता है। यह इंगित करता है कि बाजार मूल्य किसानों के लिए लाभकारी विकल्प प्रदान नहीं करते हैं व *एमएसपी* वास्तव में अधिकतम मूल्य बन गया है जिसे किसान प्राप्त करने में सक्षम हैं। इस प्रकार, *एमएसपी* किसानों को सरकार द्वारा खरीदी गई फसलों को उगाने के लिए प्रोत्साहित करता है। चूंकि गेहूँ और चावल सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अंतर्गत प्रदान किए जाने वाले प्रमुख खाद्यान्न हैं, इसलिए खरीद का ध्यान इन फसलों पर है। इसके अलावा, यह जल स्तर पर दबाव डालता है क्योंकि ये फसलें जल प्रधान फसलें हैं। हालांकि, राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम, 2013 के तहत केंद्र और राज्य सरकारों को *पीडीएस* में उत्तरोत्तर आवश्यक सुधार करने की आवश्यकता है। फसल विविधीकरण को प्रोत्साहित करने और इस तरह पानी की खपत को कम करने के लिए, कुछ राज्य सरकारें किसानों को धान और गेहूं से दूर जाने के लिए प्रोत्साहित करने के उपाय कर रही हैं। उदाहरण के लिए, हरियाणा ने 2020 में उन किसानों को 7,000 रुपये प्रति एकड़ प्रदान करने की योजना शुरू की है जो अन्य फसलों के लिए अपने धान के 50% से अधिक क्षेत्र (2019–20 में बोए गए क्षेत्र के अनुसार) का उपयोग करेंगे। किसान ऐसे विविध क्षेत्र में मक्का, बाजरा, दलहन या कपास उगा सकते हैं। इसके अलावा, योजना के तहत ऐसे विविध क्षेत्र में उगाई जाने वाली फसल की उपज राज्य सरकार द्वारा *एमएसपी* पर खरीदी जाएगी।

भारत में सामान्यतया दो श्रेणी के, बड़े व लघु किसान हैं। 86 प्रतिशत कृषक लघु एवं सीमांत हैं। किसान अपनी सीमित जोत में यदि दो अथवा तीन गुना भी पैदा कर लें तो भी वे एक सम्मानजनक ज़िंदगी नहीं जी सकते। पूर्व व्यवस्था ऐसा करने से रोकती है क्योंकि इसके अंतर्गत किसान उत्पादक उत्पाद के विपणन के संबंध में निश्चिंत नहीं होता है। तीनों कृषि क़ानूनों के आने से उसे एक आश्वासन होगा तथा विपणन एवं मूल्य प्राप्ति हेतु निश्चितता होगी। यह तीनों कानून किसानों के लिए एक वरदान हैं। बड़े किसान जो कुल किसानों का मात्र 14 प्रतिशत ही हैं, वे सीमांत एवं लघु कृषकों को मशीन, औज़ार एवं ऋण प्रदान करते हैं तथा सस्ते दामों पर उनसे फसल खरीद लेते थे। अब लघु एवं सीमांत कृषकों को अनुबंध पत्र के अनुसार सारे निवेश क्रेता या कंपनी द्वारा उपलब्ध कराए जाएंगे तथा फसल का उचित मूल्य प्रदान किया जाएगा। देखा जाए तो ये कानून वर्तमान सरकार के मूलमंत्र "सबका साथ, सबका विकास" को ही दर्शाते हैं जिसके अंतर्गत सीमांत एवं लघु किसानों की

मोल–तोल करने की शक्ति का विकास करना होगा। उनकी बेड़ियाँ टूटने तथा उनके प्राप्त होने वाले कृषि उपज के मूल्यों में एक लंबी छलांग लगाने का समय आ गया है। अतः इसी कारण राजनीतिज्ञों, *सिंडीकेट* बिचौलिए एवं व्यापारियों के बीच अपवित्र गठजोड़ द्वारा तथा इस गढ़जोड़ को समाप्त करने के डर से इन क़ानूनों का विरोध किया जा रहा है।

अध्ययनों ने सिद्ध किया है कि विभिन्न सामाजिक–आर्थिक बाधाओं के कारण, छोटे और सीमांत किसान हमेशा अपनी फसल बेचने की शीघ्रता करते हैं। यही कारण है कि अधिकांश लोग जो जीविका के लिए खेतों पर निर्भर हैं, उन्हें *ईसीए* में छूट से लाभ की उम्मीद नहीं है। भाकृअनुप के 2015 के एक अध्ययन से यह भी संकेत मिलता है कि विभिन्न जिंसों की कटाई के बाद के नुकसान की सीमा अनाज के लिए 4.65–5.99%, दलहनों के लिए 6.36–8.41%, तिलहन के लिए 3.08–9.96%, फलों के लिए 6.7–15.88%, सब्जियों के लिए 4.8–12.44%, दूध के लिए 0.92%, अंडे के लिए 7.19% और मुर्गी के मांस के लिए 6.74% थी। वर्ष 2014 के औसत मूल्यों पर कृषि जिंसों की कुल कटाई के बाद लगभग ₹ 92,651 करोड़ के नुकसान का अनुमान लगाया गया है। नुकसान के आंकड़ों से संकेत मिलता है कि सरकार द्वारा नियंत्रित बाजारों के एकाधिकार, बुनियादी ढांचे के अंतराल और बाजार शुल्क की उच्च दरों का वर्तमान विपणन पर व्यापक प्रभाव पड़ता है। बुनियादी ढांचे के विकास में निवेश करने के लिए निजी क्षेत्र को भी आमंत्रित करना होगा। देश मे भंडार एवं शीत गृहों की व्यवस्था लागू होने में निजी क्षेत्र का भी भरपूर सहयोग मिलेगा।

सरकार द्वारा लागू किए नए कृषि कानूनों का उद्देश्य किसानों को उनकी उपज का उचित एवं लाभकारी मूल्य दिलवाने तथा बिचौलियों द्वारा किसानों के शोषण आदि को समाप्त करके किसानों की आय बढ़ाना है। उपरोक्त तीनों क़ानूनों का उद्देश्य कृषि विपणन में अवसरों तथा विकल्प का विकास, *एपीएमसी* के अंतर्गत कार्य रहे व्यापारियों के साथ बेहतर मूल्य *रिकवरी* तथा मूल्य प्राप्ति, बाजार अवसंरचना में निवेश को आकर्षित (अभी कृषि में किए गए कुल निवेश का 80% से अधिक किसानों द्वारा ही निवेश किया जाता है), कुशलता लाभ, उन्नत आदानों तक पहुँच, अच्छी कृषि तकनीक एवं प्रौद्योगिकी जैसे लाभों से देश भर में खेती कर रहे किसान लाभान्वित होंगें। यद्यपि इससे देशी कंपनियों में असुरक्षा की भावना पैदा हो गई है क्योंकि वे जानती हैं कि बेहतर अवसंरचना के साथ विदेशी कंपनियाँ भारत में आ सकती हैं। इससे राजनीतिज्ञों एवं कुछ व्यापारियों का एकाधिकार समाप्त हो जाएगा। व्यर्थ का भय दिखाने तथा जरूरत से अधिक कानून के जोखिम बताकर और किसानों का आंदोलन बताकर अपने हित साधने का कार्य कर रहे हैं। इन कानूनों का लाभ उठाने के लिए सीमांत एवं लघु किसानों को *एफपीओ* अथवा किसान उत्पादक संगठनों के रूप में संगठित होने से उनको अधिक लाभ होगा। लघु किसानों के लिए बड़ी कंपनियों के साथ अनुबंध करके आर्थिक रूप से सक्षम बने रहने के लिए एक *एफ़पीओ* के रूप में संगठित होना होगा। भारत सरकार ने इस अधिनियम से पूर्व ही राज्य सरकारों को 10,000 किसान उत्पादक संगठनों को बनाने का आह्वान किया था। किसान उत्पादक संगठन बना करके काम करने से एक तो लागत में कमी आएगी दूसरा कृषि उत्पादों के वैश्विक मूल्य प्राप्त हो सकेंगे। किसान उत्पादक संगठनों को संसाधनों के उचित दोहन के लिए वस्तु–वार व क्षेत्र–वार रणनीति बनाने पर शीघ्र क्रियान्वयन करना होगा। सरकार जो नई व्यवस्था लाना चाहती है उसके लिए आकाशवाणी, दूरदर्शन, समाचार पत्रों जैसे विभिन्न प्रसार माध्यमों द्वारा व्यापक प्रचार और प्रसार का कार्य करने की भी आवश्यकता है। इसके साथ जमीनी स्तर पर कृषि के लिए अवसंरचनात्मक विकास, *ई–नाम* के अंतर्गत *टेक एनेबिल्ड* किसान उत्पादक संगठनों का संजाल विकसित करके *टेक स्टार्ट–अप्स, मोबाइल* तथा *डिजिटल* विपणन प्रसार तथा सुविधाओं का विकास करना चाहिए।

कृषि व विपणन के क्षेत्र में कई सुधार पहले भी हुए हैं लेकिन किसानों की स्थिति बद से बदतर होती गई। ये सुधार मूलभूत सुधार हैं और छोटी जोत की खेती के लिए किसी बड़ी कंपनी से जुडने के उपरांत ही उसकी उत्पादकता और आय में आशातीत वृद्धि हो सकेगी।

यदि सभी किसान इन किसान अधिनियमों को अपना लेते हैं तो उन्हें निम्नलिखित लाभ प्राप्त होंगे:

- कृषि क्षेत्र में उपज खरीदने–बेचने के लिए किसानों व व्यापारियों को "अवसर की स्वतंत्रता" होगी तथा लेन–देन की लागत में कमी आएगी।
- मंडियों के अतिरिक्त व्यापार क्षेत्र में फार्म गेट, शीत गृहों, भंडार गृहों, प्रसंस्करण इकाईयों पर व्यापार के लिए अतिरिक्त *चैनलों* का सृजन होगा।
- किसानों के साथ प्रसंस्करणकर्ताओं, निर्यातकों, संगठित *रिटेलर्स* का एकीकरण होगा जिससे मध्यस्तता में कमी आएगी।
- देश में प्रतिस्पर्धी *डिजिटल* व्यापार का माध्यम बढ़ेगा तथा सभी काम पूरी पारदर्शिता से होंगें।
- अंततः किसानों द्वारा लाभकारी मूल्य प्राप्त करना ही उदेश्य है जिससे उनकी आय में वृद्धि हो सके।
- इन कानून को अपनाने से शोध एवं विकास के विभागों से भी समर्थन प्राप्त होगा।
- किसानों को उच्च और आधुनिक तकनीकी कृषि निवेश सुगमता से उपलब्ध हो सकेंगे।
- अन्य स्थानीय संस्थाओं के साथ साझेदारी करने में भी सहायता मिलेगी।
- अनुबंधित किसानों को सभी प्रकार के कृषि उपकरणों की सुविधाजनक आपूर्ति हो सकेगी।
- प्रत्येक व्यक्तिगत अनुबंधित किसान से परिपक्व उपज की खरीद सुनिश्चित हो सकेगी।
- अनुबंधित किसान को नियमित और समय पर भुगतान मिल सकेगा।
- सही *लॉजिस्टिक सिस्टम* और वैश्विक विपणन मानकों का रखरखाव हो सकेगा।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

भारत में गन्ने व शर्करा की ऐतिहासिक गौरव गाथाः आचार्य चाणक्य कृत 'कौटिल्य अर्थशास्त्र' व 'चाणक्य नीति–दर्पण' (321–316 वर्ष ईसा पूर्व)– में गन्ने की खेती व गुड़ और शर्करा

अशोक कुमार श्रीवास्तव

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

कौटिल्य (जिन्हें विष्णुगुप्त या चाणक्य के नाम से भी जाना जाता है)–प्राचीन भारत में गुप्त राजवंश के एक उत्कृष्ट विद्वान थे, जिन्होनें संसाधनों, व्यवसाय और प्रशासन के समग्र रूप से प्रबंधन से संबन्धित 'कौटिल्य अर्थशास्त्र' नामक एक महान ग्रंथ की रचना 321–296 वर्ष ईसा पूर्व की। 'कौटिल्य अर्थशास्त्र' के द्वितीय अधिकरण, 'अध्यक्ष प्रचार' में हमें उस अवधि के दौरान गन्ने की खेती और गुड़ और शर्करा के निर्माण व उपयोग का पर्याप्त उल्लेख मिलता है।

इस ग्रंथ के द्वितीय अधिकरण के अध्याय 6 'समाहर्त्ताका कर संग्रह कार्य' के अनुसार गुड़ आदि बेचने वाले को 'क्षार विक्रयी' कहते थे। गन्ने की फसल को 'मूलावपारू' अर्थात जड़ों या जड़ों के भागों को बोकर उगाई जाने वाली फसल कहा जाता था (लेकिन शायद उस समय गन्ने के नीचे के टुकड़ों या भूमिगत *स्लिप–सेट्स* का प्रयोग करके बोया जाता हो?)। इन फसलों को फल, फूल, सब्जी के बागानों और गीले खेतों के साथ इसे राजस्व संग्रह के लिए 'सेतु' के रूप में वर्गीकृत किया गया था (2.6.5)।

इसी अधिकरण के अध्याय 24 "सीताध्यक्ष" (या कृषि अधीक्षक)–में गन्ने के बारे में उल्लेख है कि खेती के लिए चावल सबसे अच्छी फसल है और गन्ना सबसे खराब ('इक्षुः प्रत्यवरः' 2. 24.29)। पुनः उल्लिखित है कि 'इक्षवो हि बहवाबाधाव्ययग्राहिणश्च' (2.24.30), अर्थात इस फसल की बढ़वार के लिए अधिक देखभाल, द्रव्य निवेश (सिंचाई, खाद और कटाई, पेराई) की आवश्यकता होती है और यह विभिन्न व्याधियों (जैसे कीट और रोगों का आपतन, चूहे लगना, चोरी, आदि से प्रभावित होती है)। गन्ने की खेती उन भूमियों में की जाती है जो नदी के पानी द्वारा (यानी बाढ़ या भराव) से प्रभावित (परीवाहंता) होती हैं (2.24.31)। गन्ने के बीज के लिए 'काण्डबीजानां' (अर्थात तने के टुकड़े के रूप में बोये जाने वाले) शब्द का प्रयोग किया गया है। रोपण के लिए, गन्ने के बीज को (*सेट्स* के?) कटे हुए सिरे पर शहद, घी, सुअर की चर्बी और गाय के गोबर के मिश्रण को पोत देते हैं (2.24.33)।

इसी अधिकरण के अध्याय 15, श्कोष्ठागाराध्यक्ष' इंगित करता है कि गन्ने के रस से सिरका व आसव, गुड़, शर्करा/दानेदार शर्करा का निर्माण करने वाले (तथा साथ ही अनाज और तिलहनों का प्रसंस्करण जैसे पौंडिंग (चावल, आदि), छड़ने (मूँग, उड़द, आदि दालों को दरकर छिलका निकालना), भड़भूजा (मकई और फलियों के दानों को भूनना), पेय पदार्थ (सूक्तकर्मा), चक्की से आटा व सत्तू पीसना, तेल निकालने वाले) कामगारों से लिए जाने वाले राजदेय अंश (कर) को 'सिंहनिका' कहा जाता था (2.15.8)। गन्ने के रस से प्राप्त उत्पादों जैसे फणिता (राब), गुड़, मत्स्यण्डिका (राब व खाँड़ के बीच का विकार), खाँड़ तथा शर्करा को (सामूहिक रूप से) 'क्षार' कहा जाता था (2.15.15)। गुड़, राब आदि के भंडारण के निमित्त निर्देश है कि 'मूता क्षारस्य संहतारू (श्लोकांश 2.15.84), अर्थात इसके भंडारण के लिए ऐसा स्थान हो जहां सीलन न पहुंच सके तथा इन्हें चारों ओर से घने घास–फूस आदि लगाकर रखना चाहिए।

गुड़ का उपयोग अम्लीय सूक्त (सिरका) अनेकों जड़ी–बूटियों और मसालों, इत्र आदि के साथ मिलाकर बनाने में किया जाता था और यह एक–एक साल तक चलता था। शहद और अंगूर के रस से भी ऐसा पदार्थ बनाया जाता था और इन्हें सामूहिक रूप से सूक्त–वर्ग (कसैले समूह)–के रूप में समूहीकृत किया गया था (2.15.18)।

इसी अधिकरण के अध्याय 22, शुल्क व्यवहार' उल्लेख किया गया है कि शर्करा (क्षार) और शराब (मद्य)–के परिवहन में उत्पाद का 1/25 से 1/20 तक *टोल–ड्यूटी* के रूप में लिया जाता था। इसके अलावा, 'सितात्याह' (कृषि उपज पर लगाये जाने वाला जुर्माना या कर) भी देना पड़ता था।

द्वितीय अधिकरण के अध्याय 25, 'सुराध्यक्ष' या 'मद्य अधीक्षक', में विभिन्न प्रकार की शराब (मद्य या आसव) बनाने में फणीता, गुड़ और शर्करा के उपयोग का विषद रूप से उल्लेख मिलता है। गुड़ का उपयोग करके बनाई गई सभी प्रकार की शराब में, त्रिफला चूर्ण [1 भाग हरड़ (*टर्मिनलिया चेबुला*), 2 भाग बहेड़ा (*टर्मिनलिया नेलरिका*), और 3 भाग आंवला (*फिलेंथस एम्ब्लिका*) से बने चूर्ण का उपयोग किया जाता था ('गुडयुक्तानां व सर्वेषां त्रिफला संभार' 2.25.23)। एक विशिष्ट मद्य, 'मैरेय' बनाने के लिए, मेढ़ाश्रृंगी (गुड्मार) की छाल का काढ़ा, गुड़ के साथ काली मिर्च व पिप्पली का चूर्ण अथवा केवल त्रिफला चूर्ण मिलाकर किण्वितकर बनाया जाता था (2.25.22)। 'प्रसन्ना' (एक प्रकार की मदिरा)–में मुलहठी के काढ़े में दानेदार शर्करा (कट शर्करा) मिलाकर, इसे एक सुखद रंग प्रदान किया जाता था (2.25.28)।

राजा के लिए एक सुखद मद्य बनाने के लिए दानेदार चीनी (कटाक्षारा) और अनेकों जड़ी–बूटियों का उपयोग किया जाता था। उल्लेख है कि इसमें फणिता (राब) मिलाने से इसका स्वाद और भी बढ़ जाता था (2.25.33–34)।

उन दिनों गुड़ का किण्वन कर आसवित करके 'अम्ल सीधु' नामक मद्य तैयार की जाती थी (2.256.39)।

उन दिनों घोड़े और हाथी सेना का महत्वपूर्ण अंग होने के साथ–साथ राजशाही की शानो–शौकत भी थे। इस ग्रंथ के

द्वितीय अधिकरण के में घोड़ों और हाथियों के राशन में शर्करा के साथ–साथ अन्य चारे में प्रयुक्त खाद्य वस्तुओं के उपयोग का उल्लेख इसके अध्याय 30, 'घोड़ों के अधीक्षक' और अध्याय 31, 'हस्त्यध्यक्ष' में किया गया है। सर्वश्रेष्ठ घोड़ों को 5 पल (एक पल = 48 ग्राम) और हाथियों को 10 पल शर्करा दी जाती थी। इतना ही नहीं, इसके बाद के अध्याय 'हस्तिप्रचार' या हाथियों का प्रशिक्षण (अध्याय 32) में यह भी उल्लेख है कि हाथियों को प्रशिक्षित करने वाले डॉक्टर, चौकीदार, सफाई कर्मी, रसोई आदि से जुड़े व्यक्तियों को पके हुए चावल, तेल और नमक के साथ 2 पल शर्करा भी प्रदान की जाती थी। इतना ही नहीं, अध्याय 29, 'गोध्यक्ष' में उल्लेख है कि बैलों के अग्नि दीपन के लिए उन्हें एक द्रोण दुग्ध, 1 प्रस्थ तेल या घृत, 10 पल गुड़ और एक पल सोंठ मिलाकर पिलाई जाती थी (2.29.45)।

इस ग्रंथ के 14वें अधिकरण 'औपनिपदिक'के अध्याय 2, 'प्रलम्भन में अद्भुतोत्पादन' में एक व्यक्ति को लगभग एक महीने तक उपवास करने में सक्षम बनाने की एक विधि का वर्णन है जिसमें गन्ने के उपयोग का उल्लेख है। कसेरुक (*स्किरपस ग्रॉसस*)–(एक प्रकार की जल–लता)–की जड़, उत्पल (कमल)–की जड़, गन्ना, दूर्वा घास (*साइनोडोन डेक्टिलॉन*), दूध, घृत और माण्ड के मिश्रण से तैयार योग की एक खुराक सेवन करने से व्यक्ति एक माह तक सफलतापूर्वक उपवास कर सकता है (14,2,2)।

'कौटिल्य अर्थशास्त्र' के द्वितीय अधिकरण के धातु शोधन से संबन्धित अध्याय XII, 'खनन कार्यों का संचालन और निर्माण'–के अनुसार गुड़ का उपयोग धातुओं को नरम करने में किया जाता था। इसके लिए एक धातु को उसके अत्यंत पतले भागों में विभाजित कर इसे शहद, महुआ (*बैसिया लाटीफोलिया*), भेड़ का दूध, तिल का तेल, घृत, गुड़, मशरूम और एक किण्वक से तैयार मिश्रण में तीन बार भिगोया जाता था।

चाणक्य ने एक और प्रसिद्ध पुस्तक 'चाणक्य नीति–दर्पण' भी लिखी है, जिसमें उन्होंने गन्ने का उपयोग जीवन के कुछ पहलुओं की सच्चाई को समझाने में एक उपमा के रूप में किया गया है यथा:

इक्षुदंडास्तिलाः शूद्रः कान्ता हेम च मेदिनी।
चन्दनं दधि ताम्बूलं मर्दनं गुणवर्धनम्।।

(चाणक्य नीति–दर्पण 7.13)

अर्थात, ईख, तिल, शूद्र, पृथ्वी, चन्दन, दही और पान के मर्दन से इनके गुणों में वृद्धि होती है।

पुष्पे गन्धं तिले तैलं काष्ठे वन्हिः पयो घृतम्।
इक्षौ गुडं तथा देहे पश्यात्मानं विवेकताः।।

(चाणक्य नीति दर्पण 7.21)

अर्थात, इस मानव शरीर में आत्मा का निवास उसी प्रकार है जैसे पुष्प में गंध, तिल में तेल, लकड़ी में अग्नि, दुग्ध में घृत तथा गन्ने में गुड़।

इक्षुरापः पयो मूलं ताम्बूलं फलमौषधम्।।
भक्षयित्वापि कर्तव्याः स्नानदानादिकाः क्रियाः।।

(चाणक्य नीति–दर्पण 9.2)

अर्थात, गन्ना, दुग्ध, मूल, पान, फल, औषधि आदि सेवन करने के बाद ही स्नान–दान आदि करना चाहिए।

गन्धः सुवर्णे फलमिक्षुदण्डे नाकारि पुष्पं खलु चन्दनस्य।
विद्वान् धनी भूपतिर्दीर्घजीवी धातुः पुरा कोऽपि न बुद्धिदोऽभूत्।।

(चाणक्य नीति–दर्पण 9.3)

अर्थात, सोने में गंध, इक्षु में फल, चन्दन में पुष्प, विद्वानों में धनवान तथा राजाओं में चिरायु नहीं होते इससे यह तो निश्चित है कि विधाता के पूर्व कोई बुद्धिमान न था।

कामक्रौधौ तथा लोभः स्वादु शृंङ्गारकौतुके।
अतिनिद्राऽति सेवा च विद्यार्थीह्यष्ट वर्जयेत्।।

(चाणक्य नीति–दर्पण 11.10)

अर्थात, कामासक्ति, क्रोध, लालच, मीठी वस्तु, श्रृंगार, खेल, अतिनिद्रा और अतिसेवा इन आठों को एक विद्यार्थी को त्याग देना चाहिये।

छिन्नोपि चंदनतरुर्न जहाति गन्धं
वृद्धोऽपि वारणपतिर्न जहाति गन्धं लीलाम्।
यन्त्रार्पितो मधुरतां न जहाति चेक्षु
जीर्णोऽपि न व्यजति शीलगुणान् कुलिनः।।

(चाणक्य नीति दर्पण 15.18)

अर्थात, जिस प्रकार काटने पर भी चन्दन का वृक्ष सुगन्ध को नहीं त्यागता, वृद्ध होने पर भी हाथी विलास को नहीं छोड़ता, कोल्हू में पेरे जाने पर भी गन्ना अपनी मधुरता नहीं छोड़ता। इसी प्रकार एक कुलीन व्यक्ति दरिद्र होने पर भी अपनी सुशीलता आदि गुणों का त्याग नहीं करता। इस प्रकार हम देखते हैं कि प्राचीन भारत में, चौथी शताब्दी ईसा पूर्व, चाणक्य विरचित पुस्तक, कौटिल्य अर्थशास्त्र में उल्लेख है कि कठिनाइयाँ होते हुए भी गन्ने की खेती नदी के अतिप्रवाह (या बाढ़) प्रभावित भूमि पर की जाती थी। इसे 'मूलावपाह' अर्थात, जड़ों की बुवाई से उगाई जाने वाली फसल के रूप में वर्गीकृत किया गया था। (संभवतः गन्ने की कटाई के बाद, भूमिगत *स्लिप–सेट्स* से गन्ना की बुआई की जाती होगी)। गन्ने के *सेट्स* के कटे हुए सिरों को शहद, घृत, सुअर की चर्बी और गाय के गोबर लेप के बाद बोया जाता था। गन्ने के रस से गुड़, फणिता, शर्करा और दानेदार शर्करा (कटाक्षार) (सामूहिक रूपसे 'क्षार' कहा जाता था) निर्माण एक संगठित उद्योग प्रतीत होता है–जिसे 'सिंहनिका'–के रूप में मान्यता प्राप्त थी। यह राज्य के राजस्व का एक स्रोत भी था। इन उत्पादों का उपयोग कैंडी, पेय पदार्थ, सिरका (सूक्त) और विभिन्न प्रकार की शराब बनाने में किया जाता था। इसका उपयोग खाद्य पदार्थों की *ड्रेसिंग* के लिए भी किया जाता था। शर्करा अच्छी नस्ल के घोड़ों तथा हाथियों के चारे का एक अवयव के रूप में भी प्रयुक्त होती थी। इनकी देखभाल के लिए नियुक्त कर्मियों को दिए जाने वाले राशन में भी शर्करा का प्रयोग होता था। गन्ने (तथा कुछ अन्य जड़ी–बूटियों)–के उपयोग से बने एक विशिष्ट मिश्रण का सेवन एक आदमी को एक महीने तक उपवास करने में सक्षम बनाता था। गुड़ का उपयोग धातु कर्म में धातुओं को मुलायम बनाने में भी किया जाता था। चाणक्य लिखित एक अन्य प्रसिद्ध पुस्तक 'चाणक्य नीतिदर्पण' में गन्ने का उपयोग जीवन के कुछ पहलुओं की सच्चाई को रोचक रूप से समझाने में एक उपमा के

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

भारत में ऊर्जा के लिए चुकंदर की आवश्यकता व भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान का इस फसल की ओर अहम योगदान

आशुतोष कुमार मल्ल, वरुचा मिश्रा एवं अश्विनी दत्त पाठक

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

भारत में जहां गन्ने का उत्पादन लगभग नियमित चरम सीमा पर या उससे अधिक पर है ऐसी स्थिति में भविष्य में शर्करा की मांग को पूर्ण करने के लिए चुकंदर गन्ने के पूरक के रूप में एक व्यावहारिक विकल्प हो सकता है। इथेनाल व सीमित जल उपलब्धता के लिए गन्ने की फसल पर पूर्ण दबाव गन्ने से उत्पादित शर्करा के उत्पादन में एक सीमित कारक के रूप में कार्य कर सकता है। इस संदर्भ में भी चुकंदर इथेनाल के एक वैकल्पिक स्रोत के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। क्षारीय स्थिति के प्रति इसकी सहिष्णु क्षमता, छोटी अवधि चक्र तथा एक अंतरकाल फसल के रूप में इसका गन्ने के साथ प्रयोग किसानों के लिए इस फसल की ओर आकर्षण का केंद्र है। हालांकि भारत में चुकंदर को बढ़ाने की व्यवहार्यता व्यापक अनुसंधान के माध्यम से स्थापित की गयी है परंतु इसके वाणिज्यिक स्तर पर विकसित करने के लिए पर्याप्त प्रोत्साहन में अभी भी कमी है।

भारत की अर्थव्यवस्था दुनिया में सबसे तेजी से विकासशील है। जैसे जैसे मनुष्यों की जनसंख्या बढ़ रही है उसी प्रकार से ऊर्जा की मांग में भी वृद्धि हो रही है। भारत में पहले से ही लगभग 70% पेट्रोल आयात हो रहा है। इस कारण से भारत गंभीरता से ऊर्जा के वैकल्पिक व नवींकरणीय स्रोतों की तलाश कर रहा है। इस संदर्भ में परिवहन ईधन के रूप में इथेनाल एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाने की संभावना रखता है। भारत में पहले से इथेनाल उत्पादन करने के लिए छोटे स्तर पर उद्योग है जहां शीरे को कच्चे माल के रूप में उपयोग किया जाता है। इथेनाल के उत्पादन के लिए इस प्रकार के कई अन्य विकल्पों को उपयोग में लाने की आवश्यकता है। ब्राजील के इथेनाल *माडल* की वजह से गन्ने की फसल को अधिकतर इथेनाल के उत्पादन के लिए सबसे अच्छा कच्चा माल माना जाता है।

गत कुछ वर्षों के आधार पर कहा जा सकता है कि भारत में गन्ने की फसल में कमी हुई है जिसके कारण से महत्वपूर्ण मात्रा में शर्करा का आयात करना पड़ रहा है। इसके अतिरिक्त विश्लेषकों के अनुमान के अनुसार आने वाले 10–15 वर्षों में भारत में शर्करा की खपत में 50% तक की वृद्धि होगी जिसके कारण गन्ने की फसल पर पहले से ही काफी दबाव पड़ेगा। ऐसी परिस्थितियों में भारत के लिए शर्करा व इथेनाल उत्पादन के लिए पूरक कच्चे माल के रूप में अन्य शर्करा समृद्ध फसलों की संभावना का विश्लेषण करने की जरूरत है।

चुकंदर की फसल भूमध्य क्षेत्रों से होकर तटीय क्षेत्रों तक उगाई जाती है और अब तो यह उत्तर तटीय क्षेत्र में भी फैल चुकी है। लोगों का ऐसा मानना है कि यह फसल भारत जैसे विश्व के गरम क्षेत्रों के लिए अनुकूल नहीं है। हालांकि हाल ही में उष्णकटिबंधीय तथा एक वैकल्पिक क्षेत्रों में चुकन्दर की कई किस्मों का विकास इस मान्यता को बदलने पर विवश कर देगा। पारंपरिक चुकंदर की फसल अमेरिका तथा यूरोपीय स्थानों (दक्षिणी कैलिफोर्निया, दक्षिणी स्पेन, दक्षिणी इटली, आदि) में बहुत अच्छा प्रदर्शन करती है जहां आम खेती की स्थिति में शर्करा की पैदावर 25 टन/हे तक पहुँच जाती है।

लंबा अनुकूल मौसम तथा सौर्य ऊर्जा की अच्छी मात्रा जड़ों का सूखे पदार्थ में रूपान्तरण व सुक्रोज उच्च पैदावार की क्षमता में योगदान देने वाले प्रमुख कारक हैं। गन्ने की अपेक्षाकृत चुकंदर की फसल के प्रमुख फायदे इस प्रकार हैं–छोटी अवधि की फसल (लगभग 5 महीनों की), कम पानी की आवश्यकता (गन्ने की फसल के अपेक्षा लगभग 1/3 से) तक की पानी की आवश्यकता पड़ती है), शर्करा व इथेनाल की उपज में प्रति एकड़ (2.5 से 3.0 लीटर इथेनाल/एकड़) से प्राप्ति। इसके अतिरिक्त चुकंदर हल्की क्षारीय मृदा में उगाई जा सकती है क्योंकि ऐसी स्थिति के लिए इसमें सहिष्णु क्षमता होती है। साथ ही इस फसल से कई उप–उत्पाद भी उत्पादित किए जाते हैं जिससे बायोगैस भी उत्पादित की जा सकती है। चुकन्दर का ऊपरी भाग, पत्ते, *विनेस* तथा इसकी लुगदी के प्रयोग से बायोगैस का उत्पादन होता है। गन्ने की फसल की अपेक्षा चुकंदर की फसल किसानों को फसल चक्रीकरण की अनुमति देती है जो संभवतः मृदा की उर्वरता बनाए रखने व कीटों तथा रोगों के बेहतर नियंत्रण को नियंत्रित करने का सबसे आसान व प्रभावशाली तकनीक है। इसके अतिरिक्त चीनी मिलों में चुकंदर का प्रसंस्करण गन्ने के पेराई समय से पूर्व या उपरांत चीनी मिलों के प्रसंस्करण क्रिया को बढ़ाने के साथ–साथ उनकी उत्पादन लागत को भी कम कर सकता है।

चुकंदर में अधिक मात्रा में सुक्रोज पायी जाती है जिसको कई सूक्ष्म जीवाणुओं के द्वारा आसानी से किण्वित किया जाता है। एक मुख्य समस्या इस फसल के साथ इसके जड़ों की भंडारण की है जिसका निवारण अभी तक संभव नहीं हो पाया है। इस फसल से इथेनाल का उत्पादन *ग्रीन हाउस* गैसों के उत्सर्जन को गेहूँ तथा गन्ने की अपेक्षा कम करता है।

चुकंदर से इथेनाल का उत्पादन पूर्ण चुकंदर के पौधे से या उससे उत्पादित शर्करा से किया जाता है। आर्थिक दृष्टि से यह एक सबसे अच्छा तरीका है। परिचालित चीनी मिलों में बायोइथेनाल का उत्पादन जिसमें कच्चे माल के साथ–साथ शर्करा के प्रसंस्करण में उपयोग होने वाला गाढ़े रस का प्रयोग हो

सके। एक अनाज आधारित फसल के अपेक्षा चुकंदर आमतौर पर एक सस्ता निवेश है जिसमें कम श्रमिकों की आवश्यकता होती है।

चुकंदर से इथेनाल के उत्पादन की प्रक्रिया

शर्करा का उत्पादन चुकंदर की फसल में अन्य शर्करा उत्पादित फसलों के अपेक्षाकृत सरल होती है। चुकंदर की जड़ों को पतले *चिप्स* में काट दिया जाता है जिसको *"कास्सेट्स"* कहते हैं। इन *चिप्स* को तेज पानी के प्रवाह में अच्छी तरह से धोया जाता है। इसके उपरांत इन *कास्सेट्स* को दबाया जाता है जिससे पानी पूर्णतः निकल जाए व इससे शर्करा का उत्पादन किया जा सके। साथ ही इसका निस्पंदन किया जाता है। इसके तत्पश्चात इसको सुखाकर व क्रिस्टलीकरण से अलग किया जाता है। चुकंदर से शर्करा के उत्पादन के लिए किसी भी प्रकार की *एंजाइमैटिक* उपचार की आवश्यकता नहीं होती है। इन फसलों से प्राप्त प्रत्यक्ष खनिज रस में विमुक्त शर्करा होती है विशेषकर सुक्रोज, ग्लूकोज व फ्रक्टोज। इन विमुक्त शर्करा की उपस्थिति स्टार्च या *लिग्नो–सेल्युलोजिक* सामग्री की अपेक्षा ईधन इथेनाल उद्योग में अधिक लागत प्रभावी कच्चा माल बनाती हैं। सुक्रोज किण्वन रस में प्रमुख शर्करा होती है जो किण्वन के पहले चरण के दौरान *इंवर्टेज एंजाइम* की उपस्थिति में ग्लूकोज व *फ्रक्टोज* में शीघ्रता से टूट जाती है। यह एंजाइम प्रयुक्त *ईस्ट* के *पेरिप्लाज्मिक* जगह में पाया जाता है। एक सामान्य प्रक्रिया में शर्करा युक्त फसलों से उत्पन्न रस को अमोनियम सल्फेट या अन्य नत्रजन स्रोतों के साथ निष्फल करके उसके पीएच तथा शर्करा की साद्रता को समायोजित किया जाता है। इसके पश्चात उपयुक्त स्थिति के तहत सूक्ष्मजीवों विशेषकर *ईस्ट* का उपयोग करके किण्वित किया जाता है।

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान लखनऊ का चुकंदर की फसल में योगदान

आजकल जिस प्रकार से इथेनाल का उत्पादन बढ़ाने पर सरकार ज़ोर दे रही है, चुकंदर की फसल एक वैकल्पिक स्त्रोत के रूप में तेज़ी से उभर रही है। इस संदर्भ में भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान भी अपना अभूतपूर्व योगदान कर रहा है।

1970 से 1980 के दशक के दौरान कुमायूँ पहाड़ियों में स्थित भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान के मुक्तेश्वर केंद्र तथा गोविंद बल्लभपंत कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय के गढ़वाल की पहाड़ियों में स्थित रानीचौड़ी केंद्र में चुकंदर के जननद्रव्य के

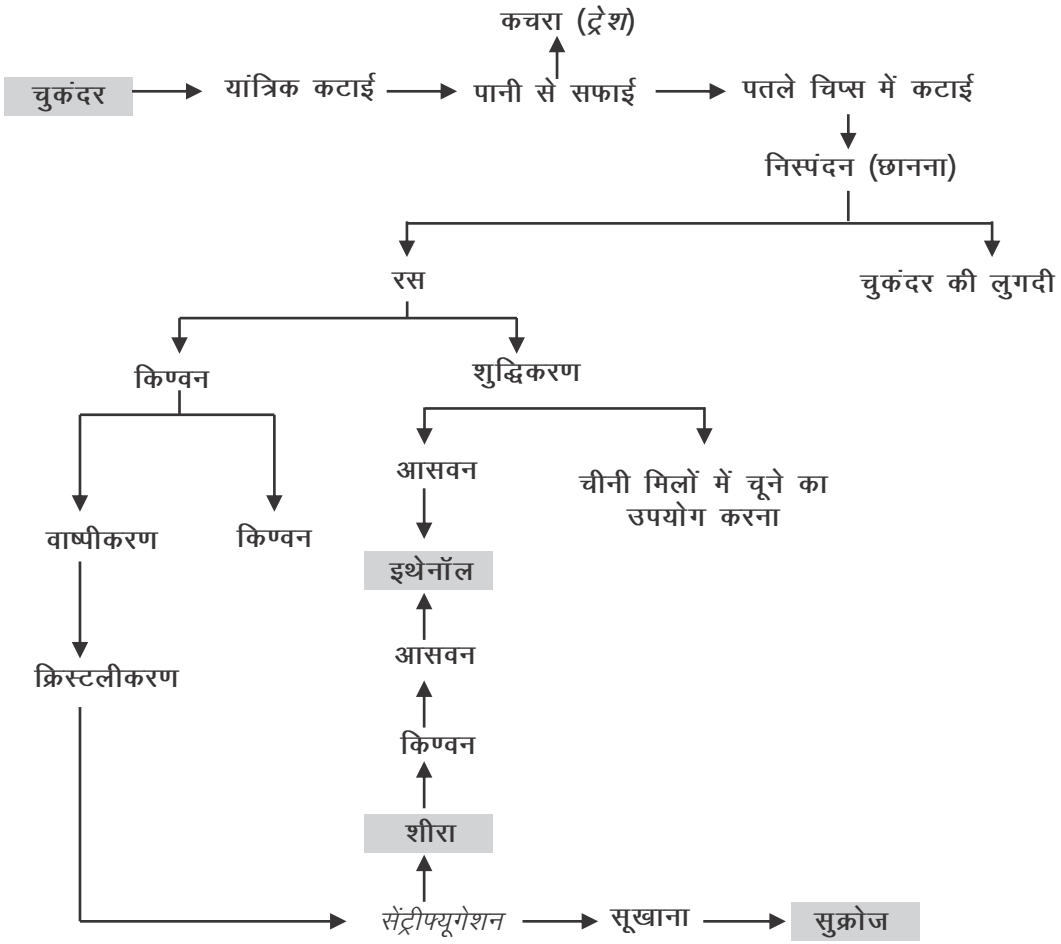

चित्र–1: चुकंदर से उत्पादित शर्करा व इथेनाल के उत्पादन की प्रणाली

रखरखाव तथा सीमित प्रजनन कार्यों को इस संस्थानों में किया जाता रहा है। इसके जननद्रव्य में द्विगुणित खुले परागयुक्त क़िस्मों, *अनिसोप्लाइड* क़िस्मों, जन्मजात व त्रिगुणित संकर होते हैं। इन संस्थानों के केन्द्रों में सफल रूप से इनकी अनुकूलित क़िस्मों की जनसंख्या में सुधार किया जाता रहा है जबकि इनकी *इन्ब्रेड* का उत्पादन स्वावलंबन में दौहराया जाता है। इस तरह के जन्मजात और राजनयिक क़िस्मों की क्षमता के अध्ययन के संयोजन से मिश्रित क़िस्मों की उत्पत्ति हुई है। इसके साथ ही कुछ *डिप्लोइड* में *टेट्राप्लाइड* को प्रेरित करने के लिए प्रयास किए गए थे और प्रयोगात्मक संकर *डिप्लोइड* क़िस्मों के साथ भी किए गए थे। *मैरिगो मैग्नापोली* जैसे *अनिसोप्लाइड* क़िस्मों में द्विगुणित व टेट्राप्लाइड घटकों पार्थक्रय बना दिया गया व जड़ों की फसल का चयन किया गया। एलएस 6 एक ऐसा ही चयन है। कई चुकंदर की मिश्रित प्रजातियाँ जो भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान व गोविंद बल्लभपंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय के द्वारा विकसित की गयी थी उनको राजस्थान में स्थित श्री गंगानगर के किसानों के खेतों में प्रदर्शन किया गया। इन खेतों में रामोणक्या 06 (एक खुला परागित राजनयिक रूसी किस्म) वाणिज्यिक रूप से उगाई गयी। भारत में वर्षों से वाणिज्यिक खेती के लिए चुकंदर की पहचानी गयी किस्में तालिका–1 में अंकित हैं।

चुकंदर की फसल के लिए मशीनीकरण का विकास

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान लखनऊ ने चुकंदर की फसल को बोने के लिए कई उपकरणों को विकसित किया है। उदाहरण के लिए *ट्रैक्टर* चालित चुकंदर *रिज प्लांटर, ट्रैक्टर* चालित चुकंदर *रेज्ड बेड प्लांटर,* हाथ से चालित चुकंदर *डिगर,* चुकंदर *डीटापर* व ट्रैक्टर चालित चुकंदर *डिग्गर कम विंडरर*। यह सभी उपकरण भारत के उष्णकटिबंधीय तथा उपोष्ण क्षेत्रों में मूल्याकन किए गए हैं।

चुकंदर के बीजों का उत्पादन

राजनयिक रूसी किस्म रामोणक्या 06 के बीजों का उत्पादन का मानकीकरण मुक्तेश्वर, रानीचौरी, औली, शिमला, कलपा, दार्जिलिंग व श्रीनगर में किया गया था जो 5000 की ऊँचाई पर भारत में स्थित हैं। इसके अतिरिक्त चुकंदर की अन्य किस्में जैसे भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ द्वारा विकसित आईआईएसआर कम्पोजिट–1 व एल एस–06 तथा पंतनगर से विकसित पंत एस 10 के भी बीजों के उत्पादन के मांनकीकरण को

तालिका–1 भारत में वाणिज्यिक खेती के लिए पहचानी गयी चुकंदर की किस्में

किस्म का प्रकार	किस्म	उत्पादक करता
खुला परागित राजनयिक *डिप्लोप्लाइड*	रामोणकया 06	*यूएसएसआर*
राजनयिक चयन व *कंपोजिट*	एलएस 6, आई आई एस आर कोंप 1, पंत एस 10, पंत कोंप 3, एलकेए–10, एलकेसी 2, एलकेसी 95	स्वदेशी विकसित
अनिसोप्लाइड किस्में	मेरिबो मैगनोंपोली, मेरिबो मैक्रोपोली, मेरिबो रेसिटापोली, ट्राइबिल, एचएच रासपोली, कावेगिगापोली, कावेमैगापोली, कावेसर्कोपोली	डेनमार्क, इटली, बेल्जियम, जर्मनी
टिट्लाइड संकर	वीरटस, सालिड, क्रिस्टल	हिलशोंग, स्वीडन
राजनयिक संकर	एच आई 0064, फैलिसिटा, पीएसी 6008, एसजेड 35, केलस्टा	स्वीडन, बेल्जियम, जर्मनी

कुछ क्षेत्रों में प्रयास किया गया। कई वर्षों से स्वदेशी क़िस्मों को विकसित किया जा रहा है व भारत में सामान्य खेती के लिए संस्तुत किया जा रहा है। इसके साथ ही उच्च तापमान (40–45^{o}से.) वाली सहिष्णु प्रजातियों को भी अनुरक्षित किया गया।

चुकंदर की नयी विकसित क़िस्मों का प्रदर्शन

भाकृअनुप ने 2004 में *एपी सेस नेटवर्क* परियोजना के साथ मिल कर कार्य किया जिसमें पाँच केंद्रों में कार्य किया गया। इन पाँच केंद्रों में से दो केंद्र महाराष्ट्र में स्थित हैं। इन केन्द्रों में अनुसंधान से यह ज्ञात हुआ कि चुकंदर की फसल अक्टूबर–नवंबर से अप्रैल–मई तक सफलतापूर्वक उगायी जा सकती है। उचित किस्मों के साथ–साथ नई प्रथाएँ भी विकसित की गयी। चुकंदर की जड़ों का उत्पादन 60–80 टन/ हेक्टेयर व उसमें

चित्र : भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान लखनऊ द्वारा विकसित चुकंदर की किस्में

ट्रैक्टर द्वारा खींची गई चुकंदर *रिज प्लॉन्टर*

ट्रैक्टर चालित चुकंदर उठी हुई बेड प्लॉन्टर

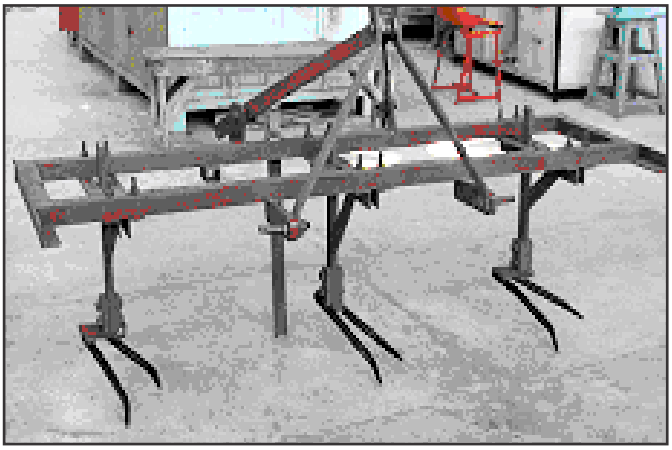

चुकंदर *हार्वेस्टर*

फर्ब बीजक का खेत पर प्रदर्शन

हाथ चालित *डिब्बर प्लांटर*

हाथ चालित घुमाऊ *प्लांटर*

चुकंदर की फसल के लिए विकसित मशींनें

तालिका 2 : चुकंदर की किस्मों का प्रदर्शन (2007–08)

क्रमांक संख्या	किस्में	सुक्रोज़ की मात्रा (%		जड़ों का उत्पादन (टन/हेक्टेयर)		कुल शर्करा की मात्रा बुआई के 180 दिनों के उपरांत (टन/हेक्टेयर)
		बुआई के 150 दिनों के उपरांत	बुआई के 180 दिनों के उपरांत	बुआई के 150 दिनों के उपरांत	बुआई के 180 दिनों के उपरांत	
1	एलके–27	13.05	14.93	78.22	67.92	10.868
2	एलकेसी–95	12.71	14.98	76.00	65.05	11.058
3	एसवाईटी–06–07	14.26	16.40	84.79	70.99	10.807
4	एसवाईटी–06–13	14.50	16.67	75.37	69.24	10.890
5	आईएन–06	14.13	16.06	90.77	69.33	9.566
6	आई–07	14.28	15.76	65.27	61.32	10.248
7	पीएसी–60002	14.88	17.14	81.49	70.62	11.444
8	पीएसी–60006	13.56	16.18	72.20	66.97	11.097
9	*फेलिसिटा*	13.07	15.19	84.63	80.82	11.728
10	*रसाउल*	13.38	14.88	64.86	55.56	9.044
11	*एलएस–6*	13.14	16.22	82.77	70.42	11.484
12	शुभ्रा	13.78	17.67	93.59	77.77	13.253

सुक्रोज़ की मात्रा 13–15% की देखी गयी। तालिका 2 में विभिन्न बीज स्रोतों (आईआईएसआर, *सिनजेन्टा, एसईएस वेंन्दरवे*, ईरान और *केडब्ल्यूएस)* से चुकंदर की किस्मों का प्रदर्शन करती है।

पंत एस–1, पंत एस –10, आईआईएसआर कॉम्प –1, आईआईएसआर –2 और मेज़ानपोली को खारा और क्षारीय मृदा की स्थिति के लिए उपयुक्त चुकंदर की किस्मों के रूप में पहचाना गया है। सुंदरबन में अल्कोहल के उत्पादन के लिए चुकंदर की फसल को प्रयोग किया जाने लगा है।

चुकंदर तथा गन्ने की अंतरफ़सलीय तकनीक

अधिक प्रति इकाई शर्करा की मात्रा का उत्पादन के लिए गन्ने के साथ चुकंदर को अंतर फ़सल के रूप में प्रयोग किया जा सकता है जिससे अधिक लाभ, ऊर्ध्वाधर भूमि उत्पादकता में वृद्धि और विस्तारित पेराई सत्र के लिए चीनी उद्योग को कच्चे माल की आपूर्ति होती है। यह पूर्णतः चुकंदर की फसल के साथ ही संभव है क्योंकि इसकी बुआई का समय गन्ने की शरद ऋतु की बुआई से मेल खाता है। चुकंदर व शरद ऋतु में बुआई वाले गन्ने के साथ 60 कि.ग्रा. नत्रजन प्रति हेक्टेयर का उपयोग गन्ने में नत्रजन के उपयोग के अतिरिक्त अच्छी उपज के लिए करना चाहिए। फास्फोरस और पोटेशियम खुराक को अलग–अलग रूप से फसलों पर प्रयोग किया जाता है जिससे चुकंदर की जड़ों व गन्ने की अधिक उपज मिले। गन्ने की फसल को एकमात्र फसल के रूप से लगाने के अपेक्षा में गन्ने के साथ चुकंदर की फसल को अंतरकाल फसल के रूप से लेने पर किसानों को 50–55 प्रतिशत का मुनाफा प्राप्त हो सकता है ।

चुकंदर में कीट एवं रोगों का प्रबंधन

चुकंदर की कम उपज और कम चीनी की मात्रा के लिए कई कारक ज़िम्मेदार होते हैं, जिनमें से पौधों में रोगों का लगना एक प्रमुख चिंता का विषय है। कई *एटिऑलॉजिकल एजेंट्स* जैसे कवक, जीवाणु, विषाणु तथा सूत्रकृमि इस फसल पर विभिन्न रोगों को पैदा कर सकते हैं लेकिन चुकंदर की फसल में बीजिंग रोग, जड़ सड़ांध और पत्ते रोग प्रमुख महत्व के हैं। भारत में चुकंदर के अनुकरण के दौरान होने वाले रोगों का मुख्य कारण पिथियम सूक्ष्म जीवाणु है। पत्ते की बीमारियों में, *सरकोस्पोरा बेतिकोला* की वजह से पत्ती पर दाग का रोग होता है जो इसकी जड़ों के लिए व बीजों के लिए सबसे व्यापक और विनाशकारी रोग होता है। बीज की फसल में, यह बीज के आकार और गुणवत्ता को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करता है। इसके अतिरिक्त चुकंदर के पत्तों पर *स्यूडोमोनास* जीवाणु के द्वारा रोग तथा पाउडर की तरह फफूँदी वाला रोग भी कुछ क्षेत्रों में चुकंदर की फसल का आम रोग है। चुकंदर की फसल में रोगों के प्रबंधन के लिए कई महत्वपूर्ण कोशिशें इस संस्थान के वैज्ञानिकों द्वारा की गयी हैं। चुकंदर की फसल में कुछ रोगों के प्रबंधन के तरीके निम्नवत दिये गए हैं:

1. चुकंदर की फसल की जल्द बुआई, रोगग्रसित फसल को जलाना, अन्य फसलों के साथ इस फसल का चक्रीकरण, मूँगफली, सरसों या नीम *केक* के उपयोग से मृदा में सुधार, उचित जल निकासी व पूर्ण रूप से सिंचाई (8 से 10 सिंचाई से कम) व उर्वरक का उपयोग विभिन्न रोगों की घटनाओं को कम करने के लिए प्रभावी होते हैं।

2. चुकंदर के बीजों पर थीरम 2 ग्राम/कि.ग्रा. की दर से या बेविस्टीन 1.0 ग्राम/कि.ग्रा. की दर से (जिसमें *बेंटोनाइट* मृदा एक मुख्य द्वर्य है) व *मिथाइल सेल्युलोज* को *स्टिकर* के रूप में प्रयोग करने से चुकंदर के बीजजनित रोगों व उसके अनुकरण के रोगों पर प्रभावशाली पाया गया है।
3. चुकंदर के बीजों का अनुकरण तथा जड़ सड़ांध रोग को जैव–कारकों (*ट्राइकोडर्मा विरिडी* या *ट्राइकोडर्मा हार्जियानम*) का उपयोग 20 कि.ग्रा./हे की दर पर बुआई के समय पर किया जाने से रोगों का प्रबंधन होता है। इसके तत्पश्चात जैव–कारकों के साथ बीज *पेलेटिंग* या बेविस्टिन का 0.5% की दर पर या थिरम का 1.0% की दर पर बुवाई के 45 दिनों बाद उपयोग किया जाता है।
4. उष्णकटिबंधीय चुकंदर की किस्मों को लगाना चाहिए जैसे एलएस–6, आईआईएसआर–कॉम्प 1 और रामोनसकाया–06।
5. नई विकसित एकीकृत हानिकारक कीट प्रबंधन की पद्धति का प्रयोग से *स्पोडोप्टेरा* कीट का प्रबंधन किया जा सकता है। इसके अंतर्गत
   - *स्पोडोप्टेरा* कीट की कम संभावना होने के लिए किसानों को चुकंदर की शुभ्रा किस्म को लगाना चाहिए।
   - चुकंदर के एक माह बुआई के बाद पक्षियों का बसेरा 25/हेक्टेयर में लगाना चाहिए।
   - हर चार दिनों के अंतराल के बाद *स्पोडोप्टेरा* कीट की चरणों को हाथ से एकत्र करना चाहिए व उन्हें नष्ट करना चाहिए। यह कार्य कम से कम चार गुना करना चाहिए जब इस कीट का विस्तार खेतों में हो चुका हो।
   - 4 से 5 दिनों के अंतराल में घास के ढेरों का प्रयोग करना व लार्वा के चरणों को नष्ट करना।
   - सर्दी के मौसम में चुकन्दर की बुआई के 4 माह के बाद फेरोमोन ट्रैप 25/हेक्टयर के दर पर लगाना चाहिए तथा गर्मी के मौसम में बुआई के 1 माह के उपरांत। *स्पोडोप्टेरा* के नर वयस्कों को आकर्षित करने के लिए हर 15 दिनों के अंतराल में लॉर (चारे) को बदला जा सकता है। *स्पोडोप्टेरा* की आबादी की निगरानी के लिए बीज के अंकुरण के चरण से फसल को पांचवें महीने तक एक या दो फेरोमोन जाल लगाए जा सकते हैं।
   - जब *स्पोडोप्टेरा* की जनसंख्या प्रारंभिक अवस्था में हो उस समय सर्दी के मौसम में 15 दिन के अंतराल पर 600 मि.ली./हेक्टेयर की दर पर *एसएलएनपीवी* और गर्मियों के मौसम में 500 मि.ग्रा./हेक्टेयर का छिड़काव करना चाहिए।
   - *स्पोडोप्टेरा* के गंभीर विस्तार के दौरान 25 ग्राम/हेक्टेयर की दर से चारा का उपयोग लैनेट 40 एसपी (975 ग्राम गेहूं का आटा + 25 ग्राम मेथोमिल (लनाट) + 100 ग्राम गुड, 1 लीटर पानी) का प्रयोग।
   - फेरोमोन ट्रेप में *स्पोडोप्टेरा* प्रौढ़ पतंगों के संग्रह के आधार पर दो किश्तों (50,000 *पैरासिटोइड*/किश्तों) में *ट्राइकोग्रामा किलोनीस*, एक अंडा परजीवीय, 1,00,000/हेक्टर की दर पर प्रयोग करना चाहिए।
   - तीव्र आवेश के दौरान क्विनलफोस 25 ईसीए 0.05% की दर पर (या 2 मि.ली./लीटर पानी) के आधार और एकल छिड़काव की आवश्यकता है।

हिंदी हमारे राष्ट्र की अभिव्यक्ति का सरलतम स्रोत है।

-सुमित्रानंदन पंत

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

गन्ने के मुख्य कवक रोग एवं प्रबंधन

संजय कुमार गोस्वामी, चंद्रमणि राज एवं श्वेता सिंह
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

गन्ना भारत की मुख्य फसलों में से एक है। यह भारत की प्रमुख नकदी और कृषि–औद्योगिक फसल है। गन्ने के कई उत्पाद जैसे गुड़, चीनी, अल्कोहल, इथेनॉल और जैविक खाद इत्यादि की वजह से यह फसल कल्पवृक्ष के नाम से भी जानी जाती है। संभवतः देश के 123.4 लाख किसान अपनी रोजी–रोटी के लिए गन्ने पर निर्भर हैं। विश्व में गन्ना उपोष्ण और उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में उगाया जाता है। विश्व का लगभग 17 प्रतिशत गन्ना उत्पादन भारत में किया जाता है और इसका 50 प्रतिशत उत्पादन का अंश उत्तर प्रदेश से आता है। भारत में दूसरे देशों की अपेक्षा गन्ने की प्रति इकाई पैदावार बहुत कम है जिसके कई कारण हैं। इन कारणों में गन्ने की फसल में लगने वाले रोगों की अहम भूमिका है। गन्ने मे कई प्रकार के रोगों का प्रकोप होता है, जिनमे लाल सड़न रोग, उकठा रोग, कंडुआ रोग, सेट्ट गलन, और रतुआ मुख्य कवक रोग हैं, जिसकी चर्चा इस लेख में की जा रही है।

रोग पहचान और प्रबंधन

1. लाल सड़न रोग

कारकः *कोलेटोट्राइकम फाल्केटम*

लक्षण

- धुरी के पत्ते सूख जाते हैं (चित्र 1)।
- पोरी के ऊतक लाल हो जाते हैं।
- पोरी के ऊतकों मे सफ़ेद धब्बे दिखाई देते हैं।
- गन्ने से सिरके जैसी गंध आती है।

प्रबंध

- लाल सड़न रोग प्रतिरोधी किस्में लगानी चाहिए।
- रोग रहित बीज का चुनाव करें।
- अगर किसी पोरी मे लाल रंग दिखाई दे तो उसे बीज के लिए इस्तेमाल नहीं करना चाहिए।
- पौधे के रोगी भाग को निकालकर खेत से दूर फेंक देना चाहिए या उसको जला देना चाहिए।
- फसल चक्र अपनाने से रोगकारकों की संख्या में भारी कमी आती है। बीज गन्ने का शोधन (टेबुकोनाज़ोल+ ट्राइफ्लॉक्सीस्ट्रोबिन/0–2 प्रतिशत या थियोफेनेट मिथाइल /0–25 प्रतिशत) के द्वारा करने से रोग लगने की संभावना लगभग 30 प्रतिशत तक कम हो जाती है।

चित्र 1: गन्ने का लाल सड़न रोग

2. उकठा रोग

कारकः *फ्यूजेरियम सेकेरी*

लक्षण

- उकठा रोग के लक्षण मानसून या मानसून के बाद देखने को मिलते हैं (चित्र 2)। रोग से ग्रस्त पौधे छोटे रह जाते हैं।
- पौधे के गोब की पत्तियाँ पीली और ढ़ीली होकर सूख जाती हैं तथा पत्ती का अन्य भाग हरा रहता है। गूदे का रंग हल्का बैंगनी या गहरा लाल दिखाई देता है।
- रोगग्रस्त गन्ने हल्के हो जाते हैं, वृद्धि अवरुद्ध हो जाती है और पोरियां सिकुड़ जाती हैं। गन्ने को फाड़ने पर दुर्गन्ध आती है जो सिरके या अल्कोहल से भिन्न होती है। इन गन्नों को फाड़कर निरीक्षण करने पर आन्तरिक भाग खोखले पाए जाते हैं, जो नौकाकार के प्रतीत होते हैं।
- रोगग्रस्त गन्नों में अंकुरण की क्षमता समाप्त हो जाती है, अथवा पैदावार और चीनी की मात्रा में काफी कमी आ जाती है।

चित्र 2: गन्ने का उकठा रोग

- रोगग्रसित गन्ना बीच से पिचक जाता है और उसे गाँठ से तोड़ना काफी मुश्किल होता है। ऐसे गन्नों के भीतर असंख्य बीजाणु भरे होते हैं। रोगग्रस्त गन्नों के आंतरिक ऊत्तकों में लालिमायुक्त भूरे स्थान बन जाते हैं।

प्रबंध

- बीमारीग्रस्त गन्नों को बीज के रूप में प्रयोग न करें एवं बीज गन्ने का चयन रोगरहित खेतों से करें। पेड़ी फसल को प्रोत्साहन नहीं देना चाहिए।
- गन्ना के साथ प्याज, लहसुन और धनिया की अन्तः फसल लेने से इस रोग का प्रकोप कम होता है। धान–गन्ना का फसल चक्र भी इस रोग के बीजाणु को पनपने नहीं देता है।
- बीज गन्ने का शोधन कार्बेन्डाजिम 0.2 प्रतिशत + बोरिक एसिड 0.2 प्रतिशत या बोरिक एसिड 0.2 प्रतिशत + *ट्राइकोडर्मा विरिडी* के घोल में 10 मिनट तक उपचार करके बुआई करने से इस बीमारी की रोकथाम की जा सकती है। *प्रेसमड* मिश्रित *ट्राइकोडर्मा* उकठा रोग को रोकने में काफी प्रभावित पायी गई है।
- सादे या गर्म पानी में कवकनाशी दवायें जैसे *थीरम, बेनोमिल, बैवस्टीन* के 0–20 प्रतिशत घोल से उपचारित करने से बीज गन्ने में उपस्थित कवक काफी सीमा तक नष्ट हो जाता है। इन फफूँदीनाशक दवाओं को गर्म पानी में मिलाकर उपचार करने से प्रभाव अधिक पाया गया है।

3. कंडुआ रोग

कारक: *आस्टिलेगो सीटामेनिआ*

लक्षण

इस रोग में गन्ने के उगने की जगह से एक काली चाबुक जैसी बनावट निकलती है (चित्र 3) और संक्रमित पौधों के ऊपर तक जाती है। चाबुक जैसी बनावट वाले पौधों में ऊतकों अथवा फफूंदी के ऊतकों का मिश्रण होता है। कवक के बीजाणु चाबुक जैसे ऊतकों मे जमा रहते हैं।

- रोग प्रतिरोधी किस्मों को बढ़ावा देना ही इस रोग से लड़ने के लिए सबसे अच्छा उपाय है ।
- जिन पौधों में रोग लग गया हो उसे नष्ट कर देना चाहिए ताकि वे बीमारी को और ज्यादा न फैला सकें।

चित्र 3 गन्ने का कंडुआ रोग

- गन्ने के बीज/*सेट* को 2–5 प्रतिशत *ओर्गनोमेर्कुरियल* फफूंदीनाशक से उपचार करने से इस बीमारी की संभावना कम हो जाती है

4. *सेट* गलन रोग

कारक: *सेराटोसिस्टिस पाराडोक्सा*

लक्षण:

यह रोग मुख्य रूप से रोपण के दो से तीन सप्ताह बाद गन्ना के सेटों को प्रभावित करता है। प्रभावित ऊतक पहले लाल रंग विकसित करते हैं जो बाद के चरणों में भूरा–काला हो जाता है। यदि रोग गंभीर रूप धारण कर लेता है तो प्रभावित गन्ने के आंतरिक गुहाओं में *सेराटोसिस्टिस पाराडोक्सा* के *माइसिलियम* और बीजाणु प्रचुर मात्रा में भर जाते है। रोगग्रस्त डंठल को काटने पर सड़ने वाले ऊतकों में से अनानास जैसी एक विशिष्ट दुर्गन्ध आती है। कलियों के अंकुरित होने से पहले ही *सेट* सड़ सकते हैं या लगभग 6–12 इंच की ऊंचाई तक पहुंचने के बाद अंकुर मर सकते हैं क्योंकि *सेट* के अंदर कवक की उपस्थिति जड़ों को बढ़ने से रोकती है। संक्रमित अंकुर अवरुद्ध हो जाते हैं। कभी–कभी यह रोग खड़ी फसल में भी रोगाणु के प्रवेश करने के कारण होता है, जो पर्ण–बेधक या तना–बेधक, चूहे या ऐसी किसी भी चोट से क्षतिग्रस्त डंठल के माध्यम से होता है।

प्रबंधन

- रोग के प्रबंधन का सबसे आसान और सबसे किफायती तरीका प्रतिरोधी किस्म का उपयोग है।
- रोग मुक्त *सेटों* (बीज़) का उपयोग किया जाना चाहिए क्योंकि प्रतिरोध का प्रमुख स्रोत संक्रमित पौधों और सेटों में होता है।
- किसान आमतौर पर 12–24 घंटे के लिए 2–3 प्रतिशत चूने के घोल के साथ *सेट* (बीज) का इलाज करते हैं ताकि कवक उगने से पहले खत्म हो जाए।

- संक्रमण से बचने के लिए *सेट* के कटे हुए किनारों को चूने से या *कॉपर सल्फ़ेट* घोल के साथ ढ़क देना चाहिए।
- संक्रमित पौधों का पता लगाने, हटाने और पूरी तरह से नष्ट करने के लिए क्षेत्र के सर्वेक्षण की जरूरत होती है। संक्रमित स्थानों पर चूना लगाया जाना चाहिए ताकि क्षेत्र में रोग *इनोकुलम* को कम किया जा सके।
- सोयाबीन और/या मूंगफली के साथ गन्ना फसलों के बीच कई वर्षों तक फसल–चक्रण भी रोग चक्र को बाधित कर सकता है और खेत में पौधों पर इसके प्रभाव को कम कर सकता है।
- गन्ना बोने के लिए किसानों को सूखी और अच्छी जल निकासी वाली मिट्टी की सिफारिश की जाती है।
- रोगग्रस्त क्षेत्रों में *रैटूनिंग* (पेड़ीकरण) को अपनाने से बचें।
- फसल की शुरूआती अवस्था में धनिया या सरसों को सहयोगी फसल के रूप में उगाएं।
- *सेट* को 40 पीपीएम बोरान या मैंगनीज में 10 मिनट के लिए या 0.25% एमिसन या 0.05% कार्बेन्डाजिम में 15 मिनट के लिए डुबोएं।

5. रतुआ रोग

कारक: *पक्सिनिआ मेलनोसेफला*

लक्षण:

गन्ने के इस रोग के शुरुआती लक्षण पत्तों पर 1–4 मि.मी. लंबाई के लंबे पीले धब्बे के रूप में होते हैं। रोग के विकास के साथ (मुख्य रूप से निचली सतह पर) धब्बे पत्ती शिरा के समानांतर बढ़ जाते हैं। वे लंबाई में 20 मि.मी. और चौड़ाई में 1–3 मि.मी. तक बढ़ते हैं। वे हल्के लेकिन निश्चित *क्लोरोटिक* आभा के साथ नारंगी भूरे या लाल भूरे रंग के धब्बों में भी बदल जाते हैं। बाद में रतुआ के छोटे–छोटे दाने आपस में मिल जाते हैं। जिसके फलस्वरूप पत्ती की *एपिडर्मिस* टूटने और गलने लगता है। आमतौर पर यह फफूँदी पत्ती की नोंक के करीब प्रचुर मात्रा में तथा नीचे की ओर संख्या में कम पाये जाते हैं ।

प्रबंधन

- रोग नियंत्रण का सबसे अच्छा साधन प्रतिरोधी किस्मों को उगाना है, प्रतिरोधी किस्मों जैसे को–91010 (धनुष), को–87025 (कल्याणी) का उपयोग करें।
- रोगधारी एवं प्रभावित पत्तियों को तुरंत हटाकर जला देना चाहिए।
- आम तौर पर गन्ने के वो खेत जिसमे मिल मिट्टी डाला गया है, उन खेतों में उगाए गए गन्नों में आमतौर पर रतुआ रोग लगने की संभावना होती है.
- *ट्राइडेमॉर्फ* 1.0 लीटर/हेक्टेयर या *मैनकोजेब* 2.0 किग्रा/हेक्टेयर अथवा *डाइथेन एम* 45/2 ग्राम/लीटर का एक छिड़काव या *ट्राईजोल* या *स्ट्रोबिल्यूरिन* या *पाइराक्लोस्ट्रोबिन* कवकनाशी/3 ग्राम/लीटर पानी का छिड़काव करने से रोग मे कमी देखी गई है।

हिंदी राष्ट्रीय एकता का प्रतीक है।

-डॉ. संपूर्णानंद

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

उपोष्ण क्षेत्रों में गन्ने की फसल में नाइट्रोजन प्रबंधन

एस.के. यादव, सुधीर कुमार शुक्ल, गया करन सिंह एवं अश्विनी दत्त पाठक
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

गन्ना हमारे देश की एक प्रमुख नकदी फसल है जिसका उत्पादन सम्पूर्ण भारत में बहुतायत मे किया जाता है। आमतौर पर उपोष्ण क्षेत्रों में गन्ने के अन्तर्गत क्षेत्र उष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों से ज्यादा है किन्तु प्रति हे. गन्ने की तुलनात्मक उपज कम होती है। गन्ने में कम उपज के बहुत कारण होते हैः जैसे जलवायु, मिट्टी, उर्वरक प्रबंधन, फसल प्रबंधन, सिंचाई, फसल की अवधि, गन्ने की उन्नतशील प्रजातियाँ इत्यादि। इन समस्त उत्पादन घटकों मे उर्वरक प्रबंधन एक महत्वपूर्ण घटक है जिसका असर गन्ने की पैदावार तथा मिट्टी की उत्पादकता पर पड़ता है। गन्ने की उचित उपज हेतु कुल 17 आवश्यक पोषक तत्वों की जरूरत होती है। जिनमे नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटाश मुख्य रूप से प्राथमिक तत्वों की श्रेणी मे आते हैं जिनको खाद तथा उर्वरकों के माध्यम से फसल को प्रदान करते हैं। इन तीनों उर्वरकों में सबसे अधिक नाइट्रोजन का प्रयोग गन्ने की फसल में किया जाता है। नाइट्रोजन का मुख्य कार्य पौधों में प्रोटीन तथा हरित लवक का निर्माण करना होता है जिसका सीधा असर गन्ने की पैदावार पर पड़ता है। अर्थात गन्ने की फसल में नाइट्रोजन की आवश्यकतानुसार प्रयोग करने पर गन्ने के पैदावार में वांछनीय बढ़ोत्तरी होती है। नाइट्रोजन की आवश्यकता से अधिक मात्रा मे प्रयोग करने से गन्ने की उत्पादन लागत मे वृद्धि तथा पर्यावरण प्रदूषण होने का खतरा भी अधिक हो जाता है। अतः गन्ने की उचित पैदावार तथा पर्यावरण सुरक्षा हेतु नाइट्रोजन का गन्ने में समुचित प्रबधन करना महत्वपूर्ण हो जाता है।

गन्ने में नाइट्रोजन के प्रभाव

आरंभिक अवस्था में गन्ने के पौधे को नाइट्रोजन की उचित मात्रा मिलने से पत्तियों का रंग गहरा हरा होता है तथा गन्ने की पत्तियाँ लंबी तथा चौड़ी बनती हैं जिससे पौधों की बढ़वार तेज होती है। गन्ने मे कल्लों की संख्या में वृद्धि होती है जिसके फलस्वरूप अधिक संख्या में पेराई युक्त गन्ने बनते हैं। प्रारम्भिक अवस्था में उचित पौध संख्या होने से गन्ने की पैदावार भी अधिक प्राप्त होती है। नाइट्रोजन के समुचित प्रबंधन से गन्ने की पोरी लंबी तथा मोटी होती है जिससे अधिक लंबाई के गन्ने प्राप्त होते हैं। गन्ने मे उचित नाइट्रोजन होने से गन्ने मे बनने वाली शर्करा की मात्रा में भी वृद्धि होती है। इसके विपरीत गन्ने मे नाइट्रोजन की कमी होने पर गन्ने की बढ़वार कम हो जाती है जिससे मिल योग्य गन्ने नहीं बन पाते हैं। फलस्वरूप गन्ने की उपज कम होती है। गन्ने के पौधों मे नाइट्रोजन की कमी के लक्षण सर्वप्रथम पौधे की पुरानी पत्तियों पर दिखाई देते हैं जिसमें नीचे की पुरानी पत्तियाँ पीले रंग की हो जाती हैं और यह पीलापन धीरे–धीरे ऊपर की पत्तियों की तरफ बढ़ता जाता है जिससे पौधों की पूरी पत्तियाँ पीली हो जाती हैं और पौधे की बढ़वार भी रुक जाती है। साथ ही साथ गन्ने में आवश्यकता से अधिक नाइट्रोजन के प्रयोग करने से गन्ने की पत्तियाँ गहरे हरे रंग की हो जाती हैं तथा गन्ने का पौधा बहुत कोमल व रसीला हो जाता है जिससे गन्ने में कीट और रोगों का प्रकोप बढ़ने के अलावा गन्ने मे शर्करा/चीनी की मात्रा भी कम बनती है।

नाइट्रोजन के श्रोत

नाइट्रोजन की पूर्ति गन्ने मे मुख्यतौर पर उर्वरक, कार्बनिक खाद तथा जैव–उर्वरकों के माध्यम से की जाती है। उर्वरकों में सबसे अधिक यूरिया का प्रयोग होता है। कम्पोस्ट, गोबर की खाद (*एफ़वाईएम*), हरी खाद तथा जैव–उर्वरकों को कार्बनिक खाद के रूप में प्रयोग किया जाता है। हरी खाद के रूप मे सनई, ढेंचा, मूंग, उड़द, लोबिया, ग्वार का भी प्रयोग किया जा सकता हैं जिससे औसतन 30 से 150 किलोग्राम प्रति/हे. नाइट्रोजन की प्राप्ति हो जाती है। हरी खाद के प्रयोग से मृदा मे कार्बनिक/जैविक पदार्थ की मात्रा में भी वृद्धि होती है जिससे मृदा की भौतिक दशा मे सुधार होता है। अन्य श्रोतों के साथ नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाले जैव–उर्वरकों का भी प्रयोग करके नाइट्रोजन की उर्वरक पूर्ति में सीमित मात्रा मे बिना उपज के प्रभावित किए कमी की जा सकती है। कुछ तिलहनी फसलों की खली का प्रयोग भी आवश्यकतानुसार नाइट्रोजन के श्रोत के रूप मे किया जा सकता है। विभिन्न श्रोतों से प्राप्त होने वाली नाइट्रोजन की मात्रा को तालिका 1 मे दिया गया हैः

तालिका 1: खाद तथा उर्वरक के विभिन्न श्रोतों में नाइट्रोजन की प्रतिशत मात्रा

उर्वरक	नाइट्रोजन (%	खाद	नाइट्रोजन (%
यूरिया	46.0	कम्पोस्ट	0.5
अमोनियम सल्फेट	20.5	गोबर की खाद *ह्एफ़वा]एर्म्*	0.5
अमोनियम सल्फेट नाइट्रेट	26.0	*वर्मीकम्पोस्ट*	1.0
अमोनियम नाइट्रेट	33.0	मुर्गी की खाद	3.0
कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट	27.0	अरंडी की खली	4.3
कैल्शियम नाइट्रेट	15.5	महुआ की खली	2.5
अमोनियम क्लोराइड	25.0	नीम की खली	3.5
डाई–अमोनियम फास्फेट	18.0	मूँगफली की खली	7.0

अनुशंसित नाइट्रोजन की खुराक

- उत्तर भारत में गन्ने मे नाइट्रोजन की आवश्यकता लगभग 150–180 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर होती है।
- अच्छी तरह से सड़ी *एफवाईएम* खाद 10–15 टन/ हेक्टेयर या *कम्पोस्ट/प्रेसमड* 5 टन/हेक्टेयर की दर से देने की संस्तुति की जाती है।
- सल्फेटयुक्त *प्रेसमड* 4 टन/हेक्टेयर के साथ नाइट्रोजन की 75% अनुशंसित मात्रा देने से गन्ने की उपज, नाइट्रोजन की सम्पूर्ण संस्तुत मात्रा के बराबर पायी गयी है। इस प्रकार से 25% नाइट्रोजन की बचत भी हो जाती है।
- कुछ मिट्टी में नाइट्रोजन की अनुशंसित मात्रा से 25% अधिक अतिरिक्त नाइट्रोजन खुराक के प्रयोग से गन्ना उपज में वृद्धि आंकी गई है।
- इसलिए उपोष्ण क्षेत्रों में मृदा, पर्यावरण और प्रबंधन स्थितियों में व्यापक परिवर्तनशीलता के साथ बीज गन्ना को नाइट्रोजन उर्वरकों की अनुशंसित मात्रा पर 25% अतिरिक्त नाइट्रोजन की आवश्यकता होती है।

नाइट्रोजन प्रबंधन

उत्तर भारत मे गन्ने की रोपण (78%) बसंत ऋतु के मौसम में की जाती है। लेकिन कुछ क्षेत्रों में किसान गन्ने की बुवाई/रोपाई शरदकाल में भी प्रारम्भ करते हैं। इसके विपरीत कभी–कभी गन्ने का रोपण गेहूँ की फसल कटने के बाद देर से भी जाती है। रोपाई के समय के अलावा और भी विभिन्न परिस्थितियों में जैसे बुवाई का समय, मिट्टी का प्रकार, रोपाई की विधि, सिंचाई की उपलब्धता तथा मृदा की उर्वरा शक्ति के अनुसार गन्ने में दी जाने वाली नाइट्रोजन की मात्रा अलग–अलग होती है। फिर भी उपरोक्त परिस्थितियों को देखते हुए मृदा जांच के अभाव में गन्ने की फसल में उचित पैदावार हेतु गन्ने में एक निश्चित संस्तुत नाइट्रोजन की खुराक को तालिका संख्या 2 के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है।

यदि संभव हो तो नाइट्रोजन का प्रयोग मृदा जांच के अनुसार ही करना ज्यादा लाभदायक होता है। *कम्पोस्ट* या कार्बनिक खाद की उपलब्धता हो तो उसी के अनुपात मे नाइट्रोजन की मात्रा को भी संयोजित किया जा सकता है। यदि *कम्पोस्ट* या गोबर की खाद 10 टन प्रति हे॰ उपलब्ध हो तो उर्वरकों से दी जाने जाने वाली नाइट्रोजन की मात्रा में लगभग 50–75 किलोग्राम/हे. की कमी की जा सकती है। खाद तथा उर्वरक को मिलाकर देने से पौधों को नाइट्रोजन की उपलब्धता मे वृद्धि होती है जिसके फलस्वरूप नाइट्रोजन की उपयोग दक्षता में भी बढ़ोत्तरी हो जाती है।

बसंतकालीन गन्ने की खेती उपजाऊ दोमट मिट्टी मे समुचित सिंचाई व्यवस्था के साथ की जाती है तो नाइट्रोजन की सम्पूर्ण मात्रा गन्ने की रोपाई के समय कूँड़ों मे दी जा सकती है या नाइट्रोजन की आधी मात्रा गन्ने की रोपाई के समय तथा शेष मात्रा दो बराबर भागों मे बांटकर रोपाई के 45 व 90 दिन बाद गन्ने की जड़ों के पास देना लाभदायक रहता है। गन्ने की खेती बलुई दोमट मिट्टी मे की जाती है तो उस अवस्था मे नाइट्रोजन की पूरी मात्रा को तीन बराबर भागों में बाँटकर गन्ने की रोपाई के समय, अंकुरण के बाद तथा मानसून आने से पहले देना लाभदायक रहता है। *कम्पोस्ट* या गोबर की सड़ी हुई खाद को गन्ने की रोपाई के 15–20 दिन पहले खेत में डालकर अच्छी तरह से मिट्टी में मिला देना चाहिए। ध्यान रहे कि गन्ने की रोपाई के समय दी जाने वाली नाइट्रोजन को गन्ने के टुकड़ों के नीचे कूड़ों मे डालकर हल्की सी मिट्टी से ढक देना अधिक लाभदायक रहता है। शरदकालीन गन्ने के लिए नाइट्रोजन की आधी मात्रा रोपाई के समय तथा शेष भाग मार्च/अप्रैल और मई के महीने में देने से गन्ने की उपज में वृद्धि पायी गई है।

अतः इस प्रकार से गन्ने की खेती में समुचित नाइट्रोजन प्रबंधन करके प्रति इकाई क्षेत्रफल में अधिक से अधिक लाभ कमाया जा सकता है और नाइट्रोजन के अधिक प्रयोग से पर्यावरण पर होने वाले दुष्प्रभाव को कम किया जा सकता है।

तालिका 2: उपोष्णकटिबंधीय गन्ने में अनुशंसित नाइट्रोजन खुराक

क्षेत्र	रोपण का समय	नाइट्रोजन (कि.ग्रा./हे.)
उत्तर पश्चिम क्षेत्र	शरद ऋतु रोपण	180
	बसंत रोपण	150
	देर से रोपण	125
	गन्ने की पेड़ी	200
उत्तर मध्य क्षेत्र	पौध फसल	150
	गन्ने की पेड़ी	200
उत्तर पूर्वी क्षेत्र	पौध फसल	135
	गन्ने की पेड़ी	200

भाषा की सरलता, सहजता और शालीनता
अभिव्यक्ति को सार्थकता प्रदान करती है।
हिंदी ने इन पहलुओं को खूबसूरती से
समाहित किया है।

-नरेन्द्र मोदी

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

बिहार में जलभराव से गन्ने में कुप्रभाव एवं संभावनाए

संतेश्वरी, वरुचा मिश्रा, अमित मालवीय एवं आशुतोष कुमार मल्ल
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

गन्ने में जलभराव निचले भू स्तर वाले प्रदेशों के लिए एक प्रमुख समस्या है। जलभराव से गन्ने की फसल पर प्रतिकूल असर पड़ता है जो संभावित उत्पादकता तथा उत्पादन को कम करता है। जलभराव के कारण मिट्टी का भौतिक क्षरण होता है और केवल भारत में ही 116.0 लाख हेक्टेयर में क्षरण देखा गया है जिसमें 10–30% क्षेत्र गन्ने की खेती के अंतर्गत आता है। अतः हम कह सकते हैं कि जलभराव गन्ने के पैदावार में प्रमुख बाधा है। यह एक ऐसी प्राकृतिक घटना है जो गन्ने की वृद्धि को काफी कम कर देता है, फलस्वरूप गन्ने की पैदावार में 15–45 प्रतिशत की कमी आती है। जलभराव के कारण होने वाली क्षति पर्यावरण की स्थिति, पैदावार के स्तर, जल तनाव झेलने की काल–अवधि तथा गन्ने की प्रजाति पर निर्भर करती है। विषम स्थितियों से उभरने हेतु गन्ने की संरचना तथा प्रतिक्रियाओं पर गहन शोध किए जा रहे हैं। जिससे जलभराव के समय में भी उच्च पैदावार बनाए रखने के लिए रणनीति विकसित करने में मदद मिल सके। गन्ने की उचित वृद्धि के लिए इसकी जलभराव से प्रतिक्रिया, गन्ने की संरचना, अल्पावधि में जैव रसायन का प्रभाव, उपज और गुणवत्ता का अध्ययन किया गया है और कई स्थानों पर गन्नों में लंबी अवधि तक जलभराव की स्थिति पायी गयी है। शोधों व अध्ययनों के परिणामस्वरूप पता चला है कि जल तनाव न केवल पत्ती एवं तने के विस्तार अपितु किल्लों के उत्पादन को भी रोकता है। ये तना वृद्धि के अभिविन्यास में परिवर्तन का भी मुख्य कारण हैं। वायवीय जड़ें, जो बाढ़ के प्रभाव से विकसित होती हैं, आवश्यक ऑक्सीजन की आपूर्ति करके बाढ़ की स्थिति में जड़ों की गतिविधि को बनाए रखने में मदद करती है साथ ही साथ उच्च शुष्कता में भी योगदान देती है। प्रारंभिक जलभराव के दौरान, पौधों की ऊँचाई (13.0%), किल्ले (21.6%), पत्ती क्षेत्र (26.5%) और कुल जैवभार (42.5%) में कमी देखी गयी हैं। भारत में, दक्षिण पश्चिम मानसून द्वारा 73.30% वार्षिक वर्षा जून से सितंबर के दौरान हो जाती है जो बाढ़ का प्राथमिक कारण है और जलभराव की समस्या उत्पन्न करता हैं। भारत में गन्ना के मुख्य उत्पादक क्षेत्र उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक, बिहार, गुजरात, तमिलनाडु, पंजाब, आंध्र प्रदेश और उत्तराखंड हैं। इन स्थानों पर मानसून के दौरान 2–3 महीनों तक निचले क्षेत्रों में जलभराव बना रहता है। ऐसे तो गन्ना बाढ़ और पानी के प्रति काफी सहनशील है लेकिन यदि जलभराव की स्थिति लंबी अवधि तक बनी रहें तब समस्या गंभीर हो जाती है।

जल भराव के कारण गन्ने में प्रायः निम्न बदलाव देखे गए हैं:

- रंध्र बंद होना, जिसके कारण वाष्पोत्सर्जन दर कम हो जाती है।
- प्रभावी पत्ती के क्षेत्रफल में कमी हो जाने के कारण प्रकाश संश्लेषण की दर संभावित रूप से कम हो जाती है।
- जलभराव के कारण फसल की वृद्धि दर में काफी कमी हो जाती है।
- पत्तियों तथा गन्ने के अन्य भागों की तुलना में पौधे के वह भाग जो जलमग्न होते हैं, उनमें श्वसन दर उच्च हो जाती है।

जलभराव के कारण *हाइपोक्सिया* हो सकता है। यह एक ऐसी स्थिति जिसमें मिट्टी में ऑक्सीजन की कमी या पूर्ण अनुपस्थिति हो जाती है एवं जड़ श्वसन करना पूरी तरह से बंद कर देतीं है, जिससे महत्वपूर्ण उपापचय प्रभावित होता है। *हाइपोक्सिया* से प्रेरित *हार्मोन* के असंतुलन और ऑक्सीजन की कमी जलमग्न ऊतक को अपस्थानिक जड़ें विकसित करने के लिए प्रेरित करता हैं। ऐसी जड़ें हमेशा पानी के ऊपर रहती हैं जो कि संभवतः ऑक्सीजन की कमी को पूरा करने का प्रयास करती हैं। ऑक्सीजन के अभाव में, जड़ों के रेशे मर जाते हैं और अंततः जड़ें काली होकर सड़ जाती हैं तथा जड़ श्वसन बिगड़ जाता है। परिणामस्वरूप जमीन के नीचे की जड़ प्रणाली पूरी तरह से कार्य करना बंद कर देती हैं। फसल में ऑक्सीजन की कमी होने लगती हैं जिसका एक बहुत बड़ा कारण है वायवीय श्वसन का अवायवीय श्वसन में बदल जाना। जलभराव के कारण पोषक तत्वों का अवशोषण बुरी तरह प्रभावित होता है। पोषक तत्वों में कमी एवं जड़ों के अनुचित रूप से कार्य करने की वजह से पानी की बाधा उत्पन्न होने लगती है, जिसके परिणामस्वरूप सूखे की स्थिति उत्पन्न हो जाती हैं एवं पौधे की पत्तियाँ एंठ जाती हैं।

पादप *हार्मोन* प्रतिकूल वातावरण के अनुकूलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। कुछ प्रजातियां *एरेन्काइमा* बनाने में सक्षम होतीं हैं, जो *हाइपोक्सिया* जैसी स्थितियों के लिए संयंत्र प्रक्रियाओं का कामकाज करने में मदद करती है। अपस्थानिक जड़ों के निर्माण में एथिलीन की भागीदारी और गन्ने के तने में *एरेन्काइमा* का गठन इसे अच्छी तरह से आवधिक बाढ़ को सहन करने में सक्षम बनाता है। *एथिलीन* के जैविक संश्लेषण में *एसीसी सिंथेज* और *एसीसी ऑक्सीडेज* प्रमुख एंजाइम शामिल होतें हैं। वे प्रजातियाँ जिनमें अधिक प्ररोह होते हैं उनमें बाढ़ के कारण नुकसान होने की संभावना कम होती हैं। जल का उच्च स्तर गन्ने के वजन एवं इसकी उत्पादकता को प्रभावित करता हैं क्योकि प्रत्येक इंच में कमी एक टन प्रति एकड़ की दर से हानि दर्शाता हैं।

बिहार राज्य भारत के पूर्वी भाग में स्थित है। राज्य का कुल क्षेत्रफल 94,163 वर्ग किलोमीटर है। बिहार के उत्तर में नेपाल,

दक्षिण में झारखण्ड, पूर्व में पश्चिम बंगाल, और पश्चिम में उत्तर प्रदेश स्थित हैं। यह क्षेत्र गंगा नदी तथा उसकी सहायक नदियों के उपजाऊ मैदानों में बसा है। गंगा के पूर्वी मैदान में स्थित इस राज्य की औसत ऊँचाई 173 फीट है। गंगा यहाँ पश्चिम से पूरब की तरफ बहती है। यह नदी राज्य के लगभग बीचों बीच बहती है। उत्तरी बिहार मुख्य रूप से बागमती, कोसी, बूढी गंडक, गंडक, घाघरा तथा घाघरा की सहायक नदियों का समतल मैदान है। बिहार राज्य में दक्षिण दिशा से गंगा नदी में सोन, पुनपुन, फल्गू तथा किऊल सहायक नदियाँ मिलतीं हैं। हिमालय से उतरने वाली कई नदियाँ तथा जल धाराएँ बिहार राज्य से होकर प्रवाहित होती हैं और अंत में गंगा में विसर्जित होती हैं। वर्षा के दिनों में इन नदियों में बाढ़ की एक बहुत बड़ी समस्या है।

तालिका 1: केंद्रीय किस्म विमोचन समिति द्वारा जलभराव के लिए संस्तुत प्रजातियां

किस्म	उपज (टन/हे)	वाणिज्यिक शर्करा	सुक्रोज (%	पोल (%	रोग से प्रतिक्रिया एवं कीटों का प्रभाव
को 09022 (करन 12)	83.56	10.06	17.49	13.71	लाल सड़न से मध्यम सहिष्णुता
को 05009 (करन–10)'	75.89	9.16	17.44	14.25	
कोपी 05191 (प्रताप गन्ना–1)'	81.12	9.52	17.06	13.68	लाल सड़न से मध्यम सहिष्णुता
कोएच 128'	76.23	9.28	17.70	13.50	लाल सड़न से मध्यम सहिष्णुता, शीर्ष एवं प्रारम्भिक प्ररोह बेधक से प्रतिरोधी
को 0237 (करन–8)'	71.33	9.34	18.78	13.50	लाल सड़न से मध्यम सहिष्णुता
को 0124 (करन–5)	65.87	7.93	17.36	––	लाल सड़न से मध्यम सहिष्णुता, कंडुवा एवं उकठा रोग से सहिष्णुता
को 0239 (करन–6)'	79.23	10.37	18.58	14.22	लाल सड़न से मध्यम सहिष्णुता
को 0118 (करन–2)	78.20	9.88	18.45	––	
को 0238 (करन–4)'	81.08	10.37	18.58	14.74	
को 98014 (करन–1)	76.30	9.26	17.60	––	लाल सड़न से मध्यम सहिष्णुता
कोपंत 97222'	88.16	11.14	18.19	––	
को 87263 (सरयू)'''	66.32	8.04	17.40	––	लाल सड़न से मध्यम सहिष्णुता
कोपन्त 90223 (पन्त 90223)'	85.00	9.20	19.00	18.76	लाल सड़न से मध्यम सहिष्णुता
कोलख 9709	85.00		18.04	13.36	लाल सड़न से सहिष्णुता
को 0233 (कोसी)''	67.77	8.25	17.54	––	लाल सड़न से मध्यम सहिष्णुता, शीर्ष प्ररोह भेदक से प्रतिरोधकता
कोपी 06436 (कोपी 2061)''	74.45	9.18	17.35	13.85	
कोलख 94184 (बिरेन्द्र)''	75.97	9.88	17.97	13.63	लाल सड़न से मध्यम सहिष्णुता
कोसे 96436 (जलपरी)'' '	67.12	8.29	17.73	––	
को 89029 (गंडक)'' '	71.08	7.85	17.13	––	लाल सड़न से मध्यम सहिष्णुता, चोटी भेदक एवं तना छेदक प्रतिरोधी
बीओ 128 (प्रमोद)'' '	69.64	8.58	17.60	14.22	लाल सड़न से मध्यम सहिष्णुता, कंडुवा एवं उकठा सहिष्णुता, कीट प्रतिरोधी
को 87268 (मोती)'''	85.00	7.92	17.51	––	लाल सड़न से मध्यम सहिष्णुता, कंडुवा एवं रतुआ रोग से सहिष्णुता, सभी प्रमुख कीटों से प्रतिरोधी

'केंद्रीय और पश्चिमी उत्तर प्रदेश, ''उत्तर–पश्चिम क्षेत्र, विशेष रूप से मध्य पश्चिम उत्तर प्रदेश,'''पूर्वी उत्तर प्रदेश एवं बिहार,''''उत्तर मध्य, उत्तर पूर्व, पूर्वी उत्तर प्रदेश तथा बिहार

इस वर्ष बिहार में बाढ़ की वजह से गन्ने की फसल *हाईपोक्सिया* नामक क्रिया से प्रभावित होना तय है। ऐसी गन्ने की फसलें जो जलभराव के क्षेत्रों में पैदा की जाती हैं उनमें प्रायः *हाईपोक्सिया* की क्रिया का होना पाया गया हैं। इस क्रिया के फलस्वरूप पौधें की प्रत्येक आँख पर जड़ कोशिकाएं विकसित होने लगतीं हैं। आँख पर जड़ कोशिकाओं को विकसित करने में ऊर्जा की काफी खपत होती है, यही वह ऊर्जा है जिसका इस्तेमाल गन्ने की मिठास बढ़ाने में भी होता है, क्योकि ऊर्जा की खपत पहले ही आँख को विकसित करने के लिए हो जाती है इसीलिए मिठास में कम ऊर्जा ही बचती है। सीधे तौर पर हम कह सकते हैं कि कम ऊर्जा मतलब कम मिठास। *हाईपोक्सिया* का सीधा प्रभाव गन्ने की उपज एवं उसकी शर्करा पर पड़ता है। गन्ना एक ऐसी फसल है, जिसमें शर्करा बनाने के लिए जड़ एवं पत्तियों से श्वसन की क्रिया बहुत ही आवश्यक है। वैज्ञानिको ने *हाईपोक्सिया* से बचाव के लिए किसानों को संबंधित खेत में जल निकासी की व्यवस्था करने की सलाह दी है, लेकिन यह भी सत्य है कि जल भराव वाले क्षेत्र में अधिकांश किसानों के लिए यह संभव ही नहीं है। शर्करा निर्माण में ऊर्जा का कम होना या नहीं होना, जबकि शर्करा निर्माण में ऊर्जा की आवश्यकता होती है, ऊर्जा का स्थानांतरण यदि दूसरी दिशा में होता है, तो इस स्थिति में गन्ना में शर्करा की मात्रा कम हो जाती है और इसका मुख्य असर गन्ना के उत्पादन पर पड़ता है। इस वर्ष अधिकांश गन्ना किसानों को इस समस्या से जूझना पड़ेगा क्योंकि इस वर्ष बिहार में बाढ़ की स्थिति बहुत ही भयावह हैं। उत्तर बिहार में लगभग 1 लाख 59 हजार किसानों द्वारा 3,39,062 एकड़ में गन्ने की खेती की गयी है जिसमें सर्वाधिक खेती नरकटियागंज चीनी मिल क्षेत्र में लगभग 80,636 एकड़ में हुई है। सबसे कम खेती वाला क्षेत्र एचपीसीएल बायौफ्यूल्स, सुगौली के अन्तर्गत आता हैं जहाँ कुल 11,831 एकड़ में ही गन्ने की खेती हुई है। अधिकांश गन्ने के खेत में जलभराव होने के कारण यह फसल इस क्रिया से प्रभावित है। अतः केंद्रीय किस्म विमोचन समिति के माध्यम से जलभराव के लिए को 09022 (करन 12), को 05009 (करन–10), कोपी 05191 (प्रताप गन्ना–1), कोएच 128, को 0237 (करन–8), को 0124 (करन–5), को 0239 (करन–6), को 0118 (करन–2), को 0238 (करन–4), को 98014 (करन –1), कोपंत 97222, कोपन्त 90223 (पन्त 90223), कोलख 9709, को 0233 (कोसी), कोपी 06436 (कोपी 2061), कोलख 94184 (बिरेन्द्र), कोसे 96436 (जलपरी), को 89029 (गंडक), बीओ 128 (प्रमोद), को 87263 (सरयू), को 87268 (मोती) प्रजातियां संस्तुत की गयी हैं (तालिका 1)। साथ ही साथ किसानों को जलभराव सहिष्णु प्रजातियों को लगाने के अलावा शीतकालीन बुवाई करनी चाहिए जिससे यदि बाढ़ आए तब तक गन्ने की फसल 8 से 6 महीने तक की अवधि पूरी कर लें। खेतों में मजबूत मेड़ बनवानी चाहिए जिससे दूसरे खेतों से पानी न आ सकें।

आवर्ती बाढ़ और जलभराव महत्वपूर्ण अजैविक कारक हैं। इसके कारण उच्च वर्षा वाले तथा निचले क्षेत्रों में उत्पादन में कमी आ जाती है। अल्पकालिक या दीर्घकालिक बाढ़ विभिन्न उपापचयी प्रक्रियाओं जैसे प्रकाश अवरोधन, *क्लोरोफिल* वर्णक की कमी, प्रकाश संश्लेषक दर, एंजाइम गतिविधि, घुलनशील प्रोटीन सामग्री और पोषक तत्वों का अवशोषण और अंत में अंकुर और जड़ विकास को काफी कम कर देता है। हालांकि बाढ़ से प्रजातियों की सहिष्णुता, उपयोग की जाने वाली किस्मों पर मूल रूप से निर्भर करती हैं। जिस प्रजाति ने अनुकूलन विकसित कर लिया हैं वे प्रजातियाँ जलभराव की स्थिति में भी वृद्धि करती रहती हैं। अनुकूली प्रजातियों का लक्षण है अस्थायी जड़ें, जो श्वसन क्रिया के लिए ऑक्सीजन उपलब्ध कराती हैं। हालांकि बाढ़ सहिष्णु बहुत सारी प्रजातियाँ विकसित की गयी हैं फिर भी इन प्रजातियों में अभी गहन शोध की आवश्यकता है, ताकि जनक जीन स्थानांतरण द्वारा ऐसी प्रजातियाँ विकसित की जा सकें जो बाढ़ में व बाढ़ न आने, दोनों ही परिस्थितियों में अच्छी पैदावार दे सकें। यह प्रक्रिया आनुवंशिक संशोधन द्वारा भी संभव की जा रही है।

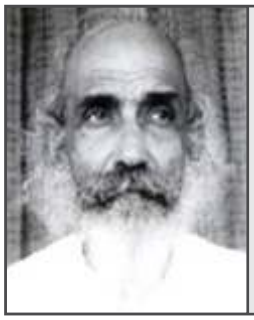

हिंदी राष्ट्रीयता के मूल को सींचती है
और उसे दृढ़ करती है।

-पुरूषोत्तम दास टंडन

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

गन्ने में *एपिरिकेनिया* से *पायरिला* पर हमला

राघवेन्द्र कुमार, आँचल सिंह एवं संगीता श्रीवास्तव
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

पायरिला परप्यूसिल्ला गन्ने का सबसे विनाशकारी पत्ते–चूसने वाला नाशी कीट है और इसे फसल में गंभीर आर्थिक *थ्रेशोल्ड* क्षति के संदर्भ में इसे महामारी के तौर पर आँका जाता है। कीट विज्ञान के अंतर्गत इसे *लोफोपिडे* परिवार तथा *हेमिप्टेरा* वर्ग के *बग* कीट में वर्गीकृत किया जाता हैं।

उपोष्ण भारत के गन्ना पारिस्थितिकी तंत्र में पाइरिला वर्ष दर वर्ष के अंतराल पर मक्का और गन्ना के अलावा बाजरा, चावल, जौ, ज्वार, जई गेहूँ तथा जंगली घास पर हमला करके इसके प्रकोप छिटपुट तथा अत्यंत गंभीर रूप से दिखाई देते हैं, जो किसान भाईयों के लिए चिंताजनक विषय है।

भारत के विभिन्न भागों (उत्तर प्रदेश, हरियाणा, पंजाब, बिहार इत्यादि) में गन्ने के बड़े पैमाने पर प्रकोप की *रिपोर्ट* समय–समय पर की जाती रही है। उत्तर प्रदेश में विगत फसल वर्ष 1934–36, 1937–38, 1947–48, 1951–53, 1968–70, 1973–74, 1976–77, 1978–79, 1985–86 और 1999 में पिरामिड महामारी दर्ज की गई हैं। वर्ष 2007 के दौरान उत्तर भारत के कई प्रान्तों के गन्ना शोध संस्थान के प्रक्षेत्र में पायरिला कीट के कुशल जैविक प्रबंधन के उद्देश्य से अपने संभावित अवयस्क (*निम्फ*) और वयस्क पायरिला कीटों के जैविक विनाश के लिए वाह्यपरजीवी मित्र कीट, *एपिरिकेनिया मेलानोलुका* (क्रमः *लेपिडोप्टेरा* तथा परिवारः *एपिपायरोपिडे*) द्वारा उत्कृष्ट सफलता अर्जित की गई हैं।

पायरिला परप्यूसिल्ला, गन्ने का सबसे विनाशकारी पत्ते–चूसने वाला नाशी कीट हैं.

पायरिला प्रकोप

पायरिला नाशी कीट के प्रकोप को बढ़ावा प्रदान करते में भारी वर्षा के बाद 75–80 प्रतिशत आर्द्रता, रुक–रुक कर सूखे की अवधि, उच्च तापमान (26–30 डिग्री सेल्सियस) और हवा की गति सबसे महत्वपूर्ण होते हैं। प्रकोप के अन्य कारकों में अतिरिक्त सघन पौध रोपण, नाइट्रोजन की अनुशंसित खुराक से अधिक का प्रयोग, खेत में जल जमाव, उच्च शर्करा युक्त गन्ना किस्मों की खेती प्रमुख हैं। बहुतायत संख्या में कीटों के झुंड पौधों की पत्तियों तथा अन्य कोमल भागों पर तेजी से आक्रमण करके पौधे का रस निकालने के लिए अपने चूसने और छेदने वाले तेज धारदार मुखांग का उपयोग करते हैं।

वयस्क और *निम्फ* पत्तियों की निचली सतह से पत्ती का रस चूसते हैं। जब पायरिला का प्रकोप अधिक होता है, तो पत्तियां पीली–सफेद हो जाती हैं और मुरझा जाती हैं। बड़ी संख्या में *हॉपर्स* द्वारा लगातार मुरझाने के कारण प्रभावित गन्ने की ऊपरी पत्तियाँ सूख जाती हैं और पार्श्व कलियाँ अंकुरित हो जाती हैं। *हॉपर* एक चिपचिपा तरल पदार्थ निकालते हैं जिसे सामान्यतः *'हनीड्यू'* के रूप में जाना जाता है। यह पदार्थ *कैपेनोडियम* प्रजातियों कवक के त्वरित विकास को सक्रियतापूर्वक बढ़ावा देता है और इसके परिणामस्वरूप पत्तियां पूरी तरह से कालिख के सांचे से ढ़क जाती हैं। इससे प्रकाश संश्लेषण प्रभावित होता है। एक रिपोर्ट के अनुसार चीनी उद्योग में लगभग 1.6 प्रतिशत यूनिट नुकसान के साथ पायरिला के कारण गन्ने की उपज में लगभग 28 प्रतिशत का नुकसान होने का अनुमान लगाया गया है।

प्रभावित गन्ने की पेराई में कठिनाई होती है। गंभीर रूप से संक्रमित गन्नों से प्राप्त रस के प्रसंस्करण के दौरान अच्छी तरह से जमाव नहीं होता है। पाइरिला संक्रमित गन्ना में मिश्रित रस में अधिक *इनवर्ट शुगर*, वाष्पीकरण करने वाले पिंडों में भारी सड़न के कारण अधिक चिपचिपाहट होती है, जो रख–रखाव में देरी से अंतिम चीनी उद्योग अथवा ग्रामीण गुड़ उत्पादन की गुणवत्ता पर असर डालती है।

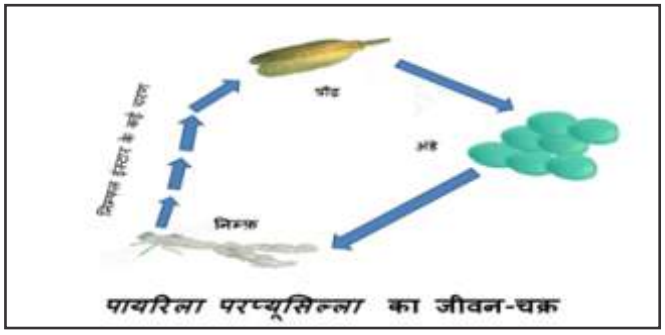

पायरिला परप्यूसिल्ला का जीवन-चक्र

पायरिला कीट प्रबंधन

पायरिला कीट का प्रबंधन निम्न प्रकार से किया जाता हैः

1. नियमित अंतराल पर सफेद रंग के फूले हुए पायरिला के अंडे अथवा गन्ने के पत्तों पर स्थित *निंफ* को *मैनुअली* हटा कर नष्ट करने से किसानों को बेहतर लाभ मिलता है। वैकल्पिक रूप से, अंडों को कपड़े की थैलियों में बंद करके रखा जाता है, ताकि नवजात निंफ को एक साथ इकठ्ठा करके वयस्क कीट को नष्ट कर दिया जाए। यह कार्य बड़े पैमाने पर करना अव्यवहारिक होता है, क्योंकि कुशल श्रमिकों के भुगतान की वजह से कृषि लागत खर्च में वृद्धि होती है।
2. कीट प्रकोप से निपटने के लिए एक आपातकालीन उपाय के रूप में तेज रसायनिक कीटनाशक, *डाइमेथोएट* 30 ईसी 0.1 प्रतिशत या *एसीफेट* 75 एसपी 0.15 प्रतिशत प्रति लीटर पानी के साथ प्रभावित खेत में छिड़काव किया जाता है। कीटनाशकों के प्रयोग करने से पहले विशेषज्ञ से समुचित सलाह अवश्य ले लेनी चाहिये।

3. यदि कीट एक नियमित प्रमुख कीट स्थिति में गन्ना प्रक्षेत्र में विद्यमान होता है, तो जैविक नियंत्रण ही सबसे कारगर रणनीति के तौर पर अपनाई जाती है, ताकि किसानों को इसके नियंत्रण का स्थायी समाधान कम खर्च में मिल पाए। एक शोध परिणाम के अनुसार 8,000 से 10,000 कोकून या 8 से 10 लाख परजीवी कीट, *एपिरिकेनिया* के अंडे प्रति हेक्टेयर की दर से विमोचित करना प्रभावी बताया गया है।

प्रकृति में *एपिरिकेनिया मेलानोलुका* का प्रदर्शन

एपिरिकेनिया का एक बड़ा लाभ यह है कि परजीवी पायरिला वयस्क मादाएं परजीवी होने के बाद अंडाणु देने में असमर्थ हो जाती हैं। पाइरिला के भारी संक्रमण के मामले में, परजीवी कीट समान्यतः एक महीने की अवधि में नाशीकीट पर पूर्ण नियंत्रण कर लेता है। इसका प्राकृतिक परजीवीकरण 69 से 94 प्रतिशत तक उच्च मान का होता है।

एपिरिकेनिया का जीवन चक्र गर्मियों में 10–13 दिन और सर्दियों में 19–22 दिन रहता है। परपोषी का लिंग, आयु और अवस्था परजीवी के लिए कोई मायने नहीं रखती क्योंकि यह शरीर के रस पर भोजन करता है। एक बार जब यह मेजबान नाशी कीट से जुड़ जाता है, तो परजीवी खुद को एक नए मेजबान में स्थानांतरित करने में असमर्थ होता है। अंतोगत्वा मेजबान की मृत्यु के परिणामस्वरूप परजीवी की मृत्यु हो जाती है। अलग होने की स्थिति में, परजीवी एक कोकून बना कर एक छोटा कीट पैदा करता है। 40 डिग्री सेल्सियस के आसपास तापमान और खेत की परिस्थितियों में सापेक्षिक आर्द्रता 50 प्रतिशत से कम होने पर पाइरिला की आबादी को काफी कम कर देता है।

27.5 से 30 डिग्री सेल्सियस तापमान, 50 से 90 प्रतिशत सापेक्षिक आर्द्रता और मेजबान की उपलब्धता (150 से 25 दिन पुराने और वयस्कों की *निंफ*) के साथ 1:3 के रूप में परजीवी अनुपात के बड़े पैमाने पर गुणन के लिए सबसे उपयुक्त संयोजन है।

कुशल जैविक प्रबंधन के उद्देश्य से पायरिला कीटों के जैविक विनाश के लिए वाह्यपरजीवी मित्र कीट, *एपिरिकेनिया मेलानोलुका* द्वारा उत्कृष्ट सफलता अर्जित की हैं.

पाइरिला के जैव–नियंत्रण प्रबंधन के लिए संस्तुतियां

1. खेतों से जल्द से जल्द परिपक्व खड़े गन्ने की कटाई और *एपिरिकेनिया* के व्यवहार्य कोकून और अंडों वाले गन्ने के पत्तों को 8–10 से.मी. आकार में *स्टेपल* करके बंद किया जा सकता है। साथ ही पाइरिला के गंभीर संक्रमण वाले फसल में पत्तियों के इन टुकड़ों को पत्तियों के नीचे भी *स्टेपल* किया जा सकता है।
2. *एपिरिकेनिया* के व्यवहार्य कोकून को पाइरिला संक्रमित क्षेत्रों में जारी किया जा सकता है।
3. इसके साथ मानसून की अवधि के दौरान पाइरिला कीट में रोग के प्रसार के लिए कीट विकारी कवक (*मेथेरिजियम एनिसोप्लाई*) से उपचारित *पैरासिटोइड्स, एपिरिकेनिया* को पाइरिला नियंत्रण हेतु प्रति हेक्टेयर के 500 वयस्कों की दर से प्रभावित खेत में छोड़ दें।
4. संक्रमण को कम करने के लिए अगस्त माह में गन्ने के सूखे पत्ते निकालें। बढ़वार गन्ने के पत्तों की सफाई से कीट प्रकोप में कमी आती हैं।
5. *एपिरिकेनिया* के खेत में स्वतः वृद्धि के लिए पारिस्थितिकी तंत्र की सूक्ष्म जलवायु को अधिक अनुकूल बनाने के लिए खेतों की सिंचाई करें।
6. सापेक्षिक आर्द्रता के ऊपर बढ़ने और तापमान में गिरावट होने के साथ *पाइरिला* कीट की आबादी में भारी कमी देखी गई है।
7. किसी भी तेज रासायनिक कीटनाशक का छिड़काव खेत में करने से बचे, क्योंकि इससे *एपिरिकेनिया* और अन्य लाभदायक मित्र जीवों के लिए हानिकारक हो सकता है।

गन्ने में पाइरिला के नियंत्रण के लिए *एपिरिकेनिया* के प्रक्षेत्र विमोचन से पर्यावरण अनुकूल और प्रभावी जैव नियंत्रण सिद्धांत बन गया।

भविष्य की संभावनाएं

पाइरिला के विरूद्ध जैव–नियंत्रण कार्यक्रम के लिए *एपिरिकेनिया* का बड़े पैमाने पर उपयोग किया गया है। इस कीट ने उच्च प्रजनन दर, तुलनात्मक रूप से कम और छोटे जीवन–चक्र, विभिन्न कृषि जलवायु परिस्थितियों में जीवित रहने, अपने मेजबान नाशी कीट की अच्छी खोज क्षमता और अपरिपक्व जीवन चरणों पर कीटनाशकों के कम से कम प्रभाव के कारण परजीवीकरण में अपनी योग्यता साबित की है।

अनुशंसित प्रबंधन रणनीति के अंतर्गत विशेष रूप से *एपिरिकेनिया* के साथ प्राकृतिक शत्रुओं के संरक्षण और संवर्द्धन के माध्यम से गन्ने में पाइरिला के नियंत्रण के लिए किए गए ठोस और सतत प्रयासों ने प्रक्षेत्र विमोचन के माध्यम से प्राकृतिक शत्रुओं के संरक्षण और संवर्द्धन से पाइरिला कीट प्रबंधन के लिए पर्यावरण–अनुकूल और सबसे प्रभावी जैव नियंत्रण सिद्धांत बन गया। नाशी संक्रमण धीरे–धीरे जून के बाद से कम हो गया और उसके बाद दूसरे फसल वर्ष में फिर से नहीं बना। साथ ही विविध प्रकार के *पैरासिटोइड्स* की आबादी में आशानुकूल वृद्धि से जैविक कृषि को बढ़ावा मिलता है।

महंगे कीटनाशक और अन्य खर्चों में कमी लाने में जैविक नियंत्रण के तरीकों से समन्वित कीट नियंत्रण काफी सस्ता साबित हो रहा है। इन दिनों *पैरासिटोइड्स* की उपस्थिति के कारण प्रायः वृहद कीटनाशक छिड़काव की सिफारिश नहीं की जाती है और इससे सामाजिक, पर्यावरणीय और पारिस्थितिक लाभ के अलावा भारी धन–राशि की बचत होती है, जो किसानों के लिए भी निश्चित रूप से लाभदायक हैं।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

इंटरनेट ऑफ थिंग्स आधारित *स्मार्ट* गन्ना कृषि

संगीता श्रीवास्तव, आँचल सिंह एवं राघवेन्द्र कुमार
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

भारतीय आर्थिक विकास पूरी तरह से कृषि पर आधारित है। गन्ना एक महत्वपूर्ण औद्योगिक फसल है जिसका उपयोग दुनिया भर में चीनी और जैवऊर्जा के लिए किया जाता है। यह अर्थव्यवस्था में प्रमुख प्रतिशत साझा करता है। कृषि के क्षेत्र में मुख्य खतरे जलवायु परिवर्तन और तापमान हैं जबकि मिट्टी के प्रकार, पोषक तत्व, फसल के प्रकार जैसे द्वितीयक खतरे भी एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। समस्याओं को हल करने के आवश्यक तरीकों में से एक है *आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (एआई)*। *सॉफ्ट कंप्यूटिंग* के क्षेत्र में कृत्रिम तंत्रिका नेटवर्क (*आर्टिफिशियल न्यूरल नेटवर्क*) ने बहुत अधिक महत्व प्राप्त कर लिया है और भविष्यवाणियां करने में इसका व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है। कृत्रिम तंत्रिका नेटवर्क (*एएनएन*), हाल ही में बहुत अधिक ध्यान आकर्षित कर रहा है क्योंकि *डेटा* के सटीक और अपूर्ण होने की स्थिति में भी जटिल समस्याओं का इलाज करने के लिए यह एक भरोसेमंद उपकरण साबित हो रहा है। विशेष रूप से, *एएनएन* मॉडल का उपयोग *इलेक्ट्रिक लोड* पूर्वानुमान, आर्थिक पूर्वानुमान, नदी प्रवाह पूर्वानुमान, कॉलेजों में प्रवेश छात्र पूर्वानुमान, अल्पकालिक भार पूर्वानुमान, अल्पकालिक बिजली की कीमत का पूर्वानुमान, *शेयर* बाजार की भविष्यवाणी, स्वचालित सेब ग्रेडिंग मॉडल विकास जैसे अनुप्रयोगों में किया गया है।

क्या है *इंटरनेट ऑफ थिंग्स*?

इंटरनेट ऑफ थिंग्स शब्द 1999 में *एमआईटी ऑटो आईडी सेंटर* के सह–संस्थापक और कार्यकारी निदेशक केविन एश्टन द्वारा गढ़ा गया था, जब वह *प्रॉक्टर एंड गैंबल* में उनके *ब्रांड मैनेजर* के रूप में एक प्रस्तुति दे रहे थे। *सिस्को इंटरनेट बिजनेस सॉल्यूशंस ग्रुप (आईबीएसजी)* के अनुसार, हालांकि यह शब्द 1999 में दिया गया था, परंतु *इंटरनेट ऑफ थिंग्स* का असली जन्म 2008 और 2009 के बीच उस समय हुआ जब बहुत सारी ''चीजें या वस्तुएं'' जैसे *स्मार्टफोन, टैबलेट, पीसी* आदि *इंटरनेट* से जुड़ने लगी। *इंटरनेट* से जुड़े उपकरणों की संख्या 2010 में बढ़ कर 12.5 बिलियन तक पहुँच गई, जबकि उस समय दुनिया की आबादी लगभग 6.8 बिलियन थी, अर्थात प्रति व्यक्ति *कनेक्टेड* उपकरणों की संख्या 1 से अधिक (1.84) थी।

इंटरनेट ऑफ थिंग्स (आईओटी) में *इलेक्ट्रॉनिक्स* से युक्त भौतिक चीजों के *नेटवर्क* का उपयोग *डेटा* संग्रह और एकत्रीकरण के लिए किया जाता है। ये प्रक्रिया *सेंसर* और *सॉफ्टवेयर* का उपयोग करके संभव हैं। सूक्ष्म पोषक तत्वों के लिए मिट्टी का *स्पेक्ट्रोस्कोपिक* परीक्षण किया जा सकता है एवं नमी सेंसर के द्वारा पानी के स्तर और सिंचाई *शेड्यूलिंग* का निर्धारण किया जा सकता है। गन्ने की उपज का पता लगाने के लिए *इंटरनेट ऑफ थिंग्स (आईओटी)* सबसे शक्तिशाली तकनीकों में से एक के रूप में सटीक प्रबंधन प्रदान कर सकता है।

कृषि में *आईओटी* के अनुप्रयोग–आवश्यकता और कार्यान्वयन

इंटरनेट ऑफ थिंग्स (आईओटी) डिवाइस हर यह वस्तु है जिसे *इंटरनेट* के माध्यम से नियंत्रित किया जा सकता है जैसे *स्मार्टवॉच* और *गूगल होम* जैसे घरेलू प्रबंधन उत्पाद। यह अनुमान है कि आज तक 30 बिलियन से अधिक उपकरणों को *इंटरनेट ऑफ थिंग्स* से जोड़ा जा चुका है। खेती में *आईओटी* के अनुप्रयोग बढ़ती मांगों को पूरा करने और उत्पादन बढ़ाने के लिए पारंपरिक कृषि कार्यों को लक्षित करते हैं। कृषि में *आईओटी रोबोट, ड्रोन, रिमोट सेंसर* और *कंप्यूटर इमेजिंग* का उपयोग करता है जो फसलों की निगरानी, सर्वेक्षण और खेतों की *मैपिंग* के लिए लगातार प्रगतिशील *मशीन लर्निंग* और विश्लेषणात्मक उपकरणों के साथ संयुक्त है और किसानों को समय और धन दोनों बचाने के लिए तर्कसंगत कृषि प्रबंधन योजनाओं के लिए *डेटा* प्रदान करता है।

आईओटी आधारित *स्मार्ट गन्ना* कृषि के संभावित योगदान

फसल की उपज की भविष्यवाणी की समस्या को हल करने के आवश्यक तरीकों में से एक है *आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (एआई)* की *मशीन लर्निंग (एमएल)* शाखा का उपयोग करना है। *मशीन लर्निंग* वह तकनीक है जहां ऐतिहासिक *डेटा* के आधार पर *इनपुट* परिवर्तनीय *डेटा* से *आउटपुट* परिवर्तनीय *डेटा* से संबंधित समस्याओं का समाधान किया जाता है। *मशीन लर्निंग एल्गोरिथम* का उपयोग करके कोई भी फसल उपज भविष्यवाणी की पहचान कर सकता है।

कृषि में चीनी उत्पादन की मात्रा का अनुमान लगाने के लिए *आईओटी* आधारित स्मार्ट कृषि एक अच्छी रणनीति है, जिसके मुख्य संभावित योगदान इस प्रकार हैं:

- गन्ने से चीनी उपज उत्पादन की मात्रा का अनुमान लगाना
- गन्ने को चीनी में बदलने की प्रक्रिया का मूल्यांकन
- गन्ने के उत्पादन और कृषि दक्षता को अधिकतम करना
- कृषि प्रबंधकों और विनिर्माण संयंत्रों के लिए *नेविगेशन* में सुधार
- मिल के उत्पादन में सुधार और वृद्धि, और समय पर निर्णय लेना।

गन्ने और चीनी की उपज की भविष्यवाणी में *आईओटी* आधारित स्मार्ट कृषि के कुछ प्रमुख पहलू निम्नलिखित हैं:

1. गन्ने की अपेक्षित उपज का अनुमान

किसी भी अन्य फसल की तरह गन्ने का उत्पादन मौसम और जलवायु की स्थिति, कृषि नीति और सामाजिक कारक जैसे बहुत से बाहरी कारकों पर निर्भर करता है, इसलिए किसी भी फसल की उपज का पूर्वानुमान लगाना एक कठिन कार्य हो जाता है। फसल की उपज की भविष्यवाणी के लिए एक समाधान *मॉडल* प्रस्तावित किया गया है जो *वेब*–आधारित है और वर्षा विशेषताओं के पिछले *डेटा* का उपयोग करता है। भारत में गन्ने की उपज की भविष्यवाणी के लिए *आर्टिफिशियल न्यूरल नेटवर्क (एएनएन)* आधारित *मॉडल* भी रहे हैं। ये *एएनएन मॉडल* भारत के पिछले 61 वर्षों (1950–2011) में गन्ना उत्पादन *डेटा* का उपयोग कर के विकसित किए गए हैं। खाद्यान्नों, फलों और कृषि माल के उत्पादन के पूर्वानुमान के लिए इस प्रकार के *एएनएन मॉडलों* का पता लगाया जा सकता है। इन परिणामों को परिष्कृत करने के लिए आनुवंशिक आधारित दृष्टिकोणों का उपयोग करने की संभावना का भी पता लगाया जा सकता है। ये मॉडल, जब कुशलता से लागू किए जाएंगे, तो भविष्यवाणी की सटीकता में वृद्धि होगी और संसाधनों का सर्वोत्तम उपयोग सुनिश्चित करके किसानों सहित हितधारकों की मदद करेगा।

2. गन्ने की वृद्धि की भविष्यवाणी

एक्सट्रीम लर्निंग मशीन (ईएलएम) और *आर्टिफिशियल न्यूरल नेटवर्क (एएनएन)* का उपयोग करते हुए मौसम संबंधी मापदंडों के आधार पर गन्ने की वृद्धि की भविष्यवाणी के लिए शोध किया गया हैं। शोध का प्रमुख उद्देश्य *ईएलएम* लागू करके फसल उत्पादन *डेटा*–संचालित के लिए तेज और सटीक मॉडल लॉन्च करना है। गन्ने के विकास के *मॉडलिंग* के आधार पर *सिस्टम फंक्शन* के तकनीकी पहलुओं दोनों में नवाचार की प्रमुख आवश्यकता है।

3. गन्ना फसल रोग की भविष्यवाणी

विभिन्न *मशीन लर्निंग एल्गोरिदम* का सटीकता के साथ उपयोग करके गन्ने की फसल और गन्ने से संबंधित रोग की भविष्यवाणी की जा सकती है। इस कार्य के लिए वैज्ञानिक *सपोर्ट वेक्टर मशीन (एसवीएम)* का उपयोग कर रहे हैं, जो अन्य *एल्गोरिदम* की तुलना में बेहतर परिणाम देता है। इससे किसान को स्थान और वर्षा के अनुसार रोग की भविष्यवाणी और रोग का विशेष समाधान सुझाया जा सकता है। साथ ही इससे मिल और किसान को उपज के आधार पर लाभ का विश्लेषण करने में मदद मिलती है।

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान लखनऊ ने डीसीएम शुगर ग्रुप के सहयोग से लोनी चीनी मिल क्षेत्र में कीटनाशक अनुप्रयोग और फसल अध्ययन के लिए ड्रोन एप्लिकेशन के माध्यम से सटीक कृषि की शुरूआत की।

4. फसल की परिपक्वता का पता लगाना

गन्ना फसल के पकने का पता लगाने के लिए *ऐप* विभिन्न छवियों का उपयोग करता है, जिस के लिए एक *स्मार्टफोन* छवि एकत्र करता है जो एक *सर्वर* छवि के साथ मेल खाता है और फिर पौधे की परिपक्वता का पता लगाता है।

आईओटी आधारित *स्मार्ट* गन्ना कृषि में भविष्य के नवाचार

थाईलैंड में गन्ने की पैदावार में सुधार के लिए *एनएसटीडीए* और *आईबीएम (एनवाईएसई: आईबीएम), मित्र फोल (थाईलैंड)* के *डोमेन* ज्ञान समर्थन के साथ दो साल के अनुसंधान सहयोग में एक *डैशबोर्ड* और *मोबाइल एप्लिकेशन* का संचालन करेंगे ताकि विशेषज्ञ फसल स्वास्थ्य, मिट्टी की नमी, कीट और रोग संक्रमण जोखिम पर अंतर्दृष्टि प्राप्त कर सकें और दुनिया के उद्योग–अग्रणी *आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, इंटरनेट ऑफ थिंग्स* और *एनालिटिक्स* क्षमताओं से मौसम *डेटा* का लाभ उठाकर अपेक्षित उपज, और वाणिज्यिक गन्ना चीनी सूचकांक का सबसे सटीक विश्लेषण कर सके। जलवायु परिवर्तन, जनसंख्या वृद्धि और खाद्य सुरक्षा चिंताओं जैसे कारकों ने उद्योग और सरकार को सबसे बड़ी चुनौतियों का समाधान करने के लिए *डेटा* और अग्रणी नवाचारों पर आधारित नए सहयोगी *मॉडल* की तलाश करने के लिए प्रेरित किया है और उद्योग तथा अनुसंधान समान सार्वजनिक निजी भागीदारी के निर्माण के लिए तत्पर है।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

चुकंदर : बीज से चीनी तक की तकनीक

मुकुन्द कुमार, आशुतोष कुमार मल्ल, वरुचा मिश्रा एवं सन्तेश्वरी
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

विश्व में लगभग 1420 लाख टन चीनी बनाई जाती है। 76 प्रतिशत कुल उत्पादित चीनी गन्ने से तैयार होती है, शेष 24 प्रतिशत चीनी चुकंदर से बनाई जाती है। चुकंदर विश्व के समशीतोष्ण देशों यूरोप और अमेरिका में उगाया जाता है। गन्ना विश्व के उष्ण कटिबंधीय देशों एशिया एवं अफ्रीका के देशों में उगाया जाता है। गन्ने में चीनी उसके तने के रस से मिलती है जबकि चुकंदर में चीनी उसकी जड़ों से प्राप्त होती है। चुकंदर से चीनी बनाना काफी किफायती होता है। परंतु वर्तमान भूमंडलीकरण दौर में विश्व बाजार की शर्तों के अनुसार अब फसल उगाने के लिए दी जाने वाली सभी अनुदान खत्म कर दिए जायेंगे तो यूरोप में चुकंदर से चीनी बनाना गन्ने से चीनी बनाने की अपेक्षा तीन गुना महँगा हो जायेगा तब विश्व में गन्ने से चीनी उत्पादन करने वाले देश ही चीनी आपूर्ति कर पायेंगे। भारत में समस्त चीनी उत्पादन केवल गन्ने से ही होता है और यहाँ पर प्रमुख चीनी उत्पादक प्रदेशों–महाराष्ट्र के अलावा कनार्टक और आन्ध्र प्रदेश में लगातार सूखे की स्थिति बने रहने के कारण गन्ना उत्पादन में कमी आई है, जिससे चीनी मिलो को पेराई के लिए भरपूर गन्ना नहीं मिल पा रहा है। कई चीनी मिलें तो बंद होने के कगार पर खडी हैं। ऐसी स्थिति में वहाँ ऐसी फसल की आवश्यकता है जिसे कम पानी में भी उगाकर उससे चीनी बनाई जा सके। इस दृष्टि से चुकंदर एक उपयुक्त फसल नजर आती है।

क्योंकि:

- गन्ने की अपेक्षा चुकंदर को 30 से 50 प्रतिशत कम पानी की आवश्यकता होती है।
- चुकंदर सूखे को सहन करने की क्षमता रखता है तथा
- चुकंदर क्षारीय भूमि में भी असानी से उगाया जा सकता है।

इन्हीं बातों को ध्यान में रखते हुए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ में एक *नेटवर्क* परियोजना प्रारंभ की गयी थी। इसके अंतर्गत देश में उष्णकटिबंधीय चुकंदर की सस्य क्रियायें विकसित की गई हैं जिससे महाराष्ट्र के अलावा अन्य राज्यों में चुकंदर की खेती की जा सके। इस परियोजना के अंतर्गत भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ (उतर प्रदेश) एवं मुक्तेश्वर (उत्तरांचल) केंद्रो पर शोध कार्य चल रहे हैं।

चुकंदर क्या है?

चुकंदर एक सफेद, पार्सनिप जैसी मूसला जड़ (*टैपरूट*) होती है। इसकी पत्तियों में प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया के माध्यम से सुक्रोज बनता है और जड़ में सुक्रोज संग्रहित होता है। इसमें लगभग 16% सुक्रोज की मात्रा होती है और एक निष्कर्षण प्रक्रिया से पौधे से चीनी को अलग करती है। गन्ने के विपरीत चुकंदर समशीतोष्ण जलवायु में उगाया जाता है इसलिए यह यूरोप और उत्तरी अमेरिका में गन्ने का अधिक लोकप्रिय विकल्प है।

चुकंदर चीनी की खोज

16वीं शताब्दी में वैज्ञानिक ओलिवियर डी सेरेस ने सबसे पहले चुकंदर के बारे में बताया। उन्होंने कहा था कि 'चुकंदर को उबालने पर चीनी की चाशनी के समान रस निकलता है, जो सिंदूर के रंग के जैसा होता है। उन्होंने जिस *बीट* का उल्लेख किया था, वह वास्तव में एक सामान्य लाल बीट है, जिसे हम लोग सर्दियों में सलाद के रूप में उपयोग करते हैं। सन 1747 में, बर्लिन के विज्ञान अकादमी में भौतिकी के प्रोफेसर एंड्रियास सिगिस्मंड मारग्राफ ने सफेद चुकंदर में चीनी की खोज की। चुकंदर से शुद्ध चीनी निकालने में सक्षम होने के बावजूद, इसका व्यवसायीकरण 1801 तक नहीं हो पाया था फिर भी उसी दौरान मारग्राफ के छात्र, फ्रांज कार्ल अचर्ड ने सिलेसिया में दुनिया का पहला चीनी चुकंदर कारखाना खोला था। अचर्ड के काम को देखकर नेपोलियन बोनापार्ट को चुकंदर से चीनी निकालने में बहुत दिलचस्पी हो गई, और अपने वैज्ञानिकों को सिलेसिया जाने और कारखाने की जांच करने के लिए नियुक्त किया। उन्होंने पेरिस के पास दो समान कारखानों का निर्माण किया। पश्चिमी यूरोप में जल्द ही नेपोलियन की चीनी योजनाओं की ओर ध्यानाकर्षण हुआ और यूरोप में चुकंदर उद्योग तेजी से विकसित हुआ। 1850 के दशक में, कई यूरोपीय देशों की सरकारों ने चुकंदर के उत्पादन पर अनुदान देने का प्रावधान किया। विशेष रूप से ग्रेट ब्रिटेन में चुकंदर चीनी उद्योग ने गन्ना चीनी उद्योग को पीछे कर दिया, हालाँकि महायुद्ध के दौरान यूरोप भर में चुकंदर के कई खेत नष्ट हो गए थे और यूरोप में गन्ने से चीनी शोधन को पुनर्जीवित किया गया था और आज तक यूरोप और उत्तरी अमेरिका में गन्ना और चुकंदर के बीच प्रतिस्पर्धा बनी हुई है।

चुकंदर की खेती

यूरोपीय देशों में चुकंदर किसानों के बीच एक लोकप्रिय फसल है क्योंकि यह एक अच्छी *रोटेशन* फसल है। मिट्टी की

गुणवत्ता बनाए रखने और कीटों और बीमारियों को रोकने के लिए, साल–दर–साल एक विशेष क्षेत्र पर उगाई जाने वाली फसल के चक्रण के लिए महत्वपूर्ण है। चुकंदर को अक्सर *ब्रेक* फसल के रूप में उपयोग किया जाता है जो कि बीच–बीच में *रोटेशन* में लगाई जाती है। यह मिट्टी को कीटों और खरपतवारों के रोकथाम में मदद करता है जो अन्य फसलों को संक्रमित करते हैं। बाद की फसल के लिए मिट्टी को शुद्ध करते हैं। कटाई की प्रक्रिया में बीट की पत्तियों को काट दिया जाता है, जिससे वे स्वाभाविक रूप से विघटित हो जाते हैं और भूमि पर महत्वपूर्ण पोषक तत्व छोड़ देते हैं। बुवाई से लेकर कटाई तक चुकंदर प्रसंस्करण के लिए तैयार होने में एक साल तक का समय लग सकता है। चुकंदर किसानों के लिए मिट्टी के प्रबंधन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। चुकंदर काफी हद तक बढ़ता है, छोटे बीज से बड़े पौधे के साथ एक बड़ी जड़ तक विकास प्रक्रिया के दौरान चुकंदर में लगने वाले रोगों एवं कीटों से रक्षा करने के लिए किसान भाई समय–समय पर निकाई–गुड़ाई एवं खरपतवारों को खेत से निकालते रहें जिससे चुकंदर की अच्छी पैदावार मिल सके।

चुकंदर प्रसंस्करण

प्रसंस्करण संयंत्र में पहुंचने पर, चुकंदर की गुणवत्ता और सुक्रोज के लिए परीक्षण किया जाता है। फिर इसे *कन्वेयर बेल्ट* पर रखा जाता है जो *बीट* को पानी के साथ परावर्तित *ड्रम* में ले जाता है, जहां गन्दगी को चुकंदर की जड़ से अलग किया जाता है और साफ किया जाता है। यह एक बहुत ही महत्वपूर्ण प्रक्रिया है क्योंकि चुकंदर जमीन में बढ़ता है और इसलिए कारखाने में आने पर गन्ने की तुलना में बहुत अधिक गन्दा होता है। चुकंदर को एक चुकंदर *वॉशर* में धोया जाता है जिससे अतिरिक्त मिट्टी साफ हो सके। स्वच्छ चुकंदर *स्लाइसरों* की ओर नीचे लुढ़कते हैं, जहां उन्हें छोटे *फ्रेंच फ्राइज* की तरह दिखने वाले *'कॉस्सेट्स'* में काट दिया जाता है तथा सतह क्षेत्र में फैल जाता है और चीनी को अधिक आसानी से निकालने में मदद करता है।

चुकंदर *स्ट्रिप्स* एक बड़े गर्म पानी के *टैंक* में जाती हैं जहां पर चुकंदर की जड़ों की कोशिका झिल्ली को तोड़ा जाता हैं, जिससे सुक्रोज को परासरण द्वारा निकाला जा सके। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि चुकंदर की जड़ों में उनके आसपास के पानी की तुलना में अधिक सुक्रोज होती है, जिससे सुक्रोज पानी में फैल जाता है। इस प्रकार एक *ब्राउन शुगर पल्प* बनता है जो एक प्रसार कक्ष में प्रवेश करता है और पानी की धारा में उन्हें चलाकर कोसेट से जितना संभव हो उतना सुक्रोज निकाल लिया जाता है। फिर, *शुगर लिक्विड* (कच्चा रस) शुद्धिकरण के लिए तैयार हो जाता है। चुकंदर से अतिरिक्त रस को निकालने के लिए गैर–शर्करा वाले गूदे को दबाया जाता है। फिर इसे *पैलेट* के रूप में सुखाया जाता है जिसे पशु आहार के रूप में उपयोग किया जाता है।

शुगर सिरप या *'रॉ जूस'* को शुद्धि प्रक्रिया में ले जाया जाता है, जहां चूने और कार्बन डाइऑक्साइड के मिश्रण को मिलाकर अशुद्धियों को दूर किया जाता है। इस प्रक्रिया *(कार्बोनेशन)* के दौरान चूने का पानी कैल्शियम कार्बोनेट का उत्पाद बनता है जो गैर–शर्करा उत्पाद का संग्रह करता है। यह सबसे अधिक अशुद्धियों को साफ करता है, क्योंकि यह चीनी के रस को छोड़ देता है। कुछ *प्रोसेसर* तरल को हटाने के लिए डी–रंग आयनिक *एक्सचेंजर्स* भी जोड़ते हैं। फिर, अवशिष्ट रस को एक *फ्रेम* या *प्लेट प्रेस* का उपयोग करके एक अन्य निस्पंदन प्रक्रिया के माध्यम में डाला जाता है। चीनी के रस को निचोड़ने के लिए अधिक दबाव बनाया जाता है जिसके परिणामस्वरूप पतला रस और ठोस अपशिष्ट प्राप्त होता है। अपशिष्ट, जिसे चूने का ठोस कहा जाता है और सभी अशुद्धियों को रखता है, फिर *फार्मलैंड* पर फैला दिया जाता है, जिससे एक और टिकाऊ उत्पाद उर्वरक बनाया जाता है। परिणामस्वरूप पतला रस प्राप्त होता है जो कच्चे रस की तुलना में अधिक शुद्ध होता है, इसमें अपेक्षाकृत कम चीनी होती है। चीनी रस को 16% से 65% तक गाढ़ा बनाने के लिए पतले रस को उबाला जाता है। *सिरप* 6 गुना ज्यादा वाष्पीकरण प्रक्रिया से गुजरता है जहां पानी उबलता रहता है। गाढ़ा रस तब तक इस प्रक्रिया से गुजारा जाता है जब तक रस का क्रिस्टलीकरण न हो जाय। क्रिस्टलीकरण प्रक्रिया में उपयोग किए जाने वाले पानी को तब तक गर्म करने और *ऑन–साइट* उपयोग करने तथा कचरे को कम करने, संसाधनों और ऊर्जा को कुशलतापूर्वक प्रबंधन के साथ उपयोग करना चाहिए। गाढ़ा रस फिर चार चरणों को क्रिस्टलीकरण प्रक्रिया से गुजरता है, जिसमें से पहला इसे एक कम तापमान पर एक अपकेंद्रित (दबाव वाले *वैक्यूम सिस्टम*) से गुजारा जाता है, जहां चीनी क्रिस्टल को जोड़ा जाता है, जिससे एक जटिल शीतलन का उपयोग करके चीनी क्रिस्टल बनने और वाष्पीकरण प्रक्रिया होती हैं। क्रिस्टल चीनी, अब एक स्थिरता के साथ मिश्रण से क्रिस्टल को तीन बार अलग करने के लिए *सेंट्रीफ्यूज* में डाल दिया जाता है। अधिक मात्रा में चीनी के *क्रिस्टल* को निकालने के बाद जो *फूड–बाय–प्रोडक्ट* रहता है, उसे चुकंदर *पैलेट* कहा जाता है, और इसका उपयोग पशु आहार या शराब बनाने के लिए किया जाता है। चीनी *क्रिस्टल* को गर्म हवा के साथ सुखाया जाता है और इकट्ठा कर लिया जाता है जिसे *पैकेट* में पैक किया जाता है और उपभोक्ताओं तक पहुंचाया जाता है जिसे हम सब खाने में उपयोग करते हैं।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

भारतीय अर्थव्यवस्था में पटसन एवं समवर्गीय रेशा फसलों का महत्व एवं प्रमुख अनुसंधान उपलब्धियाँ

मनोज कुमार त्रिपाठी[1], एस.के. पाण्डेय[2], आदित्य प्रकाश दिवेदी[1], विनय कुमार सिंह[1], अभिषेक कुमार सिंह[1] एवं एस.आर. सिंह[1]

[1]भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ
[2]भाकृअनुप–केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान, बैरकपुर

पटसन एवं समवर्गीय रेशा फसलों (मेस्ता, सनई, रेमी, सीसल तथा *फ्लैक्स*) का भारतीय अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान है जिसकी खेती मुख्य रूप से पश्चिम बंगाल, बिहार, पूर्वी उत्तर प्रदेश, असम, उड़ीसा, आन्ध्र प्रदेश तथा पूर्वोत्तर राज्यों में करीब 8.5 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में की जाती है, जो सकल कृषि क्षेत्र का 0.47 प्रतिशत है। इसकी खेती, औद्योगिक प्रसंस्करण तथा व्यवसाय से करीब 50 लाख परिवारों की जीविका प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से जुड़ी हुई है।

भारत विश्व का अग्रणी पटसन उत्पादक तथा उपभोक्ता राष्ट्र होने के साथ–साथ पटसन निर्मित वस्तुओं के निर्यात में 30 प्रतिशत तक हिस्सेदारी रखता है जिससे प्रति वर्ष ₹ 2100–2500 करोड़ की विदेशी मुद्रा अर्जित होती है जो कि साठ के दशक में लगभग 200 करोड़ के करीब था। विगत कुछ दशकों से संश्लेषित एवं मानव निर्मित सस्ती रेशों से मिल रही कड़ी प्रतिस्पर्धा ने पटसन उद्योग को काफी हद तक प्रभावित किया है। परन्तु विश्व समुदाय संश्लेषित रेशे की पर्यावरण के प्रति प्रभावी दुष्प्रभाव को भापते हुए पुनः इन प्राकृतिक रेशों के प्रति आकर्षित हो रहा हैं, जो कि पर्यावरणकूल एवं जैवविघटनशील है। विश्व बाजार में पटसन तथा पटसन–निर्मित उत्पादों की मांग उत्तरोतर बढ़ रही है जो कि पटसन कृषि के लिए एक शुभ संकेत है।

आजादी के पूर्व पटसन का 90 प्रतिशत क्षेत्र पूर्वी बंगाल, जो कि आज बंगलादेश के रूप में निरूपित है, में था जबकि 90 प्रतिशत जूट मिल पश्चिम बंगाल के हुगली नदी के किनारे स्थित थी। आजादी के उपरान्त लगभग सभी पटसन कृषि क्षेत्र भारत से पृथक हो जाने के कारण जूट उद्योगों के सामने कच्चे माल की आपूर्ति एक विकराल समस्या बनकर खड़ी हो गई। ऐसे में यह आवश्यक हो गया कि पश्चिम बंगाल एवं अन्य पूर्वी राज्यों को पटसन क्षेत्र के रूप में तब्दील किया जाए। इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु भारत सरकार ने सन् 1953 में पश्चिम बंगाल के बैरकपुर में पटसन कृषि अनुसंधान संस्थान की स्थापना की जो कालान्तर में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के नियंत्रणाधीन केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान के रूप में प्रतिस्थापित हुआ। इस संस्थान ने अपने अथक प्रयासों से स्थान विशिष्ट पटसन एवं समवर्गीय फसलों की उन्नत प्रजातियों एवं उत्पादन तकनीकों के विकास एवं प्रसार माध्यम के द्वारा भारत ने पटसन उत्पादन तथा उत्पादकता को क्रमशः तीन तथा ढ़ाई गुना तक बढ़ाने में शानदार सफलता हासिल ही नहीं की है अपितु पटसन उत्पादन एवं उपभोग में अग्रणी राष्ट्र बनने के साथ–साथ पटसन निर्मित उत्पादों के निर्यात में भी अहम भूमिका निभा रहा है जिससे पटसन कृषकों, उद्योग से जुड़े व्यक्तियों तथा व्यवसायियों के जीवन स्तर में गुणात्मक सुधार हुआ है। केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान द्वारा विकसित तमाम उन्नत प्रजातियों स्थान विशिष्ट उन्नत फसल उत्पादन एवं संरक्षण तकनीकों तथा कटाई उपरान्त उन्नत तकनीकों के विकास एवं तकनीकी हस्तान्तरण के माध्यम से ये सब कुछ सम्भव हो सका है। संस्थान की कुछ महत्वपूर्ण उपलब्धियों का संक्षिप्त विवरण निम्नवत हैः

प्रमुख अनुसंधान उपलब्धियाँ

केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के नियंत्रणाधीन एकमात्र अग्रणी संस्थान है जो भारत में पटसन एवं समवर्गीय रेशा फसलों के उत्पादन तथा उत्पादकता को बढ़ाने के उद्देश्य से इसकी उन्नत कृषि तकनीकों से संबंधित अनुसंधान एवं विकास कार्य में प्रयासरत है। ताकि कृषकों के जीवन स्तर में गुणात्मक सुधार हो सके। हरित क्रान्ति से पूर्व पश्चिम बंगाल तथा अन्य पटसन उत्पादक राज्यों में धान की खेती की तुलना में पटसन की खेती ज्यादा लाभकारी थी जिसका मुख्य कारण उस समय विकसित पटसन की जे.आर.ओ. 632 (बैशाखी) तथा सादा पटसन की जे.आर.सी.–321 प्रजातियों की खेती से प्रति इकाई क्षेत्र तथा समय में प्राप्त शुद्ध आय धान की खेती से प्राप्त शुद्ध आय की तुलना में कहीं ज्यादा थी। यही कारण था कि आजादी के बाद पश्चिम बंगाल के धान उत्पादक क्षेत्रों को पटसन उत्पादक क्षेत्रों में रूपान्तरित करके मात्र 20 वर्षो की अवधि में पटसन क्षेत्रफल को दो गुना (9.5 लाख हे.) करने में सफलता प्राप्त हुई। किन्तु सत्तर के दशक में धान की उच्च उत्पादन क्षमता वाली छोटे कद के प्रजातियों के विकास के फलस्वरूप धान की खेती पटसन की तुलना में बेहतर तथा ज्यादा लाभकारी होने के कारण पटसन क्षेत्र धान में तब्दील होने लगे क्योंकि पटसन की तत्कालीन प्रजातियों की अवधि 150–170 दिन होने के कारण दोनों में से कोई एक फसल ही ली जा सकती थी। अतः पटसन क्षेत्र को बरकरार रखने का एक मात्र उपाय यही था कि पटसन के पूर्वपक्वन रोधी प्रजातियों का विकास करके इसकी फसल अवधि को कम तथा बुआई के समय को इस प्रकार स्थापित किया जाए कि पटसन की कटाई के बाद कृषक 'अमन' धान की फसल ले सकें।

इन तथ्यों को ध्यान में रखते हुए संस्थान ने पटसन की आयातित प्रभेद *'सुडान ग्रीन'* में मौजूद पूर्वपक्वन पुष्पनरोधी जीन

पटसन की विभिन्न प्रजातियों का प्रदर्शन

को सघन संकरण के माध्यम से प्रचलित प्रजाति जे.आर.ओ.632 में स्थानान्तरित किया और परिणामस्वरूप तीन अन्य उत्पादकतायुक्त पूर्व–पक्वन पुष्पनरोधी प्रजातियों नामतः जेआरओ 878 जोआरओ 735 तथा जेआरओ 524 का विमोचन हुआ। इन प्रजातियों की अधिक उत्पादन क्षमता के साथ–साथ मात्र 120 दिनों में तैयार होने की अद्‌भुत क्षमता होने के कारण बहु–फसली कृषि प्रणाली के लिए सर्वाधिक उपयुक्त पाया गया। इस प्रकार पटसन की मार्च में बुआई सम्भव हो सकी और इसकी जुलाई में कटाई के उपरान्त अमन धान की फसल लेना भी सम्भव हो सका और देश में पटसन क्षेत्र की पुनः बढ़ोतरी होने लगी। आज संस्थान के द्वारा पटसन तथा समवर्गीय रेशा फसलों की विभिन्न कृषि जलवायु तथा क्षेत्रों के लिए अबतक 88 प्रजातियों का राष्ट्रीय स्तर पर विमोचन किया गया है। इन उन्नत प्रजातियों के विकास के फलस्वरूप देश के पटसन क्षेत्र में क्रमिक ह्रास के बावजूद भी उत्पादकता को लगभग ढ़ाई गुणा तक बढ़ाकर कुल उत्पादन स्तर में वृद्धि दर्ज की गई है। विभिन्न कृषि जलवायु तथा गुण विशिष्ट प्रजातियों का संक्षिप्त विवरण निम्नवत है:

बहु–फसलीय कृषि प्रणाली में उपयुक्त पटसन की प्रजातियाँ

पटसन के विदेशज प्रभेद 'सुडान ग्रीन' में मौजूद परिपक्वन पूर्व पुष्पनरोधी

क्षमता के सघन संकरण के द्वारा दीर्ध अवधि वाली प्रजातियों में स्थानान्तरित करके कई उन्नत एवं उच्च रेशा उत्पादक प्रजातियों का विकास किया गया है जिन्हें दशकों से पटसन कृषक अमन धान के पूर्व बहु–फसलीय कृषि प्रणाली में अपनाकर अधिकतम लाभ अर्जित कर रहे हैं। इन प्रजातियों की बुआई मार्च में करके जुलाई के मध्य तक कटाई कर सकते हैं और इसके तत्पश्चात उसी खेत में अमन धान की रोपाई की जा सकती है। पटसन की जे.आर.ओ. 504 (सूरेन), जे.आर.ओ. 524 (नवीन), जे. आर.ओ. 7835 (वासुदेव), जे.आर.ओ. 128 (सूर्या) आदि प्रमुख प्रजातियां इन बहु–फसलीय कृषि प्रणाली के लिए सर्वाधिक उपयुक्त हैं। इनमें से अधिकांश प्रजातियों की रेशा गुणवत्ता भी अत्यन्त उत्तम है। वर्ष 2005 में विमोचित पटसन की एस. 19 (सुबाला) प्रजाति की रेशा उत्पादन क्षमता 30 कु./हे. के साथ–साथ रेशा अत्यन्त महीन प्रकृति का होता है जो विशेष रूप से उत्तर बंगाल के पटसन उत्पादन क्षेत्रों में मार्च के प्रारम्भ में बुआई हेतु संस्तुत है।

विगत पांच वर्षो में पटसन की कई और प्रजातियों का विकसित किया गया है जो परिपक्वन पूर्व पुष्पनरोधी क्षमता युक्त है और इनकी संस्तुति देश के सभी पटसन कृषि क्षेत्र के लिए की गयी हैं। इनमें से जे.आर.ओ. 2003एच. (ईरा) पश्चिम बंगाल के लिए, ए.ए.यू.ओ.जे.–1 (तरूण) असम, त्रिपुरा तथा मेघालय के लिए और सी.ओ. 58 (सौरभ), जे.बी.ओ. 1 (सुधांसु), जे.आर.ओ. एम. 1 (प्रदीप) तथा जे.आर.ओ. 2407 (समाप्ति) भारत के सम्पूर्ण पटसन उत्पादक क्षेत्रों के लिए संस्तुत हैं।

सादा पटसन की अगेती एवं वृहद अनुकूली प्रजातियाँ

महीनतम रेशा के लिए प्रसिद्ध सादा पटसन की जे.आर.सी. 321 (सोनाली) तथा *हाइब्रिड* 'सी' (पदमा) प्रजातियां मार्च के प्रारम्भ में उत्तर बंगाल तथा असम के बाढ़ग्रस्त निचली भूमि में उपलब्ध मृदा नमी में भी बुआई के लिए अनुकूल पायी गयी हैं।

पटसन कृषि का भविष्य मुख्य रूप से इसके द्वारा निर्मित उत्पादों के विविधीकरण पर निर्भर है जिसके लिए पटसन रेशा की गुणवत्ता अर्थात विशेष रूप से रेशा महीनता नितान्त आवश्यक परिमाण हैं। पटसन की विकसित तमाम प्रजातियों की रेशा महीनता 16.18 डेनियर के बीच होता है जो कि गुणवत्तापरक विविध उत्पाद के निर्माण के लिए पर्याप्त नहीं है। सादा पटसन की नवीनतम प्रजाति जे.आर.सी. 532 (शशि) की रेशा महीनता

लगभग 10 डेनियर से भी कम है। विशेष रूप से रेशा गुणवत्ता के लिए विमोचित इस प्रजाति के रेशे की उत्पाद विविधीकरण क्षेत्र में व्यापक मांग है।

रोजेल मेस्ता की उन्नत प्रजातियां

रोजेल मेस्ता की कई उन्नत प्रजातियों का विमोचन विभिन्न कृषि जलवायु क्षेत्रों के लिए किया गया है। इनमें से प्रमुख रूप से एच.एस. 4288 तथा एच.एस. 7910 प्रजातियों की व्यापक खेती होती है जिनकी औसत उत्पादन क्षमता 18.23 कु./हे. है। इनके अतिरिक्त, रोजेल मेस्ता की अन्य नवीन प्रजातियां ए.एम.वी. 4 (कलिंग), ए.एम.वी. 5 (दुर्गा), जी.आर. 27 (माधुरी) तथा ए.एम.वी. 7 (जनार्दन) आदि हैं, जो आन्ध्र प्रदेश तथा अन्य मेस्ता उत्पादक क्षेत्रों में प्रमुखता से बोई जाती हैं।

केनॉफ मेस्ता की लगभग सात उन्नत प्रजातियों का विमोचन किया गया है जिनकी खेती प्रमुख रूप से ओडिशा, पश्चिम बंगाल, बिहार, असम तथा त्रिपुरा में होती है। एच.सी. 583 तथा मसी. 108 पुरानी किन्तु प्रचलित प्रजातियां हैं। विगत वर्षो में जे.बी.एम. 2004 डी (सुमित), जे.आर.एम. 3 (स्नेहा), जे.आर.एम. 5 (श्रेष्ठा), जे.बी. एम. 81 (शक्ति) तथा जे.वी.एम. 71 (शान्ति) आदि प्रजातियों को विकसित किया गया है जिनकी औसत उपज क्षमता 25.28 कु./हे. है। वर्ष 2004 के दौरान केनॉफ की एमटी 150 (निर्मल) प्रजाति का विकसित किया गया है जिसका हरित जैव भार उत्पादन क्षमता 50.60 टन/हे. के करीब है। इस प्रजाति को विशेष रूप से कागज एवं लुग्दी उद्योग के लिए अत्यन्त उपयुक्त पाया गया है।

उन्नत उत्पादन तकनीकों का विकास

एकीकृत खरपतवार प्रबंधन

संस्थान द्वारा विकसित यांत्रिक विधि (*नेल वीडर*) के माध्यम से पटसन में 70–80 प्रतिशत तक खरपतवारों का प्रभावी नियंत्रण संभव है। 20–30 प्रतिशत खरपतवारों को बुआई के 15–21 दिन पश्चात एक निराई करने से प्रभावी नियंत्रण किया जा सकता है। बुआई के 48 घंटों के दौरान ब्यूटाक्लोर 50 प्रतिशत ई.सी. या 5 जी. 1.0.1.5 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हे. अथवा प्रेटिलाक्लोर 50 ई. सी. की 0.8.0.9 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हे. के प्रयोग से फसल की प्रारंभिक अवस्था में तमाम खरपतवारों का प्रभावी प्रबंधन पाया गया हैं। इस तकनीकी का प्रयोग पटसन तथा मेस्ता जैसी फसलों में अत्यन्त प्रभावी पाया गया है। पटसन के साथ तीव्र वृद्धि वाले सहचरी फसलों जैसे लाल चौलाई, मूली तथा मूंग जैसी दलहनी फसलों की अन्तर–फसलीय खेती से भी पटसन में प्रभावी खरपतवार प्रबंधन देखा गया है।

सूखा प्रबंधन

सादा पटसन की सभी प्रजातियाँ तुलनात्मक रूप से सूखे के प्रति पटसन की अपेक्षा अधिक सहिष्णु होती है। जबकि पटसन में जे आर ओ 524 को अपेक्षाकृत अधिक सहिष्णु पाया गया है। वर्षा आधारित पटसन तथा मेस्ता फसलों में गंधक तत्व का 30 कि.ग्रा./हे. मात्रा के साथ–साथ क्रमशः 60:30 तथा 30 कि.ग्रा. हे. नाइट्रोजन, फास्फोरस एवं पोटाश उर्वरकों के प्रयोग से अप्रत्याशित रूप से रेशा उत्पादन में वृद्धि होती है तथा सूखा सहने की क्षमता भी बढ़ जाती है। पटसन की कूँड में बुआई के बाद पुआल के द्वारा *मल्विंग* करने से भी कम नमी वाले मृदा में बीजों का पर्याप्त अंकुरण होता है।

सूक्ष्मजीवी सम्मिश्रण आधारित उन्नत सड़न तकनीकी

संस्थान द्वारा विकसित सूक्ष्म पाउडर आधारित सूक्ष्मजीवी सम्मिश्रण के माध्यम से पटसन तथा मेस्ता को जमाव जल में प्रयोग करने से सड़न अवधि में 5–7 दिनों की कमी आती है तथा इस विधि से प्राप्त रेशे की गुणवत्ता में एक से दो *ग्रेड* की वृद्धि होती है। इस सूक्ष्मजीवी पाउड़र के व्यापक परीक्षण में उत्साहवर्द्धक परिणाम प्राप्त हुए हैं तथा इसके *पेटेंट* के लिए आवेदन किया जा चुका है।

रेमी का वैकल्पिक रोपण सामग्री

रेमी के व्यावसायिक खेती में गुणवत्ता रोपण सामग्री की उपलब्धता मुख्य कारकों में से एक है। प्रायः रेमी का प्रवर्धन उसके *राइजोम* के द्वारा वानस्पतिक तौर पर होता है जो पांच वर्षो के पश्चात प्राप्त होते हैं। ऐसे में वैकल्पिक रोपण सामग्री का इस्तेमाल इसके व्यावसायिक कृषि के लिए वरदान सिद्ध हो सकता है। दरअसल रेमी की कटाई के उपरान्त एक से दो फिट के तमाम तने प्राप्त होते हैं जिसका कोई आर्थिक महत्व नहीं होता है। इन बेकार तनों को इसके प्रवर्द्धन में इस्तेमाल करके इसकी खेती की जा सकती है।

पटसन एवं समवर्गीय रेशा फसलोपयोगी यंत्रों का विकास

क्रिजैफ नेल वीडरः पटसन की खेती वर्षा आधारित होने के कारण इसमें खरपतवारों का प्रभाव विशेष रूप से फसल की प्रारंभिक अवस्था में व्यापक होता है। ऐसी दशा में इन खरपतवारों का नियंत्रण एक कठिन चुनौती होता है। संस्थान ने अत्यन्त ही सरल, सहज और प्रभावी यंत्र *'क्रिजैफ नेल वीडर'* का विकास किया है जिसके द्वारा पटसन की प्रारंम्भिक अवस्था में तमाम खरपतवारों का प्रभावी प्रबंधन किया जा सकता है। इस यंत्र का व्यावसायिक उत्पादन एक निजी कम्पनी के द्वारा प्रारंम्भ हो चुका है जिसका पटसन कृषकों में व्यापक मांग है।

क्रिजैफ जूट एक्सटैक्टरः यह यंत्र पटसन के ताजा पौधों से उसके डंठल को खंडित किए बगैर हरी छाल को पृथक करने में सक्षम है। इसके माध्यम से प्रति घंटा 2.5 कि.ग्रा. सूखा रेशे के समतुल्य छाल पृथक की जा सकती है। इस प्रकार पृथक छाल को सड़ाने हेतु अत्यन्त कम जल की आवश्यकता होती है तथा इस प्रकार प्राप्त रेशे की गुणवत्ता भी बेहतर होती है।

क्रिजैफ फ्लैक्स फाइबर एक्सट्रैक्टरः अलसी से रेशे को पृथक करने के उद्देश्य से इस यंत्र को संस्थान ने विकसित किया है। यह सामान्यतया 1.0 अश्व शक्ति के मोटर से संचालित होने वाला यंत्र है जिसका वजन 130 कि.ग्रा. के करीब होता है। इस यंत्र के संचालन हेतु प्रायः दो लोगों की आवश्यकता होती है और इसकी रेशा पृथक्करण क्षमता 3.5 कि.ग्रा. रेशा प्रति घंटा है।

क्रिजैफ सीसल फाइबर एक्सट्रैक्टरः सीसल के पत्तियों से रेशा निकालने हेतु इस यंत्र का विकास किया गया है। इसके संचालन हेतु दो लोगों की आवश्यकता होती है। यह विद्युत संचालित यंत्र सामान्य अवस्था में प्रति घंटा 8 कि.ग्रा. रेशा पृथक करने में सक्षम है।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

भारतीय किसानों को आत्मनिर्भर बनाने में किसान उत्पादक संगठन की भूमिका

अजय कुमार साह एवं हिमांशु पाण्डेय

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

सदियों से खेती–किसानी को भारतीय अर्थव्यवस्था का आधार माना गया है। ग्रामीण भारत में लगभग 14.50 करोड़ कृषक परिवारों को आजीविका प्रदान करने में भारतीय कृषि महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रही है। विगत कुछ वर्षों में उत्पादन की बढ़ती लागत और कम बाजार मूल्यों के कारण किसानों को अपने उत्पादों के उचित मूल्य प्राप्त करने में बहुत सी कठिनाइयों का सामना करना पडा है। समय पर उचित मूल्य पर निवेश की उपलब्धता न होना, वैज्ञानिक जानकारी का अभाव, परिवहन सुबिधा में कमी एवं सामूहिक निर्णय इत्यादि की कमी के कारण किसानों को अपने उत्पादों को सस्ते दामों पर विक्रय करना पड़ता हैं। इस प्रकार की समस्याओं से छुटकारा दिलाने के लिए किसान उत्पादक संगठन (*एफ.पी.ओ.*) का पंजीकरण कंपनी अधिनियम 1956 के अन्तर्गत किया गया है। कृषि को बढ़ावा देने के लिए कृषि, सहकारिता तथा किसान कल्याण विभाग, भारत सरकार द्वारा वर्ष 2014 को "किसान उत्पादक संगठन" के रूप मे घोषित किया गया। किसान उत्पादक संगठन को बनाने का मुख्य उद्देश्य किसानों को सामूहिक रूप से लाभान्वित करना तथा प्रत्यक्ष रूप से व्यवसाय संचालन के माध्यम से किसानों को आय के बेहतर अवसर उपलब्ध कराना है।

किसान उत्पादक संगठन एक विशिष्ट प्रकार का समूह होता है, जो कि सदस्यता सिद्धांत के आधार पर एकजुट होकर सफलतापूर्वक कार्य करने तथा वित्तीय एवं गैर वित्तीय सेवाओं, उपयुक्त प्रौद्योगिकी पहुँचाने, उच्च मूल्य वाले बाजारों से जुडने, सामूहिक शक्ति तथा सौदेबाजी की सहायता से किसानों को लाभान्वित करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता हैं।

कृषि योग्य भूमि में लघु एवं सीमान्त किसानों का वर्चस्व लगातार देश में बढ़ता जा रहा है, तथा इनकी औसत जोत का आकार 1 हेक्टेयर से कम होने के कारण इन्हे उत्पादन करने और उत्पादन के बाद विभिन्न चुनौतियों जैसेः– उत्पादन तकनीकी तक पहुँच, उचित मूल्य पर गुणवत्तायुक्त निवेश की उपलब्धता, बीज उत्पादन, मूल्य संवर्धन, प्रसंस्करण और सबसे महत्वपूर्ण बाजार पहुँच इत्यादि का सामना करना पड़ता है। इन चुनौतियों से छुटकारा दिलाने के लिए कृषि और सहकारिता विभाग, कृषि मंत्रालय, भारत सरकार ने राज्य सरकारों के साथ साझेदारी करके वर्ष 2011–2012 में किसान उत्पादक संगठनों को बढ़ावा देने के लिए एक *पायलट* कार्यक्रम का शुभारंभ किया। जिसके अन्तर्गत मुख्य रूप से *स्माल फार्मर एग्रीबिजनेस कसोंर्शियम* (*एस.एफ.ए.सी.*) की सहायता से पूरे देश के लघु एवं सीमांत किसानों को एफ.पी.ओ. से जोड़ने का प्रावधान किया गया है। जिससे किसानों की आय को बढ़ाकर उनकी सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति को गतिशीलता प्रदान की जा सके।

वर्ष 2018–2019 में केंद्रीय वित्त मंत्री, भारत सरकार के द्वारा मुख्य रूप से दो घोषणाएं की गईं। पहली घोषणा के अन्तर्गत 100 करोड़ रूपये के वार्षिक व्यवसाय वाले किसान उत्पादक संगठन को 100 फीसदी कर कटौती के साथ कृषि प्रसंस्करण एवं प्रबन्धन के क्षेत्र में गतिशीलता प्रदान करने का प्रावधान किया जायेगा तथा दूसरी घोषणा के अनुसार अगले पाँच वर्षो में 10,000 किसान उत्पादक संगठन स्थापित करने का लक्ष्य वित्त मंत्री, भारत सरकार द्वारा रखा गया है, जिसे वर्ष 2023–24 तक पूरा किया जाएगा। जिसे पूरा करने के लिए भारत सरकार निरन्तर सार्थक प्रयास कर रही है।

किसान उत्पादक संगठन का महत्व

किसान उत्पादक संगठन भारतीय किसान बाजार के माध्यम से किसानों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति को मजबूती प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। कोरोना जैसी वैश्विक महामारी ने लगभग पूरे विश्व को अपनी गिरफ्त में जकड़

लिया था तथा भारत भी इस महामारी से अछूता नहीं रहा। उस समय किसान उत्पादक संगठन के महत्व को महसूस किया जा चुका है। किसान उत्पादक संगठन से जुड़े हुये किसान आवश्यक वस्तुओं की आपूर्ति करके अपनी महत्वपूर्ण सेवाओं से आम जनमानस को लाभान्वित करके पारिस्थितिक तंत्र में न केवल सामाजिक–आर्थिक लचीलेपन के विकास में मजबूती प्रदान की है। बल्कि, कई सतत विकास लक्ष्यों को पूरा करने में भी किसान उत्पादक संगठन ने अहम भूमिका अदा की है, जो कि निम्नलिखित हैं:

- कृषि विपणन में मध्यस्थों की एक लम्बी श्रंखला होने के कारण किसानों को उपज के मूल्य का केवल एक छोटा सा हिस्सा ही प्राप्त हो पाता है। इस विकट समस्या को दूर करने एवं बिचौलियों से किसानों को छुटकारा दिलाने के लिए भारत सरकार ने भारतीय खाद्य निगम और राज्य सरकारों को न्यूनतम समर्थन मूल्य पर खरीद कार्यों को करने के लिए *एफ.पी.ओ.* को *एजेंसी* के रूप में शामिल करने का निर्णय लिया है।
- किसान उत्पादक संगठन के माध्यम से किसानों को नयी–नयी वैज्ञानिक तकनीकों की जानकारी एवं प्रशिक्षण इत्यादि प्रदान करके किसानों की आय बढ़ाने के लिए निरन्तर प्रयास किया जा रहा है।
- किसान उत्पादक संगठन के द्वारा किसानों को सही समय पर विभिन्न प्रकार की सूचनाएँ जैसे–बुवाई का उचित समय, सिंचाई व उर्वरक देने की समयावधि, निराई व गुड़ाई, कटाई की जानकारी और बाजार से संबन्धित सूचनाएँ समय पर उपलब्ध कराके अधिकतम उत्पादन एवं आय प्राप्त कराया जा सकेगा।
- किसान उत्पादक संगठन की सहायता से किसानों को सही बाजार मूल्यों पर अपने उत्पादों को विक्रय करना सम्भव हो पाया है।
- *एफ.पी.ओ.* की सहायता से कृषि बुनियादी ढाँचे के निर्माण पर अधिक बल दिया जा रहा है। जिससे न केवल कृषि विपणन विकास प्रणाली के लिए उपयुक्त पारिस्थितिकी तंत्र का निर्माण होगा, बल्कि लघु एवं सीमांत किसानों की उपज को बेहतर मूल्यों पर विक्रय करके किसानों को लाभान्वित किया जा सकेगा।

वर्तमान में किसान उत्पादक संगठन की स्थिति

भारत सरकर ने वर्ष 2022 तक देश के किसानों की आय को दोगुना करने की परिकल्पना की है जिसे पूरा करने के लिए भारत सरकार किसान उत्पादक संगठनों की सहायता से कृषकों की आय बढ़ाने पर बल दे रही है। पिछले 8–10 वर्षों में भारत सरकार ने राज्य सरकार, *नाबार्ड* एवं अन्य संगठनों की सहायता से लगभग 6,000 किसान उत्पादक संगठनों का गठन किया गया है। जिसमें मुख्य रूप से किसान उत्पादक कंपनियाँ भी सम्मिलित है, इनमें से लगभग 3200 किसान उत्पादक संगठन का पंजीकरण कम्पनियों के रूप में हुआ है बाकी शेष संगठनों का पंजीकरण सहकारी समितियों इत्यादि के रूप में किया गया है।

किसान उत्पादक संगठन के लाभ

किसान उत्पादक संगठन के अन्तर्गत पंजीकृत किसानों को निम्नलिखित लाभ प्राप्त होते हैं:

- किसान उत्पादक संगठन के अन्तर्गत पंजीकृत किसानों को समय–समय पर वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है। साथ–साथ किसानों की समस्याओं को भी किसान उत्पादक संगठन के अन्तर्गत सदैव सर्वोपरि रखते हुए समाधान किया जाता है।
- किसान उत्पादक संगठन की सहायता से किसानों की आय को बढ़ाने में गतिशीलता लाई जा सकी है क्योंकि किसानों को बाजार की समुचित जानकारी उपलब्ध होने के कारण किसानों को अपने उत्पादों का सही मूल्य प्राप्त हो पाता है तथा इसके साथ–साथ बाजार में होने वाली लूटपाट व धोखाधड़ी जैसी समस्याओं से भी छुटकारा मिल जाता है।
- किसान उत्पादक संगठन किसानों को समय–समय पर विभिन्न प्रकार की संगोष्ठी, प्रशिक्षण इत्यादि के माध्यम से नवीनतम तकनीकों की समुचित जानकारी उपलब्ध कराता है, साथ ही किसानों को नयी तकनीकों को अपनाने में भी सहायता प्रदान करता है।
- किसान उत्पादक संगठन की सहायता से किसानों को

अच्छी गुणवत्तायुक्त बीज, खाद एवं उर्वरक तथा अकृषि उपकरण इत्यादि क्रय करने में काफी आसानी होती है तथा इसके साथ–साथ नवीनतम कृषि विधियों को अपनाकर कम से कम समय में उत्पादन एवं उत्पादकता को बढ़ाने में सफलता प्राप्त की जा सकी है।

- किसान उत्पादक संगठन के माध्यम से किसानों को उत्पाद विक्रय में सुगमता होने के साथ–साथ उत्पादों के अच्छे मूल्य भी प्राप्त हो जाते हैं जिससे किसानों की आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति को गतिशीलता प्रदान करने में सहायता मिलती है।

किसान उत्पादक संगठन द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाएँ

निवेश आपूर्ति सेवाएँ

किसान उत्पादक संगठन किसानों को कम से कम लागत पर गुणवत्तायुक्त बीज, खाद एवं उर्वरक तथा कीटनाशक इत्यादि की आपूर्ति करने में सहायता प्रदान करता है तथा कृषि उपज की विक्रय क्षमता में गतिशीलता प्रदान करने में भी सहायता प्रदान करता है जिससे किसानों को उत्पाद भंडारण क्षमता, मूल्य संवर्धन तथा *पैकेजिंग* इत्यादि करने में आसानी होती है।

बाजार सेवाएँ

किसान उत्पादक संगठन के माध्यम से किसानों को परिवहन लागत, संकट बिक्री एवं मूल्यों में उतार–चढ़ाव इत्यादि के बारे में समुचित जानकारी समय–समय पर उपलब्ध होती रहती है। जिससे किसान अपने उत्पादों को उचित मूल्यों पर बिक्रय करके अपनी उपज का समुचित लाभ प्राप्त करने में सक्षम होते हैं।

तकनीकी सेवाएँ

किसान उत्पादक संगठन तकनीकी सेवाओं के माध्यम से किसानों को कृषि उत्पादन में कौशल सुधार करने, विविध खेती को बढ़ावा देने, विपणन सूचना प्रणाली तथा ज्ञान स्तर को बढ़ाने इत्यादि के बारे में किसानों को समुचित जानकारी उपलब्ध कराता है। जिससे फसल प्रसंस्करण जैसी सर्वोतम गतिविधियों को आसानी से किसानों द्वारा अपनाया जा सके।

नेटवर्किंग सेवाएँ

नेटवर्किंग सुबिधा की सहायता से किसान उत्पादक संगठन ने किसानों को व्यापारियों से, प्रसंस्करणकर्ताओं से तथा बाजार इत्यादि से सीधा आपस में जोड़कर ग्रामीण उत्पादकों को व्यवसायिक सेवाओं के बारे समुचित जानकारी प्रदान करके बाजारो में होने वाली लूटपाट से बचाने और *डिजिटल मार्केटिंग* (*ई–नाम*) के माध्यम से विपणन कार्य करने में सफलता प्राप्त की है, जिससे परिवहन लागत के साथ–साथ समय की भी बचत करना संभव हो पाया है।

वित्तीय सेवाएँ

किसान उत्पादक संगठन को विभिन्न प्रकार की निर्धारित संस्थाओं जैसे– *नाबार्ड, एस.एफ.ए.सी.*, सरकारी विभाग, घरेलू एवं अंतर्राष्ट्रीय संस्थाएं तथा गैर सरकारी संगठनों द्वारा ऋण उपलब्ध कराया जाता है जिससे फसलोत्पादन के साथ–साथ मशीनीकरण को भी बढ़ावा दिया जा सके तथा मशीनीकरण के माध्यम से किसानों की उत्पादन क्षमता को बढ़ाने में सफलता प्राप्त की जा सके।

किसान उत्पादक संगठन की चुनौतियाँ

- कृषि क्षेत्र में गतिशीलता लाने के लिए राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक (*नाबार्ड*) द्वारा निरन्तर सहायता प्रदान की जाती है, जिससे कृषि–सेवाओं की बेहतर पहुँच, संस्थागत ऋण, विपणन सुविधाओं, कृषि कार्यों की क्षमता बढ़ाने तथा किसानों की बढ़ी हुई शुद्ध आय के संदर्भ मे किसान उत्पादक संगठन ने सकारात्मक भूमिका स्थापित की है। हालांकि, पारिस्थिकी तंत्र में *एफ.पी.ओ.* के निर्माण में कुछ महत्वपूर्ण चुनौतियों का सामना भी करना पड़ा है जो कि निम्नलिखित हैं:
- किसान उत्पादक संगठन की सफलता के लिए कृषि उपज का उचित मूल्यों पर विक्रय तथा विपणन की सुविधा प्रदान करना चुनौती है। सबसे महत्वपूर्ण *एफ.पी.ओ.* की दीर्घकालिक स्थिरिता के लिए अन्य बड़े व खुदरा बाजारों के साथ जोड़ना अति आवश्यक है।
- किसान उत्पादक संगठन के लिए साख का अभाव एक प्रमुख चुनौती है। जिसके कारण साख गारंटी योजना के लाभों का पर्याप्त उपयोग करने में *एफ.पी.ओ.* अभी भी पूर्ण रूप से सक्षम नही हैं।
- किसान उत्पादक संगठन के व्यवसायिक जोखिमों को सुरक्षा प्रदान करना एक महत्वपूर्ण चुनौती है। उत्पादन से सम्बन्धित जोखिम मौजूदा फसल बीमा, पशुधन बीमा तथा अन्य बीमा योजनाओं के अन्तर्गत आते हैं जिन्हें खराब संसाधन के साथ दर्शाया जाता है जिससे प्रारम्भ में *एफ.पी.ओ.* के अन्तर्गत पंजीकृत सदस्यों को सेवाएँ उपलब्ध कराने में आर्थिक रूप से सक्षम न होने के कारण संगठन को चलाने में समस्या उत्पन्न होती है।
- व्यवसायिक प्रबंधन में किसान उत्पादक संगठन की कमी को प्रत्यक्ष रूप से दूर करने के लिए प्रशिक्षित एवं योग्य मुख्य कार्यकारी अधिकारी तथा अन्य कार्मिकों द्वारा कुशलतापूर्वक प्रबंधित करने की आवश्यकता है। हालांकि ऐसी प्रशिक्षित जनशक्ति व्यवसायिक रूप से *एफ.पी.ओ.* का प्रबंधन करने के लिए उपलब्ध नही हैं।
- किसान उत्पादक संगठन और वैधानिक अनुपालन के गठन से संबन्धित विभिन्न अधिनियमों तथा विनियमों के बारे में कानूनी रूप से तकनीकी ज्ञान की कमी होने के कारण अधिकांश किसान लाभान्वित होने में असफल रह जाते हैं। इसके अलावा, अधिकांश वाणिज्यिक खेती के *मॉडल* में प्राथमिक उत्पादों को आमतौर पर मूल्य श्रंखला से बाहर रखा जाता है।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

भारत में पादप किस्मों के संरक्षण में चुनौतियाँ

कामिनी सिंह, लाल सिंह गंगवार, ब्रह्म प्रकाश, ओम प्रकाश, अनीता सावनानी एवं अश्विनी दत्त पाठक

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

भारत में पौधा किस्म संरक्षण और किसान अधिकार (*पीपीवीएफआर*) अधिनियम, 2001 एक अनूठी प्रणाली है, जो पौधों की किस्मों और पौधों के प्रजनकों और किसानों के अधिकारों के संरक्षण के लिए एक प्रभावी प्रणाली स्थापित करती है। यह पादप प्रजनक अधिकार (*पीबीआर*) के रूप में एक प्रजनक को उसके द्वारा विकसित पौधे की किस्म का कानूनी संरक्षण प्रदान करती है। यह बौद्धिक संपदा अधिकार प्रणाली का एक अभिन्न अंग है जो पंजीकृत किस्म के प्रजनक को उस किस्म के विकास में उल्लेखनीय योगदान के लिए विशेष अधिकार प्रदान करता है।

भारत सरकार ने *पीपीवीएफआर* अधिनियम, 2001 को *'स्यू जेनेरिस'* प्रणाली अपनाते हुए लागू किया। भारतीय विधान पौधों की नई किस्मों के संरक्षण के लिए अंर्तराष्ट्रीय यूनियन (*उपोव*), 1978 के अनुसार ही है। यह विधान पादप प्रजनक संबंधी क्रियाकलापों में वाणिज्यिक पादप प्रजनकों तथा किसानों, दोनों के योगदानों को मान्यता प्रदान करता है तथा निजी, सार्वजनिक क्षेत्रों तथा अनुसंधान संस्थाओं के साथ–साथ कम संसाधन वाले किसानों सहित सभी हितधारकों के विशिष्ट सामाजिक–आर्थिक हितों को सहायता पहुंचाते हुए *ट्रिप्स* के कार्यान्वयन का प्रावधान भी करता है। *पीपीवीएफआर* अधिनियम में *ट्रिप्स* समझौते के अंतर्गत, पंजीकृत पौधों की किस्म के लिए पंजीकरण का प्रमाण पत्र प्रदान करना है, जो प्रजनक अथवा उसके उत्तराधिकारी, उसके अभिकर्ता या अनुज्ञापत्रधारी को उत्पादन, विपणन, बाजार, वितरण, आयात या निर्यात करने का विशेष अधिकार प्रदान करती है। इस प्रकार अधिनियम के प्रावधानों को लागू करने के लिए कृषि एवं सहकारिता विभाग, कृषि मंत्रालय ने 11 नवम्बर 2005 को पौधा किस्म और कृषक अधिकार संरक्षण प्राधिकरण की स्थापना की।

पीपीवीएफआर अधिनियम, 2001 के उद्देश्य

I. पौधों की किस्मों, कृषकों और प्रजनकों के अधिकार की सुरक्षा और पौधों की नई किस्म के विकास को बढ़ावा देने हेतु प्रभावी प्रणाली की स्थापना करना

II. पौधों की नई किस्मों के विकास के लिए पादप आनुवंशिक संसाधन उपलब्ध कराना तथा किसानों द्वारा उनके संरक्षण या किसी भी प्रकार से सुधार में दिए गए योगदान के सन्दर्भ में किसानों के अधिकारों को मान्यता देना व उन्हें सुरक्षा प्रदान करना

III. देश में कृषि विकास में तेजी लाना, पादप प्रजनकों के अधिकारों की सुरक्षा करना

IV. पौधों की नई किस्मों के विकास के लिये सार्वजनिक और निजी क्षेत्र, दोनों में अनुसन्धान और विकास के लिये निवेश को प्रोत्साहित करना

V. देश के बीज उद्योग की प्रगति को सुगम बनाना जिससे किसानों को उच्च गुणवत्ता वाले बीजों तथा रोपण सामग्री की उपलब्धता सुनिश्चित हो सके।

अधिनियम में पंजीकरण योग्य पौधों की किस्मों को भी निर्धारित किया गया है जिन्हें संरक्षण के लिए पंजीकृत किया जा सकता है, जो निम्नवत हैं:

- नई किस्में
- मौजूदा किस्में
- किसानों की किस्में
- अनिवार्य रूप से व्युत्पन्न किस्म

उपरोक्त में से कोई भी प्रकार जो विशिष्टता, एकरूपता और स्थिरता (*डीयूएस*) मानदंड को पूरा करता है और जो बाजार में नया है, संरक्षण के लिए उपयुक्त है और इस अधिनियम के तहत पंजीकृत होने की अहर्ता रखता है। जैसा कि औद्योगीकरण के लिए अविष्कारिक मानदंड, जो कि पेटेंट व्यवस्था के अंतर्गत आवश्यक है किन्तु पौधे की विविधता के संरक्षण के लिए अनिवार्य नहीं है। एक पंजीकृत किस्म के लिए संरक्षण की अवधि एक पौधे से दूसरे पौधे में भिन्न होती है, जैसे कि– 1) पेड़ और लताएं किस्म के लिए पंजीकरण की तारीख से अठारह वर्षों तक, 2) केंद्र सरकार द्वारा बीज अधिनियम, 1966 के अंतर्गत मौजूदा किस्मों को अधिसूचना की तारीख से पंद्रह वर्षों तक, 3) अन्य फसलों के लिए पंजीकरण की तारीख से पंद्रह वर्ष के लिए संरक्षित रहती हैं। इसके अतिरिक्त, निम्न उल्लिखित पौधों की किस्में इस अधिनियम के तहत पंजीकृत नहीं की जा सकती, जैसे कि:

- किसी भी किस्म के पौधे के वाणिज्यिक शोषण की रोकथाम हेतु, तथा जो मानव, पशु, पौधों के जीवन, सार्वजनिक व्यवस्था, सार्वजनिक नैतिकता, पर्यावरण के लिए एवं स्वास्थ्य की रक्षा के लिए उत्तम किस्म हो।
- किस्मों में ऐसी कोई भी तकनीक (किसी भी प्रौद्योगिकी में आनुवंशिक उपयोग, प्रतिबंध प्रौद्योगिकी और *टर्मिनेटर* प्रौद्योगिकी) सम्मिलित हों और जो मनुष्य, पशुओं तथा पौधों के जीवन या स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हो।
- किस्म उस प्रजाति की हो जो केंद्र सरकार द्वारा जारी अधिसूचना में सूचीबद्ध नहीं है।

कृषक समुदायों के समक्ष चुनौतियां

इस संदर्भ में सरकार के प्रयास और उपरोक्त स्पष्टीकरण के बावजूद, कृषक समुदायों के समक्ष अभी भी कुछ शंकाएँ व्याप्त हैं जो औपचारिक बौद्धिक सम्पदा अधिकारों के लिए आवेदन करते समय कृषक समुदायों के सामने चुनौती बनकर उभरती हैं। कुछ प्रमुख चुनौतियां तथा उनके संभावित समाधान निम्नवत हैं:

राष्ट्रीय हित के साथ विधायी कानून

भारत मे विधायी प्रयासों को व्यापक जनहित के साथ आत्मसात करने की आवश्यकता है तथा संसद में राष्ट्रीय स्वार्थ को प्रतिबिंबित करने वाले विधेयक को लागू करने से पहले वर्तमान परिवेश में भारतीय किसानों की सामाजिक–जनसांख्यिकीय, आर्थिक स्थिति, कृषकों के पारंपरिक खेती करने के तरीके पर विचार करते हुए और राष्ट्रीय हितों का पालन करते हुए मौजूदा कानून को संशोधित करना चाहिए जिसके लिए अत्यंत व्यापक जनभागीदारी की आवश्यकता होगी।

विविधता पंजीकरण के लिए सुगम औपचारिकताएं

किस्म का पंजीकरण करते समय एक आवेदक के सामने सबसे बड़ी चुनौती अनौपचारिक प्रजनन द्वारा विकसित किसी नई किस्म के लिए होती है। जैसे कि पौधा किस्म और कृषक अधिकार के फार्म संख्या 1 मे औपचारिक प्रजनन तकनीक द्वारा विकसित नई किस्म के पंजीकरण के लिए आवश्यक जानकारी मांगी गई है जिसको किसान को भी प्रदान करना अनिवार्य है, परंतु एक आवेदक जो अनौपचारिक प्रजनन के द्वारा एक नई किस्म का पंजीकरण करना चाहता है, उसे तकनीकी विवरण (प्रयोगशाला परीक्षण/क्षेत्र परीक्षण की सूचना), *डीयूएस* मानदंड का निर्धारण आदि जैसी जानकारी भी प्रस्तुत करनी होती है। इसका तात्पर्य यह है कि अनौपचारिक प्रजनन के द्वारा किसानों द्वारा विकसित किसी नई किस्म के लिए भी सभी तकनीकी जानकारी को प्रस्तुत करना नितांत आवश्यक होता है जो कि उनके लिए एक अत्यंत मुश्किल कार्य सिद्ध होता है। अतः कृषक समुदायों द्वारा औपचारिक प्रजनन के समकक्ष अनौपचारिक प्रजनन को बढ़ावा देने के लिए, सरकार को अनौपचारिक प्रजनन द्वारा पैदा की गई नई किसान किस्मों के परीक्षण और पंजीकरण के लिए विभिन्न मानदंडों को सरल करना चाहिए।

किसानों में शिक्षा और जागरूकता की कमी

किसानों को किस्म के पंजीकरण की सुचारु जानकारी जैसे कि तकनीकी विवरण (प्रयोगशाला परीक्षण/क्षेत्र परीक्षण), *डीयूएस* मानदंड के बारे मे बताना बेहद जरूरी है। लेकिन क्षेत्रीय भाषाओं और बोलियों के भेद की वजह से किसानों से संपर्क करना आसान नहीं है, और इस वजह से किसानों का रवैया बहुत उत्साहजनक नहीं होता। किसानों के लिए भी यह बड़ी मुश्किल है कि वे अपनी पंजीकरण से संबन्धित आवश्यक दस्तावेज़ो के बारे में सीधे पंजीकरण संस्था से संपर्क करें।

बौद्धिक संपदा अधिकारों हेतु प्रोत्साहन

अधिनियम की धारा 39 (1) (iv) के अंतर्गत कृषि उपज में वृद्धि करने हेतु किसानों को पंजीकृत नई किस्म को उपयोग करने, बोने, फिर से बोने, विनिमय करने, साझा करने या बेचने का अधिकार है। इसलिए, एक बार जब यह पंजीकृत बीज किसानों द्वारा व्यावसायिक खेती के लिए जारी कर दिया जाता है तो किसानों के लिए यह संभव होगा कि वे इसे अगले सत्र के लिए अपनी कृषि की उपज से बीजों को बचा सकेंगे तथा पुनः प्रयोग कर सकेंगे तथा उन्हें इन बीजों को वापस नहीं करना पड़ेगा, परंतु किसान द्वारा पंजीकृत किस्म के लिए आर्थिक प्रोत्साहन बहुत ही सीमित है। पंजीकृत किस्मों के लिए प्रोत्साहन के रूप में औपचारिक बौद्धिक सम्पदा अधिकारों के दृष्टिकोण और कृषक समुदायों द्वारा पारंपरिक प्रजनन प्रथाओं को बढ़ावा देने और बनाए रखने के दृष्टिकोण पर पुनः गंभीरता से विचार करना महत्वपूर्ण है।

हिंदी जैसी सरल भाषा दूसरी नहीं है।
-मौलाना हसरत मोहानी

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

जायद की फसलों में उर्वरक प्रबंधन

मोना नगरगड़े[1], विशाल त्यागी[2], दिलीप कुमार[1] एवं प्रीति सिंह[3]
[1]भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ
[2]भाकृअनुप–भारतीय बीज अनुसन्धान संस्थान, मऊ
[3]भाकृअनुप–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, हज़ारीबाग़

जायद की फसलों को मुख्यतः खरीफ और रबी की फसलों के बीच कम अवधि में गर्मी के मौसम में मार्च से जून तक उगाया जाता है। जायद की फसलों को विकास के लिए गर्म एवं शुष्क मौसम की आवश्यकता होती है तथा फूलने और फलने के लिए लम्बी अवधि वाले दिनों की आवश्यकता होती है। जायद की मुख्य फसलों में मार्च के महीने के दौरान बोई जाने वाली पारंपरिक ग्रीष्मकालीन फसलें जैसे, मक्का, ककड़ी, खरबूजा, मिर्च, मूंग और मेंथा शामिल हैं जिनका उत्पादन जून के महीने तक प्राप्त किया जाता है। इन सभी फसलों से अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए पोषक तत्वों का उचित प्रबंधन अति आवश्यक है। जायद की फसलों में पोषक तत्व प्रबंधन से तात्पर्य सभी पोषक स्रोतों– उर्वरकों, जैविक खाद, अपशिष्ट पदार्थों का पुनर्चक्रण, मिट्टी की भंडारण क्षमता का उपयोग, जैविक नत्रजन स्थिरीकरण और जैव उर्वरक का उचित प्रयोग करना जिससे पर्यावरण में पोषक तत्वों का नुकसान कम से कम हो तथा मिट्टी की उर्वरता और फसल उत्पादकता बनी रहे। इन सभी फसलों में उर्वरकों को उचित मात्रा में प्रयोग करने के लिए मृदा जांच कराना अति आवश्यक है। जायद का मौसम खरीफ फसल हेतु मृदा नमूने एकत्रित कर विश्लेषित कराने का सर्वोत्तम समय है। मुख्य रूप से धान–गेहूँ का फसल चक्र अपनाने तथा असंतुलित पोषक तत्वों के प्रयोग से भूमि की उर्वरा शक्ति धीरे–धीरे कम होती जा रही है। ऐसे क्षेत्रों में गेहूँ की फसल कटाई के बाद यदि सिंचाई सुविधा उपलब्ध है तो हरी खाद हेतु ढैंचा की बुवाई भी की जा सकती है। जायद फसल मुख्यतः मूँग–उर्द को एक प्रकार से हरी खाद के रूप मे की इनकी फलियां तोड़ने के बाद इन फसलों को भी पलट कर हरी खाद के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। सामान्यतः उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण की संस्तुतियों के अनुसार किया जाना चाहिए फसलों में उर्वरकों की मात्रा निम्नलिखित बिन्दुओं को ध्यान में रखते हुए भी निर्धारित की जा सकती है:

पोषक तत्व प्रबंधन

- उच्च उर्वरक उपयोग दक्षता प्राप्त करने के लिए, सही उर्वरक की सही मात्रा सही समय पर सही विधि से उपयोग की जानी चाहिए।
- पौधो के द्वारा उपयोग किये गए पोषक तत्वों को मिट्टी में पुनः स्थापित करके मिट्टी की उर्वरकता बनाए रखना चाहिए। जैविक कार्बन के स्तर को बनाए रखा जाना चाहिए और बढ़ाया जाना चाहिए।
- मिट्टी की भौतिक स्थितियों को यथा सम्भव बनाए रखा जाना चाहिए और अधिक से अधिक उन्नत किया जाना चाहिए।
- मृदा अपरदन के कारण भूमि की गिरावट को नियंत्रित किया जाना चाहिए।

मक्का

अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए, सामान्य पोषक तत्वों की मिट्टी की आपूर्ति क्षमता और पौधों की मांग के अनुरूप होना चाहिए। फसलों में आवश्यक पोषक तत्वों की कमी से उपज, गुणवत्ता किसान को मिलने वाला मुनाफा कम हो जाता है। बिना किसी भी स्पष्ट लक्षण के दिखाई पड़ने से पहले प्रमुख पोषक तत्वों की कमी से लगभग 10–30% उपज कम हो सकती है। मक्का की उच्च आर्थिक उपज के लिए, 10 टन सड़ी गोबर की खाद/कम्पोस्ट प्रति हेक्टेयर, बुवाई से 10–15 दिन पहले, 125–150 कि.ग्रा. नत्रजन, 60 कि.ग्रा. फास्फोरस, 40 कि.ग्रा. पोटैशियम तथा 25 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति हेक्टेयर की दर से उपयोग किया जाना चाहिए। भुट्टे के लिए नत्रजन की आधी और फास्फोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के समय देनी चाहिए। नत्रजन की बची हुई मात्रा बुवाई के 30 दिन बाद देना चाहिए। फास्फोरस उर्वरक के साथ जिंक सल्फेट को मिलाकर प्रयोग कदापि न करें। प्रायः यह देखा गया है कि जिस मिट्टी में जस्ते की कमी होती है, वहां पर पत्ती की मध्य धारी के दोनों तरफ सफेद धारियां दिखाई देने के साथ–साथ पूरी पत्ती सफ़ेद दिखाई पड़ने लगती है। इस कमी को दूर करने के लिए 20 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति हे. की दर से अन्तिम जुताई के साथ मिट्टी में मिला देना चाहिए।

ककड़ी

ककड़ी पोषक तत्वों की दृष्टि से बहुत ही संवेदनशील फसल है। इस फसल में पोषक तत्वों की मांग फल बनते समय सबसे अधिक होती है। ककड़ी के बेहतर उत्पादन के लिए 20 टन गोबर की सड़ी खाद बुवाई के एक सप्ताह या अंतिम जुताई के समय अच्छी तरह से मिला देना चाहिए। रसायनिक उर्वरकों में नत्रजन 70–80 कि.ग्रा., फास्फोरस 50–60 कि. ग्रा. एवं पोटाश 50 कि.ग्रा., प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए। नत्रजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के समय नालियों में अच्छी तरह से मिला देना चाहिए। नत्रजन की बाकी आधी बची हुई मात्रा बुवाई के 30 दिन बाद खड़ी फसल में नालियों के सहारे *टॉप ड्रेसिंग* के रूप में प्रयोग करना चाहिए।

खरबूजा

खरबूजे की खेती से अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए लगभग 90–100 कि.ग्रा. नत्रजन, 70 कि.ग्रा., तथा 50–60 कि. ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से आवश्यकता पड़ती है। उपरोक्त उर्वरकों में नत्रजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा खेत में नालियाँ बनाते समय देना चाहिए। नत्रजन की शेष बची हुई मात्रा को दो बराबर भागों में बांटकर बुवाई के 20–25 एवं 45 दिन बाद खड़ी फसल में देना चाहिए। अच्छी फसल उत्पादन के सूक्ष्म पोषक तत्वों का प्रयोग भी वांछनीय है।

मिर्च

सामान्य ढंग से मिर्च की फसल में खाद और उर्वरकों के विवेकपूर्ण अनुप्रयोग की आवश्यकता होती है क्योंकि यह अधिक समय तक खेत में खड़ी रहने वाली फसल है। अच्छी उपज एवं लंबे समय तक पोषक तत्वों की उपलब्धता बनाए रखने के लिए गोबर की सड़ी हुई खाद/कम्पोस्ट 20 टन/हेक्टेयर या हरी खाद की फसल उगाने एवं अच्छी तरह से पलटने/मिट्टी में मिलाने से उपज में वृद्धि होती है। इस प्रकार 100 कि.ग्रा. नत्रजन, 50 कि.ग्रा. फास्फोरस 60 किग्रा पोटाश/हे. की दर से प्रयोग करना चाहिए। गोबर की सड़ी हुई खाद/कम्पोस्ट, फास्फोरस और आधे नत्रजन तथा पोटाश को रोपाई से पहले मिट्टी में अच्छी तरह से मिला देना चाहिए। नत्रजन और पोटाश की शेष खुराक रोपाई के बाद 40–45 दिन बाद तथा दूसरा 75–80 दिन बाद समान मात्रा में खड़ी फसल में प्रयोग करना लाभदायक रहता है।

मूंग

ग्रीष्मकालीन मूँग की बुआई आलू की खुदाई के बाद उत्तम रहती है। मूंग को भी फास्फोरस, पोटैशियम और कुछ सूक्ष्म पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। सामान्यतः मिट्टी परीक्षण के आधार पर उर्वरकों का उपयोग करने की सलाह दी जाती है। अच्छी उपज प्राप्ति हेतु यदि उपलब्ध हो तो 8–10 टन कम्पोस्ट या गोबर की सड़ी हुई खाद बुवाई के 15 दिन पहले मिट्टी में अच्छी तरह से मिला देना चाहिए। बुवाई के समय 15–20 कि.ग्रा. नत्रजन, 30–40 कि.ग्रा. फास्फोरस प्रति हेक्टेयर की दर से आवश्यकता पड़ती है। यदि उपरोक्त उर्वरकों की उपलब्धता नही है तो आमतौर पर 100 कि.ग्रा. डीएपी/हेक्टेयर से प्रयोग पर्याप्त होता है। उर्वरक का प्रयोग बुवाई के समय इस तरह से करना चाहिए कि उर्वरक बीज से 2–3 सें.मी. नीचे चला जाए। सुपर फास्फेट का प्रयोग *बेसल ड्रेसिंग* एवं बुवाई के समय करने पर अधिक लाभदायक रहता है। बीजोपचार *राइजोबियम कल्चर* एवं *पी.एस.बी.* से अवश्य करें। यदि *राइजोबियम कल्चर* का प्रयोग मृदा में करना हो तो उसके लिये मृदा में नमी की उचित मात्रा आवश्यक है।

मेंथा

मेंथा की फसल से अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए नत्रजन की मात्रा 120 कि.ग्रा., फास्फोरस 60 कि.ग्रा. और पोटैशियम 40 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना उचित रहता है। पौध रोपण के समय लगभग 20 टन अच्छी तरह से गोबर की सड़ी हुई खाद को अंतिम जुताई के समय मिट्टी में अच्छी तरह से मिला देना चाहिए। नत्रजन के 1/5 वें हिस्से के साथ फास्फोरस और पोटैशियम की पूरी मात्रा को रोपाई के समय मिट्टी के साथ अच्छी तरह से मिला देना चाहिए। शेष 4/5 वीं नत्रजन को समान रूप से विभाजित करके दो बार खड़ी फसल में *टॉप ड्रेसिंग* के रूप में रोपण के बाद 30 और 60 दिनों में दो विभाजित खुराकों में और इसी तरह की मात्रा में 25 दिनों और 45 दिनों की फसल पर दिया जाना चाहिए। सामान्य परिस्थितियों में मेंथा की अच्छी उपज के लिए 20 कि.ग्रा. गंधक प्रति हे. की दर से प्रयोग करना चाहिए।

सूरजमुखी

सामान्यतः उर्वरक का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करना चाहिए। मिट्टी परीक्षण न होने की दशा में संकुल में 80 कि.ग्रा., संकर में 100 कि.ग्रा. नत्रजन, 60 कि.ग्रा. फास्फोरस एवं 40 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टर की दर से प्रयोग किया जाना चाहिए। नत्रजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के समय कूँडों में प्रयोग करना चाहिये। नत्रजन की शेष मात्रा बुवाई एवं पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के समय लाइनों के सहारे प्रयोग करना चाहिए। नत्रजन की शेष मात्रा बुवाई के 25–30 दिन बाद खड़ी फसल में *टाप ड्रेसिंग* के रूप में देनी चाहिए। सूरजमुखी की बुवाई यदि आलू की खुदाई के बाद बुवाई की जा रही हो तो उर्वरकों की मात्रा 25 प्रतिशत तक कम की जा सकती हैं। इसकी खेती में संस्तुत पोषक तत्वों की मात्रा में 200 कि.ग्रा. जिप्सम प्रति हेक्टेयर का प्रयोग बुवाई के समय अवश्य करना चाहिए। इसकी खेती में 3 से 4 टन गोबर की कम्पोस्ट खाद प्रति हेक्टेयर का प्रयोग लाभप्रद पाया गया है। सूरजमुखी के अच्छे उत्पादन के लिए कम्पोस्ट खाद 5 से 10 टन/हे. की दर से बुवाई के पूर्व अंतिम जुताई के समय खेत में अच्छी तरह से मिला देना चाहिए।

बाजरा

उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण से प्राप्त संस्तुतियों के आधार पर करें। मृदा परीक्षण की सुविधा उपलब्ध न होने की दशा में संकुल प्रजातियों के लिए नत्रजन 60 कि.ग्रा., फास्फोरस 40 कि.ग्रा. तथा पोटाश 40 कि.ग्रा. तथा संकर प्रजातियों के लिए 80 कि.ग्रा. नत्रजन, 40 कि.ग्रा. फास्फोरस तथा 40 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हे. की दर से प्रयोग करना उचित रहता है। फास्फोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा तथा नत्रजन की आधी मात्रा *बेसल ड्रेसिंग* के रूप में बुवाई के समय तथा नत्रजन की आधी मात्रा खड़ी फसल में *टॉप ड्रेसिंग* के रूप में बुवाई के 20–25 दिन बाद खेत में पर्याप्त नमी होने पर प्रयोग करनी चाहिए। अच्छी उपज प्राप्त करने के 5 टन गोबर की सड़ी खाद प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करने पर मृदा का स्वास्थ्य भी सही रहता है एवं उपज भी अधिक प्राप्त होती है। बीज को नत्रजन जैव उर्वरक–*एजोस्पाइरिलयम* तथा फास्फोरस जैव उर्वरक–फास्फेटिका द्वारा उपचारित कर बोने से भूमि के स्वास्थ्य में सुधार होता है तथा उपज भी अधिक मिलती है। आलू खुदाई के उपरांत बाजरा की बुवाई करने पर उर्वरकों की मात्रा को 25 प्रतिशत तक कम किया

जा सकता है।

उपर्यक्त फसलानुसार पोषक तत्व प्रबंधन के अलावा जैविक खाद एवं जैव उर्वरकों का पोषक तत्व प्रबंधन में महत्व निम्नानुसार प्रस्तुत किया गया है जिससे कि रसायनिक खाद पर फसल उत्पादन की निर्भरता को कम किया जा सके।

जैविक खाद

गत दशकों में आत्मनिर्भरता की स्थिति तक कृषि की वृद्धि में उन्नत किस्म के बीजों, उर्वरकों, सिंचाई जल एवं पौध संरक्षण का उल्लेखनीय योगदान है। फसलों द्वारा भूमि से उपभोग किए जाने वाले प्राथमिक मुख्य पोषक तत्वों–नत्रजन, सुपर फास्फेट एवं पोटाश में से नत्रजन का सर्वाधिक अवशोषण होता है, क्योंकि पौधों को इस तत्व की सबसे अधिक आवश्यकता होती है। चूँकि भूमि में डाले गये नत्रजन का 40–50 प्रतिशत ही फसल उपयोग कर पाती हैं और शेष 50–60 प्रतिशत भाग या तो पानी के साथ बह जाता है या तो *डिनाइट्रीफिकेशन* प्रक्रिया वायुमंडल में मिल जाता है या जमीन में ही अस्थायी अनुपलब्ध हो जाते हैं। अतः नत्रजनधारी उर्वरक के एक–एक दाने का उपयोग मितव्ययता एवं सावधानी से करना आज की अनिवार्य आवश्यकता हो गई है। फसलों की नत्रजन आवश्यकता की पूर्ति के लिए पूर्णरूप से रसायनिक उर्वरकों पर निर्भर रहना वर्तमान परिदृश्य को देखते हुए तर्कसंगत नहीं है। वर्तमान परिस्थितियों में नत्रजनधारी उर्वरकों के साथ–साथ नत्रजन के वैकल्पिक श्रोतों का उपयोग न केवल आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है बल्कि मृदा की उर्वराशक्ति को बनाए रखने के लिए आवश्यक है। ऐसी स्थिति में जैव उर्वरकों एवं सान्द्रिय पदार्थों के एकीकृत उपयोग की नत्रजन उर्वरक के रूप में करने की अनुशंसा की गई है।

राइज़ोबियम कल्चर

जैव उर्वरकों में सर्वप्रथम *राइज़ोबियम* कल्चर का प्रयोग प्रमुख है। इसका प्रयोग निम्नवत तरीके से किया जाना चाहिए। 200 ग्राम *राइज़ोबियम* कल्चर से 10 कि.ग्रा. बीज उपचारित कर सकते हैं। 200 ग्राम के *राइज़ोबियम* कल्चर के पैकेट को लेकर लगभग 500 मि.ली. पानी में डालकर 50 ग्राम गुड़ के साथ अच्छी प्रकार घोल बना लें। बीजों को किसी साफ सतह पर इकट्ठा कर जैव उर्वरक के घोल को बीजों पर धीरे–धीरे डालें और हाथ से अच्छी तरह से मिलाते रहें, जब तक कि सभी बीजों पर जैव उर्वरक की समान परत न बन जाए। अब उपचारित बीजों को किसी छायादार स्थान पर फैलाकर 10–15 मिनट तक सुखा लें और तुरन्त बो दें।

राइजोबियम जीवाणु के प्रयोग से लाभ निम्नवत हैं:

- इसके प्रयोग से 10 से 30 कि.ग्रा. रासायनिक नत्रजन की बचत होती है।
- इसके प्रयोग से फसल की उपज में लगभग 15 से 20 प्रतिशत की वृद्धि होती है।
- *राइज़ोबियम* जीवाणु कुछ पादप हार्मोन एवं विटामिन भी बनाने में मदद करते हैं, जिससे पौधों की बढ़वार एवं जड़ों का विकास अच्छा होता है।

फास्फेट सालूब्लाइंजिंग बैक्टीरिया (पी.एस.बी.)

दलहनी फसलों से उपयुक्त उत्पादन प्राप्त करने के लिए फास्फोरस पोषक तत्व अत्यधिक महत्वपूर्ण है। रसायनिक उर्वरकों से दिये जाने वाले फास्फोरस पोषक तत्व का काफी भाग भूमि में अनुपलब्ध अवस्था में परिवर्तित हो जाता है। परिणामतः फास्फोरस की उपलब्धता में कमी के कारण इन फसलों की पैदावार पर प्रतिकूल प्रभाव पडता है। भूमि में अनुपलब्ध फास्फोरस को उपलब्ध दशा में परिवर्तित करने के लिए *फास्फेट सालूब्लाइंजिंग बैक्टीरियां (पी.एस.बी.)* का *कल्चर* बहुत ही सहायक होता है। इसलियें आवश्यक है कि नत्रजन की पूर्ति हेतु *राइजोबियम कल्चर* के साथ साथ फास्फोरस की उपलब्धता बढ़ाने के लिये *पी.एस.बी.* का भी प्रयोग किया जाना अति आवश्यक है। *पी.एस.बी.* प्रयोग विधि एवं मात्रा *राइजोबियम कल्चर* के एक समान ही होती है।

खाद एवं उर्वरकों को खेत में देने का समय

- फास्फेटिक एवं पोटाशिक उर्वरकों की पूरी मात्रा बुवाई के समय ही खेत में डालनी चाहिए।
- नत्रजन युक्त उर्वरकों को फसलावधि के अनुसार फसल के वृद्धिकाल तक देना चाहिए। 4–5 माह की अवधि वाली फसल में कुल नत्रजन को 3–4 बार देने से उर्वरक उपयोग क्षमता बढ़ जाती है। नत्रजन, फास्फेटिक एवं पोटेशिक उर्वरकों को बुवाई के समय खेत में बीज से 3–4 सें.मी. नीचे तथा 3–4 सें.मी. बगल में डालना चाहिए।
- सूक्ष्म पोषक तत्वों का घोल बनाकर खड़ी फसल में छिड़काव करना चाहिए।
- गोबर की खाद, कम्पोस्ट, हरी खाद जैसे जैविक खादों को बुवाई से 15 दिन पूर्व खेत में अच्छे ढंग से मिला देना चाहिए।
- कम अवधि की दलहनी फसलों में सभी मुख्य पोषक तत्व बुवाई के समय ही खेत में दे देने चाहिए।
- खड़ी फसल में, किसी तत्व विशेष की कमी होने पर उसी समय उक्त तत्व के यौगिक का मानक स्तर के अनुसार घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।
- रेतीली मृदाओं में नाइट्रोजन को खड़ी फसल में कई बार में डालना चाहिए।
- शुष्क क्षेत्रों एवं असिंचित क्षेत्र की मृदाओं में अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए पोषक तत्वों का घोल बनाकर खड़ी फसल पर छिड़काव करना चाहिए।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

फसल गुणवत्ता सुधार में *क्रिसपर/कास 9* प्रौद्योगिकी

वरुचा मिश्रा, आशुतोष कुमार मल्ल, संतेश्वरी एवं अश्विनी दत्त पाठक
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

फसल सुधार का उद्देश्य फसल की उपज और जैविक और अजैविक तनाव के प्रतिरोध के साथ–साथ गुणवत्ता और पोषण मूल्य में वृद्धि करना है। कई दशकों में उन्नत कृषि प्रौद्योगिकियों के माध्यम से फसल की उपज में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। फसल की गुणवत्ता उपभोक्ताओं के लिए एक बड़ी चिंता रही है क्योंकि यह *प्रोटीन, फाइबर*, विटामिन, खनिज और जैव सक्रिय यौगिकों जैसे कई पोषक तत्व प्रदान करके मानव स्वास्थ्य से सीधे जुड़ा हुआ है। वैज्ञानिकों और प्रजनकों ने भी धीरे–धीरे अपना ध्यान उत्पादन बढ़ाने से गुणवत्ता में सुधार पर स्थानांतरित कर दिया है। विभिन्न फसल के लक्षणों में सुधार के लिए विभिन्न रणनीतियों को सफलतापूर्वक लागू किया गया है, जिसमें पारंपरिक *क्रॉसिंग* प्रजनन, रासायनिक और विकिरण मध्यस्थता उत्परिवर्तन प्रजनन, आणविक *मार्कर*–सहायता प्रजनन और आनुवंशिक इंजीनियरिंग प्रजनन शामिल हैं। हालांकि, पारंपरिक उत्परिवर्तन–आधारित प्रजनन प्रक्रियाओं में अधिक समय लगता है एवं वह श्रमसाध्य हैं। इस तरह की प्रक्रियाएँ विशेष रूप से *पॉलीप्लोइड* फसल प्रजनन में देखी जाती है। वर्तमान समय में *जीनोम एडिटिंग* तकनीक फसल प्रजनन में विशिष्ट लाभ दिखा रही है। *जीनोम* या *जीन एडिटिंग* एक प्रकार का आनुवंशिक संशोधन है जिसमें *डीएनए* को एक जीव के *जीनोम* में *इंजीनियर न्यूक्लियस* का उपयोग करके डाला, हटाया या बदला जाता है।

दूसरी पीढ़ी की *जीनोम एडिटिंग* तकनीक के उद्भव के साथ, नियमित रूप से *इंटरस्पेस्ड शॉर्ट पैलिंड्रोमिक रिपीट/कास 9 (क्रिसपर/कास 9)* लगभग सभी फसलों में एक कुशलतापूर्वक लक्षित संशोधन करता है एवं फसल सुधार कार्यक्रमों में तीव्रता लाता है। *क्रिसपर/कास 9* को पहली बार 1987 में *ई. कोलाई* में पहचाना गया था तथा *वायरल* एवं *प्लास्मिड डीएनए* के आक्रमण से लड़ने के लिए एक प्रतिरक्षा तंत्र के रूप में *रिपोर्ट* किया गया था। हाल के वर्षों में, *क्रिसपर/कास 9* प्रणाली सबसे लोकप्रिय जीनोम संपादन तकनीक बनने के लिए विकसित हुई हैं।

क्रिसपर/कास 9 जीन–संपादन प्रणाली

क्रिसपर/कास 9 प्रणाली *जीनोम* संपादन के लिए अधिक कुशल प्रणाली है क्योंकि संपादन की विशिष्टता जटिल *प्रोटीन* इंजीनियरिंग के बिना एक विशिष्ट अनुक्रम के लिए *गाइड आरएनए* की *न्यूक्लियोटाइड* पूरकता द्वारा निर्धारित होती है। इसलिए, कई शोधकर्ताओं ने जीन कार्यात्मक विश्लेषण के लिए *क्रिसपर/कास 9* उपकरण लागू किए हैं। जब इसे फसल सुधार क्षेत्र में उपयोग किया जाता है, तो *जीनोम* संपादन वांछित लक्षणों की प्रविष्टि की प्रगति में काफी तेजी ला सकता है और श्रम तथा अन्य लागतों को काफी बचा सकता है। 2013 में पादप *जीन एडिटिंग* के लिए *क्रिसपर/कास 9* प्रणाली के पहले उपयोग के बाद से, कई शोधकर्ताओं ने फसल की उपज, गुणवत्ता और प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने में इसके अनुप्रयोग पर ध्यान केंद्रित किया है।

क्रिसपर/कास 9 में *डिजाइनिंग, क्लोनिंग* और ध्या जीन–मुक्त संपादन विधियां शामिल हैं (चित्र 1)। *क्रिसपर/कास 9* प्रणाली में एक *कास 9* प्रोटीन शामिल होता है जो *डबल–स्ट्रैंड कट* बनाता है एवं एक छोटा गाइड *आरएनए* अणु जो *कास 9* को *डीएनए* के एक विशिष्ट अनुक्रम को साफ करने के लिए निर्देशित करता है। कोशिका की मूल डीएनए को सुधारने की मशीनरी आमतौर पर *निक* की मरम्मत करती है और जीन संपादन की सुविधा प्रदान करती है। *क्रिसपर/कास 9.* मध्यस्थता *जीनोम एडिटिंग* ने विशेषता सुधार, जीन विनियमन, वायरस प्रतिरोध के विकास और उत्परिवर्ती पुस्तकालयों के उत्पादन के लिए एक उपकरण के तौर पर उपयोग करके कृषि में क्रांति ला दी है। इस तकनीक का उपयोग पहले से ही कुछ फसलों में पौधों के रोगों की संवेदनशीलता को कम करने, *एलर्जी* के लिए आनुवंशिक जानकारी को खत्म करने या मशरूम को भूरा होने से रोकने के लिए किया जा चुका है।

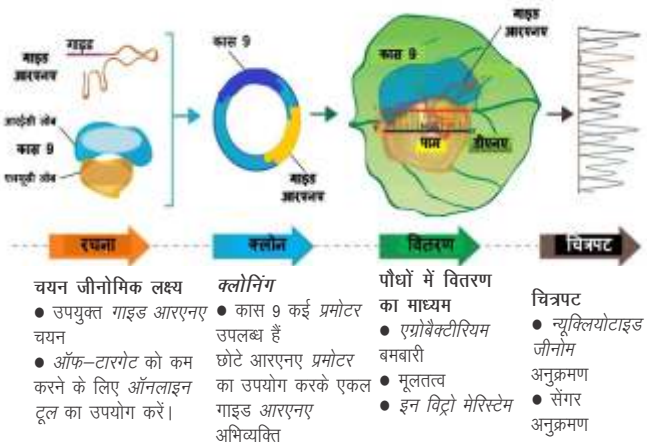

चित्र 1: पौधों में *क्रिसपर/कास 9*–मध्यस्थता *जीनोम* संपादन की क्रिया

क्रिसपर/कास 9–मध्यस्थता आण्विक प्रजनन का फसल की गुणवत्ता पर प्रभाव

फसलों के व्यापार मूल्य को निर्धारित करने में फसल की गुणवत्ता ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। सामान्य तौर पर, फसल की गुणवत्ता बाहरी एवं आंतरिक लक्षणों से निर्धारित होती है। बाहरी गुणवत्ता विशेषताओं में आकार, रंग, बनावट और सुगंध जैसी भौतिक और सौंदर्य संबंधी विशेषताएं शामिल हैं। इसके विपरीत, आंतरिक गुणवत्ता कारकों में पोषक तत्व (जैसे प्रोटीन, स्टार्च, लिपिड आदि) और *बायोएक्टिव* यौगिक जैसे *कैरोटीनॉयड, लाइकोपीन, –एमिनोब्यूट्रिक* अम्ल, *फ्लेवोनोइड* इत्यादि आते हैं। *क्रिसपर/कास 9* की मध्यस्थता वाली फसल की गुणवत्ता में सुधार भौतिक रूप, खाद्य गुणवत्ता, फलों की बनावट और पोषण मूल्य पर केंद्रित होती है।

फसल की गुणवत्ता में सुधार के लिए इसके विभिन्न अनुप्रयोग निम्नलिखित हैं:

फसलों के आकार और माप में सुधार: *क्रिसपर/कास 9* तकनीक का उपयोग उपभोक्ता की पसंद के अनुसार फसलों के आकार तथा माप को अनुकूलित करने के लिए किया गया है।

फलों के रंग में सुधार: *क्रिसपर/कास 9* के माध्यम से वर्णक संश्लेषण मार्ग में शामिल जीनों को बाधित करके फलों के रंग में हेरफेर किया जा सकता है। MYB12, एक *फ्लेवोनोइड बायोसिंथेटिक* मार्ग प्रतिलेखन कारक के रूप में, *फ्लेवोनोइड* के संचय को प्रभावित करता है और गुलाबी त्वचा के *फिनोटाइप* को नियंत्रित करता है। SlMYB12 के जीन को हटाकर गुलाबी फल वाले टमाटर का सफलतापूर्वक उत्पादन किया गया है। ठोस बैंगनी गाजर में *क्रिसपर/कास 9* का उपयोग करके DcMYB7, R2R3-MYB जीन को हटाने से पीली गाजर का उत्पादन हुआ।

लंबी अचल जीवन: *क्रिसपर/कास 9* तकनीक टमाटर और केले के अचल जीवन को बढ़ाने के लिए काफी संभावनाएं रखती है। प्राकृतिक रूप से कई उत्परिवर्ती जीन पाये जाते हैं जो अचल जीवन को लम्बा करने की क्षमता रखते हैं। *क्रिसपर/कास 9* प्रणाली से SlPL जीन के अल्पपरिवर्तित किया जाने से ऑर्गेनोलेप्टिक और पोषण गुणवत्ता को कम किए बिना फलों को लंबी अवधि का अचल जीवन की क्षमता प्राप्त हुई।

गन्ने और पकाने की गुणवत्ता में सुधार: खाने और पकाने की गुणवत्ता उपभोक्ता स्वीकृति और व्यापार मूल्य को निर्धारित करती है। इस प्रणाली द्वारा आनुवांशिक सुधार हेतु *जैपोनिका* पादप में WÛ जीन का अल्पपरिवर्तित करके *अमाइलोस* की मात्रा में 5.12 प्रतिशत वृद्धि की है। इस क्रिया से अन्य किसी भी वाछनीय लक्षणों पर कोई भी प्रभाव नहीं पड़ा है।

स्वाद में सुधार: अभी हाल ही में, शोधकर्ताओं ने *क्रिसपर/कास 9* के माध्यम से OsBADH2 के नए *एलील* बनाने में सफलता हासिल की है। इस प्रणाली द्वारा बिना गंध वाले चावल की किस्म, ASD16 को सफलतापूर्वक एक नए सुगंधित चावल में बदल दिया है।

***कैरोटीनॉयड* सामग्री बढ़ाना:** *कैरोटीनॉयड एंटीऑक्सिडेंट* प्रक्रियाओं और आंखों से संबंधित रोग की रोकथाम में शामिल रहा है। *क्रिसपर/कास 9* की मध्यस्थता वाले जीनोम एडिटिंग को चावल, टमाटर और केले में *कैरोटेनॉयड बायोफोर्टिफिकेशन* में लागू किया गया है। चयनात्मक प्रजनन, आनुवांशिक संशोधन या समृद्ध उर्वरकों के उपयोग के मध्यान से खाद्य फसल की सूक्ष्म पोषक सामग्री को बढ़ाने की प्रक्रिया को *बायोफोर्टिफिकेशन* कहते हैं। आमतौर पर, *कैरोटिनॉयड बायोफोर्टिफिकेशन* के लिए दो तरह की रणनीतियों का प्रयोग किया जाता था। सबसे पहले, *क्रिसपर/कास 9*–मध्यस्थता वाले नॉक–इन के माध्यम से *फाइटोइन सिंथेज जीन* की अधिकता *कैरोटिनॉइड बायोसिंथेटिक* मार्ग में कार्बन प्रवाह को लागू करती है। इसके द्वारा, CrtI और PSY जीन युक्त एक *कैरोटेनोजेनेसिस कैसेट* को चावल में लक्ष्य स्थल में एकीकृत किया गया है, जिसके परिणामस्वरूप *मार्कर*– मुक्त जीन–संपादित *स्यूटेंट* में सूखे वजन में 7.9 माइक्रोग्राम प्रति ग्राम बीटा–कैरोटीन होता है। एक अन्य रणनीति है उनके पूर्ववर्तियों के रूपांतरण को रोकना है या संबंधित जीनों को शांत करना है। उदाहरण के लिए, एलसीवाई जीन के विघटन के माध्यम से छह गुना तक समृद्ध बीटा –कैरोटीन युक्त एक सुनहरा फल (केला उत्परिवर्ती) बनाया गया था।

लिग्निन की मात्रा में सुधार: *क्रिसपर/कास 9* प्रणाली पहले से ही कई फसल पौधों में सफलतापूर्वक नियोजित की जा चुकी है। गन्ने में इन तकनीकों का प्रयोग अपनी प्रारंभिक अवस्था में है। जंग और अल्टपीटर (2016) ने गन्ने में लिग्निन सामग्री को कम करने के लिए जैव ईंधन उत्पादन के लिए उत्तरदायी बनाने के लिए पहली बार *ट्रांसक्रिप्शन एक्टीवेटर्स*–जैसे *इफेक्टर न्यूक्लीज टैलेन* मध्यस्थता दृष्टिकोण की सूचना दी है।

निष्कर्ष

क्रिसपर/कास 9–आधारित जीन–संपादन उपकरण का आगमन शोधकर्ताओं को फसल–विशिष्ट लक्षणों को अधिक सटीक और प्रभावी तरीके से संशोधित करने की क्षमता प्रदान करता है। *क्रिसपर/कास 9* प्रणाली फसल प्रजनन और कार्यात्मक *जीनोमिक्स* में सबसे अधिक उपयोग की जाने वाली और बहुमुखी तकनीक बन गई है। जीन को संशोधित करने की अतुलनीय क्षमता के साथ, इसने वांछित कृषि संबंधी प्रदर्शन के साथ कई फसल किस्मों को बनाने में मदद की है। जिन चुनौतियों को हल करने की आवश्यकता है, उनके अतिरिक्त यह माना जाता है कि भविष्य में जीन–संपादन तकनीक का अधिक व्यापक रूप से उपयोग किया जाएगा और अनिवार्य रूप से फसल की गुणवत्ता में सुधार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

मृदा पीएच: एक व्यवहारिक परिचय

मुकुन्द कुमार, आशुतोष कुमार मल्ल संतोष कुमार एवं एस.पी. सिंह
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

पीएच क्या है?

पीएच का पूरा नाम *"पावर आफ हाइड्रोजन"* है जैसा कि नाम से ही पता चलता है कि हाइड्रोजन की क्षमता। पीएच मान की खोज सबसे पहले 1909 में एस.पी.एल. सॉरेन्सन ने किया था। किसी विलयन में उपस्थित हाइड्रोजन आयन की सांद्रता ज्ञात करने के लिए एक मान की खोज की गई जिसे पीएच मान कहते है। पीएच से पदार्थ विशेष की आपेक्षिक अम्लीयता और क्षारीयता का बोध होता है। इसके माप का पैमाना शून्य से 14 तक होता है। पीएच मान 7 उदासीन होता है और इससे नीचे अम्लीय होता है। जिनका पीएच 7 से ऊपर होता है वे क्षारीय होते हैं अधिकतर उपजाऊ मृदा का पीएच 4.0 से 9.0 के मध्य होता है।

अम्ल वह पदार्थ है जो हाइड्रोजन आयन (H^+) को मुक्त करता है। (H^+) आयन से संतृप्त होने पर मृदा तनु अम्ल जैसा व्यवहार करती है। विनिमय सम्मिश्र पर हाइड्रोजन आयन की अधिकता होने पर मृदा की अम्लीयता अधिक हो जाती है। एल्युमिनियम भी अम्लीय तत्व की भाँति कार्य करता है और हाइड्रोजन को क्रियाशील बनाता है। आपेक्षिक अम्लीयता और क्षारीयता को चित्र 1 में दिखाया गया है।

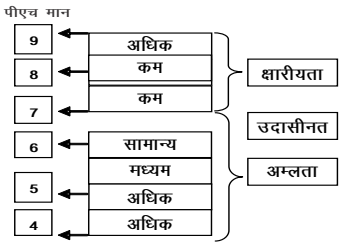

चित्र 1: कृषि मृदाओं में अम्लीयता और क्षारीयता की माप

मृदा पीएच हाइड्रोजन की क्रियाशीलता का मापन करता है और जिसे *लॉग* रूप में व्यक्त करते हैं। *लॉग* का व्यवहारिक महत्व है। मृदा पीएच की प्रत्येक इकाई परिवर्तन के साथ अम्लता या क्षारीयता में दस गुना परिवर्तन होता है। इस प्रकार 7 पीएच की तुलना में जिस मृदा का पीएच 6 होता है उसके हाइड्रोजन आयन 10 गुना अधिक क्रियाशील होते है। इस प्रकार जैसे–जैसे पीएच कम होता है। उसकी चूने की आवश्यकता बढ़ती जाती है।

विभिन्न पीएच मान पर अम्लीयता और क्षारीयता का तुलनात्मक स्तर

मृदा पीएच मान		अम्लीयता/क्षारीयता पीएच 7 की तुलना में
9.0	क्षारीयता	100
8.0		10
7.0	उदासीनता	
6.0	अम्लीयता	10
5.0		100
4.0		1000

मृदा पीएच को प्रभावित करने वाले कारक

मृदा पीएच अनेक कारको से प्रभावित होता है। जैसे पैतृक (मूल) पदार्थ, अवक्षेपण जीवांश पदार्थ का विघटन, मूल वनस्पति, उगाई गई फसल, मृदा गहराई, नजत्रन उर्वरीकरण और जलमग्नता आदि।

मृदा पीएच कैसे ज्ञात करते हैं?

मृदा पीएच ज्ञात करने के लिए दो सामान्य विधियाँ अपनायी जाती हैं (क) सूचक रंग (*लिटमस पेपर*) (ख) *पीएच मीटर*। सूचक रंग (*लिटमस पेपर*) का प्रयोग खेत की मृदा पीएच मान को तुरन्त ज्ञात करने के लिए किया जाता है। यह कार्य अनुभवी एवं कुशल व्यक्तियों के द्वारा किया जाना चाहिए जिससे बड़ी त्रुटि न होने पाये। इस विधि का सही प्रयोग करने पर परिणाम विश्वसनीय होते हैं। लेकिन शुद्ध मापन हेतु पीएच मीटर विधि का प्रयोग करना चाहिए। मिट्टी परीक्षण प्रयोगशालाओं में इसे ही प्रयोग करते हैं। मृदा पीएच मृदा की अम्लीयता और क्षारीयता मापने का अकेला उत्तम सूचक है।

पीएच मान का मृदा एवं फसलों पर प्रभाव

मृदा पीएच मान का पौधों की वृद्धि एवं विकास को कई प्रकार से प्रभावित करते हैं। कम पीएच मान पर एक या एक से अधिक हानिप्रद कारक पौधे की वृद्धि को कम कर देते हैं। निम्न मृदा पीएच मान के कुछ प्रभाव निम्नलिखित हैं–

- एल्युमिनियम लोहा और मैगनीज जैसे तत्वों की सांद्रता विषाक्तता स्तर तक पहुँच जाती है क्योंकि अम्लीय मृदा में इनकी घुलनशीलता बढ़ जाती है।
- 4.2 से कम पीएच पर हाइड्रोजन आयन की विषाक्तता का सीधा प्रभाव पड़ता है।
- मृदा पीएच अत्यधिक कम होने पर मृदा में प्रयोग किये गये शाकनाशी की क्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।
- कम पीएच. मान पर दलहनी फसलों द्वारा होने वाला सहजीवी नत्रजन यौगिकीकरण न करने वाले पौधे कम प्रभावित होते हैं। सोयाबीन के सहजीवी जीवाणु के लिए 6.0 से 6.2 के बीच का पीएच मान एवं सलाद फसल के लिए 6.8 से 7.0 के बीच का पीएच मान सबसे अच्छा माना जाता है।
- कम पीएच होने पर फास्फोरस और मॉलिब्डेनम जैसे पोषक तत्वों की उपलब्धता कम हो जाती है।
- कम पीएच होने से पोटैशियम का नीक्षालन हो जाता है।
- मृदा पीएच में परिवर्तन के अनुसार पौधों के पोषक तत्वों और अन्य तत्वों की उपलब्धता प्रभावित होती है।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

बुन्देलखण्ड़ में घृतकुमारी और अश्वगन्धा की व्यावसायिक खेती

कृष्णसिंह तोमर, जगन्नाथ पाठक, अजय कुमार सिंह एवं राकेश कुमार
बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, बांदा

अवैज्ञानिक कटाई व खेती न होने से औषधीय धरोहर को अत्यंत खतरा पैदा हो गया है। अच्छी गुणवत्ता वाले औषधीय पौधों की देश व विदेशो में मांग निरन्तर बढ़ती जा रही है। जड़ी–बूटियों की खेती से किसान भाई अच्छी आमदनी व रोजगार प्राप्त करके अपनी आर्थिक दशा सुधार सकते हैं। यदि औषधीय पौधों की खेती वैज्ञानिक विधि से की जाए तो अन्य फसलों की अपेक्षा दो से तीन गुना अधिक लाभ किसान अर्जित कर सकते हैं। अनुसंधान से यह पता लगा है कि कम पानी वाली जगह व सूखाग्रस्त क्षेत्रों में घृतकुमारी व अश्वगंधा को फसल के रूप में उगाया जा सकता है। राजस्थान, मध्य प्रदेश, हरियाणा, गुजरात, छत्तीसगढ़, ओडिशा, महाराष्ट्र इत्यादि की कम पानी वाली जगह व सूखाग्रस्त क्षेत्रों में इनकी सफल खेती की जा रही है। इन सबको देखते हुए बुन्देलखंण्ड की जलवायु में भी घृत कुमारी एवं अश्वगंधा की खेती के लिए अपार सम्भावनाएं हैं।

विश्व में औषधीय और सगंधीय पौधों का व्यापार लगभग 80–90 अरब डालर प्रतिवर्ष तक पहुंच गया हैं। यह हर वर्ष 10–15 प्रतिशत की वृद्धि दर से बढ़ रहा है। परंतु इसमें भारत का योगदान 4–5 प्रतिशत तक ही है। औषधीय बाजार में लगभग 50 हजार औषधीय और सगंधीय पौधों का प्रयोग हो रहा है। इनमें से 10 हजार औषधीय एवं सगंधीय पौधे लुप्त होने की कगार पर हैं। ये औषधीय एवं सगंधीय पौधे अधिकतर भारत व चीन में हैं। विश्व स्तर पर इनकी और खपत बढ़ने की प्रबल संभावनाएं हैं। पुराने समय में जब अंग्रेजी दवाईयों का प्रचलन नही था तो औषधीय को वैद्य और हकीम विभिन्न बीमारियों में उपचार के लिए प्रयोग में लाते थे। हमारे कई ग्रन्थों में बहुत सी बहुमूल्य जीवनरक्षक दवाईयाँ बनाने वाली बूटियों का विस्तृत वर्णन किया गया हैं। भारत में लगभग 880 किस्म के औषधीय पौधों का व्यापार के लिये प्रयोग होता है। 80–90 प्रतिशत औषधीय एवं सगंधीय पौधे जंगलों से हर वर्ष बाजार में बेचे जाते हैं। आजकल के दौर में औषधीय पौधों का प्रचार व उपयोग अत्यधिक बढ़ गया है जिसका सीधा असर इनकी उपलब्धता व गुणवत्ता पर पड़ा हैं। आयुर्वेदिक फैक्ट्रियों में इनकी मांग बढ़ने से औषधीय पौधों का दोहन व उनका कुदरती क्षेत्र में उपलब्धता पर विपरीत असर पड़ा है।

घृतकुमारी

इसे कुमारी, ग्वार पाठा, घी कुमारी, क्वार गन्दल, अलो व क्वारें भी कहते हैं। अंग्रेजी में इसे *एलोवेरा* कहते हैं। यह पौधा भारत के सभी गर्म क्षेत्रों में पाया जाता हैं। यह नदियों व नालों के किनारे रेतीली जगह पर पाया जाता हैं। इसको सूखाग्रस्त जगह पर आसानी से उगाया जा सकता हैं। यह 1,000 मीटर तक की ऊँचाई वाले क्षेत्रों में कुदरती तौर पर पाया जाता हैं। यह बहुवर्षीय

घृतकुमारी

गूदे वाला पौधा है। इसके पत्ते लंबे व रसदार होते हैं। ये विभिन्न प्रकार की औषधियों में उपयोग में लायी जाती हैं। इसे कम उपजाऊ और 8.2 पी.एच मान तक की जमीन में उगाया जा सकता हैं।

कैसे करें खेती?

इसे ढलानदार, रेतीली, नालो के किनारे व हल्की मिट्टी वाले क्षेत्रो में आसानी से उगाया जा सकता हैं। यह मुख्यतः जड़ों द्वारा रोपित की जाती हैं। एक मुख्य पौधे से तैयार होने वाले 4 से 10 छोटे पौधों को दो महीने की उम्र में मुख्य पौधे से हटाकर रोपित करना चाहिए। इनको 30'x30'x30' सें.मी. आकार के गड्ढों में 60–60 सें.मी. की पंक्ति से पंक्ति की दूरी पर बरसात के शुरू में लगाना चाहिए। इसकी 28,000–35,000 कलमें प्रति हेक्टेयर लगाई जा सकती हैं। पहाड़ों में ढलान वाली भूमि में पौधों की रोपाई करके इसकी फसल ली जा सकती हैं। दो महीनों के अंतराल पर हल्की गुड़ाई करनी चाहिए व खरपतवारों को निकाल देना चाहिये। सूखे क्षेत्रों में लगाने के कुछ दिनो के अंदर ही पानी अवश्य दे दें। पानी का जमाव पौधों की जड़ो के लिए घातक है जिससे जड़ सड़न रोग हो सकता हैं। इसकी खेती सूखाग्रस्त क्षेत्रों के लिए काफी उपयोगी हो सकती हैं। लगभग 16 महीनो के बाद ऊपरी भाग को काटकर बेचा जा सकता है व हर 4–5 महीने के बाद काटा जाना चाहिए। पत्तों की पैदावार फसल लगाने के 5 वर्ष तक ली जा सकती हैं। यह बाजार में ₹ 4–5 प्रति कि.ग्रा. की दर से ताजा ही बेचा जा सकता हैं। एक पौधा लगभग 4–6 कि.ग्रा. औसत पैदावार देता हैं। जड़ों को लगाते समय *डायथेन एम–45* से उपचार करना चाहिए। एक लीटर पानी में 2 ग्राम *डायथेन एम–45* को घोलकर जड़ों को

उसमें डुबोना चाहिए या गौमूत्र में 4–6 घन्टे डुबोकर लगाएं। इसको रासायनिक खाद की कोई खास आवश्यकता नहीं पडती है, फिर भी यदि आवश्यकता हो तो 15–20 टन प्रति हेक्टेयर देशी खाद डालनी चाहिए। इसके पत्तों की औसत पैदावार 400–550 क्विंटल प्रति हेक्टेयर प्राप्त की जा सकती हैं। इसकी खेती से औसतन ₹ 80,000–1,00,000 प्रति हेक्टेयर की आय प्राप्त की जा सकती हैं।

उपयोग

इसके गूदेदार पत्ते सौंदर्य प्रसाधन सामग्री में प्रयोग होते हैं व इसका रस स्वास्थ्यवर्धक पेय के तौर पर प्रयोग में लाया जाता है। यह खून की शुद्धि, पेट साफ, आंखों की बीमारियों व गर्भाशय के रोंगो में उपयोग में लाया जाता है। इसका गूदा सब्जी और अचार के रूप में भी प्रयोग किया जाता हैं। इसका सूखा हुआ रस कब्ज दूर करने के काम आता है। इसके गूदे में *ग्लूकोसाईड* व *वारवैलियोन* व *एलोइमोडीन* पाया जाता है। इसका प्रयोग भृंग मालादी तेल, कुमार वटी, लौह रसायन व स्तन बढ़ाने वाली, झुरियां मिटानें वाली दवाएं बनाने में किया जाता हैं।

अश्वगंधा

अश्वगंधा आयुर्वेदिक औषधियों में प्रयुक्त होने वाली महत्वपूर्ण औषधीय व नकदी फसल है। यह औषधीय फसल वर्षा आधारित होने के कारण सूखे क्षेत्रों के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं। यह भारत के सूखे भागो में लगभग 1,400 मीटर की ऊँचाई तक पाया जाता है। अश्वगंधा को फसल के रूप मे कम पानी वाली जगह व सूखाग्रस्त क्षेत्र जैसे– राजस्थान, मध्य प्रदेश, हरियाणा, पश्चिम बंगाल, गुजरात, छत्तीसगढ़, ओडिशा, महाराष्ट्र व हिमाचल प्रदेश इत्यादि में सफलतापूर्वक उगाया जाता हैं। जंगली रूप से उगे हुए पौधों की ऊँचाई लगभग 40–90 सें.मी. जबकि औषधीय उपयोग के लिए उगाई जाने वाली पौधों की ऊँचाई 25–30 सें.मी. होती हैं। अश्वगंधा के बीज मोटे और चपटे आकार के होते हैं। इसके पत्ते 4–10 सें.मी. तक लंबे व अण्डाकार होते है। इसका फल आवरण में ढ़का व 0.5–0.7 सें.मी. आकार का रसदार बीज युक्त होता है। इसकी ज़ड़ें आयुर्वेदिक व यूनानी औषधियां बनाने में उपयोग आती हैं, जो एक से डेढ़ इंच मोटी, मूली की तरह शंक्वाकार मजबूत, चिकनी, बाहर से हल्के भूरे रंग की तथा अन्दर से सफेद होती है। जड़ों का स्वाद कड़वा और तीक्ष्ण होता हैं। इसकी जडों में तीव्र गंध आने के कारण ही इसे अश्वगंधा कहते हैं। अश्वगंधा की खेती राजस्थान में मुख्यतः नागौर, झालावाड़ तथा कोटा व मध्य प्रदेश में मंदसौर जिले की मनासा, नीमच, भानपुरा तथा जावद इत्यादि तहसीलों में की जाती है। इसका राजस्थान व मध्य प्रदेश में उत्पादन प्रतिवर्ष 1,500–3,500 मीट्रिक टन होता हैं जिसका मूल्य ₹ 8–15 करोड़ है जिसका यहां से प्रतिवर्ष व्यापार होता हैं।

कैसे करें खेती?

अश्वगंधा देरी से बोई जाने वाली खरीफ की फसल हैं। अच्छी फसल के लिए मौसम शुष्क तथा जमीन में प्रचुर मात्रा में नमी होनी चाहिए। यदि शरद ऋतु में वर्षा हो जाए तो जड़ों में वृद्धि तथा पैदावार अधिक होती हैं। इसकी खेती कम उपजाऊ भूमियों व पारंपरिक फसलें नही उगाई जा सकने वाले क्षेत्रों में, आसानी से की जा सकती हैं। अश्वगंधा के फसल से अधिक उपज लेने के लिए अच्छे जल निकास वाली बलुई दोमट मिट्टी उपयुक्त है। मिट्टी का पी.एच मान 7.5 से 8.0 अच्छा रहता हैं। मानसून प्रारम्भ होने के पहले दो बार आड़ी–खडी जुताई कर पाटा लगा दें। बुआई से पूर्व एक बार बक्खर चलाकर मिट्टी को भुरभुरी कर लेनी चाहिए। बुआई से पूर्व बीज को *थीयरम* या *डाइथेन एम–45* या *मैन्कोजेब* द्वारा 3–4 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। बीज बुआई के समय व पौधों को रोपते समय गौमूत्र से उपचारित करना चाहिए। इसकी बुआई दो तरीको से की जा सकती है। पहले तरीके द्वारा सीधे बीज रोपण जो कि जुलाई से सितंबर तक की जा सकती है, व कटाई जनवरी–फरवरी में की जाती है, परन्तु जब वर्षा तीन–चौथाई हो

अश्वगन्धा

जाए तब बुआई करना अधिक अच्छा रहता हैं। बीज बुआई कतारो एवं छिड़काव के तरीके से की जाती है। छिटकवां विधि से बोने पर 8–10 कि.ग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है जबकि कतार विधि द्वारा कम बीज की आवश्यकता होती हैं। दूसरी विधि नर्सरी तैयार कर पौध रोपण की है। इस विधि द्वारा जुलाई के शुरू में उठी हुई क्यारियों में बुआई करनी चाहिए व लगभग 5 कि.ग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त होता है। 35 दिनों के बाद पौधों को खेत में 5–7 सें.मी. पौधे से पौधें व 30–30 सें.मी. पंक्ति से पंक्ति की दूरी पर प्रत्यारोपण किया जाना चाहिए। ध्यान रखें कि एक वर्ग मीटर में 70–80 पौधे होने चाहिए। खेत में 5.5 से 7.2 लाख पौधे प्रति हेक्टेयर पर्याप्त होते हैं। छिड़काव विधि द्वारा बुआई करने के लिए बीज में बराबर मात्रा में बालू या गोबर की खाद मिला लेनी चाहिए, क्योंकि इसके बीज छोटे आकार के होते हैं। बालू या गोबर के खाद में मिले हुए बीजों को समान रूप से तैयार खेत में छिड़काव करके हल्का पाटा चला देना चाहिए तथा वर्षा न हो तो हल्की सिंचाई करनी चाहिए। भूमि में जीवांश की मात्रा बनाए रखने के लिए 10–15 टन सड़ी गोबर की खाद प्रति हेक्टेयर डालें। 30 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 30 कि.ग्रा. फास्फोरस और 20 कि. ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से बुवाई के समय डालें। नाइट्रोजन का अधिक उपयोग पौधों के ऊपरी भाग की पैदावार बढ़ा देता है व जड़ का उत्पादन कम होता है। फसल बुआई के 30–35 दिन के बाद एक बार निराई–गुड़ाई कर पौधों की छटनी करनी चाहिए तथा प्रभावी तरीके से खरपतवार नियंत्रण के लिए *आइसोप्रोट्यूरान* 0.75 कि.ग्रा. बुआई के समय प्रति हैक्टर के हिसाब से छिड़काव करना चाहिए। आमतौर पर अश्वगंधा में सिंचाई की आवश्यकता नही होती है, लेकिन वर्षा की कमी के समय सिंचाई की जा सकती है। अश्वगंधा की फसल पर कीट–व्याधि का कोई विशेष असर नही होता है। कभी–कभी इस फसल में माहू/मोयला कीट तथा पौध झुलसा या अगंमारी और जड़ गलन लग जाता है। माहू कीट के नियंत्रण के लिए *मिथाइल डिमेटान* 1.25 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

उन्नत किस्में

अश्वगंधा की खेती के लिए मुख्यतया स्थानीय बीज काम में लिए जाते हैं। वर्तमान में प्रमुख किस्में नागौरी, जवाहर असंगधा–20 (डब्ल्यू.एस.–20), डब्ल्यू.एस.–90–130, चेतक, प्रताप, पोशिता, रक्षिता, नीमिथली एवं डब्ल्यू. एस. आर. प्रयोग में लायी जाती है।

जड़ों का श्रेणीकरण

जड़ों को विपणन की दृष्टि से आकार और गुणवत्ता के अनुसार अलग–अलग श्रेणियों में श्रेणीबद्ध किया गया है :

श्रेणी–एः इस श्रेणी में जड़ का ऊपरी भाग आता है, जिसका छिलका पतला व औसत लंबाई करीब 5 सें.मी. तथा व्यास 1.0 सें.मी. होता हैं।

श्रेणी–बीः इस श्रेणी में जड़ के बीच का भाग आता है, जिसकी औसत लंबाई करीब 3 सें.मी. तथा व्यास 0.6–0.9 सें.मी. होता हैं।

श्रेणी–सीः इस श्रेणी में जड़ का अंतिम भाग आता हैं। यह भाग पतला होता हैं। इसमें स्टार्च नही होता है, परन्तु *एल्कालायड्स* ज्यादा होते हैं। अश्वगंधा की सूखी जड़ों की उपज 5–7 क्विंटल और बीज 6–7 क्विंटल प्रति हेक्टेयर प्राप्त होती है। अश्वगंधा की सूखी जड़ों का बाजार भाव ₹ 120–150 व बीज का बाजार भाव ₹ 35 प्रति कि.ग्रा. है। इस फसल पर ₹ 29,000–30,000 प्रति हेक्टेयर खर्च होता है व ₹ 70,000–90,000 प्रति हेक्टेयर की फसल ली जा सकती है। इस प्रकार ₹ 40,000–60,000 प्रति हेक्टेयर तक शुद्ध लाभ कमाया जा सकता हैं।

उपयोग

अश्वगंधा में मुख्य तौर पर सुगंधित तेल *एल्कोलोयड* व *सोमनीफेरीन* इत्यादि अवयव पाये जाते हैं। यह टॉनिक के रूप में स्त्री, पुरूष, और बच्चों के लिए शक्तिवर्धक के रूप में प्रयोग किया जाता हैं। जड़ का चूर्ण व जड़ टॉनिक वीर्यवर्धक, थकावट दूर करने, खांसी, गठिया, बुढ़ापा दूर करने, बालो को सफेद होने से रोकने, शारीरिक व मानसिक ताकत देने के लिए प्रयोग में लाई जाती हैं। इसकी जड़ों का प्रयोग दुर्बलता कम करने की औषध के रूप में भी किया जाता हैं। इसकी हरी पत्तियां जोड़ों की सूजन, क्षय रोग और दुखती आंखो के इलाज के काम में आती है। इसकी जड़ों में *एल्कालॉइड्स* और पत्तियों में *स्टीरॉइड्स* होते हैं।

हिंदी द्वारा सारे भारत को एक सूत्र में
पिरोया जा सकता है।

-स्वामी दयानंद

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

कीट नियंत्रण : कीटनाशियों की गणना एवं उपयोगी यंत्र

उमेश चन्द्र पाण्डेय, मोना नगरगड़े, सुधीर कुमार शुक्ल एवं टी.के. श्रीवास्तव

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

भारत कृषि प्रधान देश है। हमारी अर्थव्यवस्था आज भी कृषि पर निर्भर है। हमारे देश में 100 में से 65 व्यक्ति आज भी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि व्यवसाय पर निर्भर करते हैं। इसलिए आज आवश्यकता इस बात की है कि उत्तम फसल का उत्पादन उन्नत बीज, उत्तम ज्ञान, उन्नत तकनीक एवं आधुनिक कृषि यंत्रों के माध्यम से किया जाए। उन्नत बीज एवं उन्नत तकनीक फसल उत्पादन के लिए एक मजबूत स्तम्भ है, जिसकी नींव पर फसल से अधिक उत्पादन लिया जा सकता है। आधुनिक कृषि में रसायनों का अत्याधिक एवं अंधाधुंध प्रयोग किया जा रहा है। कीटनाशी, रोगनाशी, फफूंदनाशी और खरपतवारनाशी प्रायः बहुत जहरीले होते हैं। विशेषज्ञों के अनुसान कीटनाशक, रोगनाशक, फफूंदनाशक और खरपतवारनाशक रसायनों का अत्यधिक प्रयोग मानव शरीर के महत्वपूर्ण अंगों यकृत, गुर्दो, फेफड़ों और आंतों के लिए घातक सिद्ध होता है और इनके विषैले प्रभाव से मनुष्य, पशु–पक्षियों और मछलियों की मृत्यु तक संभव है जबकि इन रसायनों के लगातार प्रयोग से कैंसर जैसी घातक बीमारियों में वृद्धि हो रही है।

विश्व खाद्य संगठन के आंकड़ों के अनुसार प्रत्येक वर्ष 20 लाख लोग विषैले रसायनों के प्रयोग का शिकार होते हैं एवं उनमें से 20 हजार लोगों की मौत भी हो जाती हे, जो मानव जीवन के लिए एक अभिशाप का रूप धारण कर चुकी है। विक्रेता द्वारा बताए गये आधे–अधूरे ज्ञान से न सिर्फ किसानों को आर्थिक क्षति होती है, बल्कि कीटों का नियंत्रण भी प्रभावी तरीके से न होने के कारण 45 प्रतिशत फसल कीट और रोगों द्वारा नष्ट हो जाती है। आज भारत में कीटनाशकों का सर्वाधिक उपयोग धान, कपास, सब्जियों और दालों में किया जा रहा है।

भारत में फसल सुरक्षा हेतु कुल कीटनाशक की खपत का 65 प्रतिशत हिस्सा कृषि और बागवानी के लिए उपयोग में लाया जा रहा है। इसलिए आवश्यकता है कि किसान अपनी फसल में किसी भी रसायन का प्रयोग करने से पहले प्रभावी कीटनाशी, उपयोगी यंत्र छिड़काव की वैज्ञानिक जानकारी अवश्य प्राप्त कर लें।

रसायनों के प्रयोग से पहले कुछ आवश्यक सावधानियाँ

- कीट एवं रोग का पहचान करके उसकी गम्भीरता के आधार पर कृषि विशेषज्ञों से सलाह अवश्य कर लें और उचित रसायन का ही प्रयोग करें।
- प्रमाणित किया हुआ कीटनाशक ही खरीदें। हर कीटनाशक के डिब्बे पर कीटनाशी की प्रतिशत मात्रा उत्पाद एवं वैद्यता तिथि की जानकारी अवश्य कर लें।
- कीटनाशी की कृषि विशेषज्ञों द्वारा संस्तुत मात्रा का ही प्रयोग करना चाहिए, जिससे अवैधानिक विष–अवशेष हमारे खाद्य–पदार्थ खाद्य–श्रृंखला एवं फसलों पर न रह जाये। *लेबल* पर प्रतीक्षा काल अवश्य पढ़ लें। उसके पश्चात् ही फल, सब्जियों तथा अन्य फसलों एवं उत्पादों का प्रयोग करना चाहिए।
- केवल संस्तुत, सुरक्षित तथा कम प्रदूषण फैलाने वाली रसायनिक दवाईयों का ही प्रयोग करना चाहिए।
- कीटनाशक छिड़काव का काम स्वस्थ प्रशिक्षित व्यक्तियों से करवाएं। खाली पेट कीटनाशक का छिड़काव नहीं करना चाहिए।
- जो व्यक्ति रसायनों के मिश्रण बनाने, ढोने तथा उनके छिड़काव, भुरकाव में शामिल हों, उन्हें रसायनों के छिड़काव के दौरान खान–पान तथा धूम्रपान इत्यादि नहीं करना चाहिए।
- रसायनों को बाहर खुले शान्त स्थान पर मिलाना चाहिए। डिब्बें में बंद रसायन जो कि सान्द्र अवस्था में रहता है, को सावधानीपूर्वक खोलना चाहिए। जब भी दवा का घोल बनाना अथवा *लोडिंग* करना हो तो हवा के रुख को ध्यान में रखें।
- मौसम की दशा और हवा की दिशा को ध्यान में रखकर ही छिड़काव करना चाहिए अन्यथा कीटनाशी की मात्रा व्यर्थ हो जाती है और किसानों को आर्थिक नुकसान उठाना पड़ता है।
- कीटनाशकों की पहचान उन पर लिखे नाम एवं लेबल से ही करना चाहिए। प्रयोग के पहले *लीफलेट* पर छपे दिशा–निर्देश को ध्यानपूर्वक पढ़ें। कीटनाशकों को पहचानने के लिए उन्हें सूंघना या चखना नहीं चाहिए।
- छिड़काव के समय खुद को सुरक्षित रखने के लिए मुँह एवं नाक को ढ़ककर रखें एवं हाथों में दस्ताना अवश्य पहनें।
- कीटनाशकों को किसी अन्य बोतल या डिब्बे में भंण्डारण न करें। इन्हें अपने मूल रूप में ही सुरक्षित रखें।
- कीटनाशक को हमेशा सुरक्षित स्थान, जानवरों और बच्चों की पहुँच से दूर रखें।
- छिड़काव के बाद कुछ भी खाने–पीने के पहले हाथ–मुँह साबुन से अच्छी तरह धोएं और साबुन लगाकर अच्छी तरह स्नान कर लेना चाहिए।

तालिका 1:– रसायनों की विषाक्तता एवं पहचान संबंधी जानकारी

fo"kkDrrk J.kh	Rkhoz ekSf[kd fo"kkDrrk ?kkrd [kjkd 50 ifr'kr ¼fe-yh-@fd-xk-½	ikdV@ckry ij cus f=dks.k dk jax	*लेबल* ij vko';d ,dy 'kCn	*लेबल* ij pssrkouh
अत्यन्त विषैला	0–50	लाल	जहर	खोपड़ी के नीचे (का चिन्ह
अत्याधिक विषैला	51–500	पीला	जहर	केवल हड्डियों का चिन्ह
सामान्य रूप से विषैला	501–5000	नीला	खतरनाक	–
थोड़ा सा विषैला	5000	हरा	सावधानी	–

कीटनाशकों के नियंत्रण में प्रयुक्त होने वाले यंत्र

कीट नियंत्रण हेतु प्रयोग किये जाने वाले कीटनाशकों का छिड़काव विभिन्न प्रकार के *स्प्रेयर* (यंत्रो) द्वारा किया जाता है। इन कृषि यंत्रों की सहायता से कीटनाशी, रोगनाशी, कवकनाशी एवं खरपतवारनाशी रसायनों का प्रयोग फसलों में सुगमतापूर्वक किया जाता है।

बूम स्प्रेयर

इस ट्रैक्टर चालित कृषि यंत्र की सहायता से अधिक ऊँचाई वाले फल वृक्षों, बाग–बगीचों एवं फसलों जैसे धान, गेहूँ, मक्का सब्जियों, कपास, गन्ना, अरहर, सूरजमुखी, आदि सभी तरह की फसलों पर प्रभावी तरीके से छिड़काव सुनिश्चित होता है। इसकी *कॉंपैक्ट डिजाइन, हाइड्रोस्टैटिक* और *हाइड्रोलिक* प्रणाली अत्यंत प्रभावी तरीके से छिड़काव करने में सक्षम है।

बकेट (स्ट्रिरप) पम्प स्प्रेयर

इस मशीन में एक *प्लंजर* तथा *डी.* या *टी.* आकार का *हैंडिल* होता है। जिसके एक या दो *बैरेल (सिंलिडर्स)* एक *स्ट्रिप* तथा *फूटरेस्ट* होता है, पम्प की बाल्टी जिसमें रसायन का घोल बना है उसमें डुबा दिया जाता है। इसे चलाने हेतु दो व्यक्तियों की आवश्यकता पड़ती है एक व्यक्ति पम्प को चलाता है तथा दूसरा व्यक्ति हैंडिल पकड़ कर छिड़काव करता है। इनका उपयोग कीटनाशकों की सूक्ष्म बूँदों के रूप में पौधों तथा अन्य सतहों पर छिड़काव करने के लिए करते हैं। छिड़काव करने के लिए विभिन्न प्रकार के *नौजिलों* का प्रयोग आवश्कतानुसार किया जा सकता है। इस यंत्र की सहायता से धान, गेहूँ, शाक–सब्जी, दलहन तथा अन्य छोटी फसलों पर छिड़काव किया जा सकता है।

नैपसेक स्प्रेयर

यह यंत्र *बकेट स्प्रेयर* के सिद्धांत पर कार्य करता है। इस *स्प्रेयर* के 16 लीटर प्लास्टिक की टंकी में तैयार घोल को भरकर छिड़काव करने वाले व्यक्ति की पीठ पर उसमें लगे *बेल्ट* के माध्यम से बांध दिया जाता है। *स्प्रेयर* में लगे *हैंडल* को चलाने से *प्रेशर चैम्बर* में दबाव उत्पन्न होता है और टंकी में तैयार घोल पाइप के माध्यम से बाहर आने लगता है। *नोजल* के द्वारा छिड़काव को नियंत्रित किया जा सकता है। इससे एक दिन में लगभग एक हेक्टेयर क्षेत्रफल में छिड़काव किया जा सकता है।

हाइड्रोलिक स्प्रेयर

यह विद्युत शक्ति अथवा बैटरी चालित *स्प्रेयर* है। इसकी सहायता से 12–15 मीटर की उँचाई के पौधों एवं फसलों में छिड़काव का कार्य सुगमतापूर्वक किया जा सकता है। इस *स्प्रेयर* की मदद से हम प्रतिदिन 6–8 हेक्टेयर फसल में रासायनों का प्रयोग कर सकते हैं।

फुटस्प्रेयर

यह पैर के माध्यम से चलने वाला यंत्र है जिसमें इस *स्प्रेयर* का पंप लोहे, अथवा लकड़ी से बने स्टैण्ड में *फिक्स* रहता है। *पम्प सिलेंण्डर* में पैर से चलाकर दाब उत्पन्न किया जाता है। इस *पम्प* से 200 पौंड दाब द्वारा 20 फीट ऊँचाई पर छिड़काव कर सकते है।

मिस्ट बनाने वाला स्प्रेयर

इस यंत्र की सहायता से हम बागानों एवं ऊँचे पेड़ों पर छिड़काव कर सकते हैं।

अल्ट्रा लो वोल्यूम स्प्रेयर

हवाई जहाज द्वारा छिड़काव विशेषकर इसी यंत्र द्वारा होता है। जो कि ज्यादा क्षेत्रफल में छिड़काव हेतु उपयोगी होता है।

बुरकाव हेतु उपयोगी यंत्र

रोटरी डस्टर

यह काफी प्रचलित यंत्र है इसके भीतर ही धूल को धुमाने हेतु पंखी लगी होती है पंखी को हैंडल द्वारा घुमाते है, फलतः धूल नली से बाहर आ जाती है। इस *डस्टर* का प्रयोग विभिन्न फसलों एवं गोदामों को उपचारित करने में करते है।

नैपसैक डस्टर

इस *डस्टर* को कंधे पर लटकाकर बुरकाव करते है तथा इससे एक दिन में 1.0–1.5 हेक्टेयर प्रक्षेत्र में बुरकाव कर सकते हैं।

पावर चालित डस्टर

इस यंत्र की सहायता से हम प्रति घंटे 7 किलोग्राम *डस्ट* बुरकाव कर सकते है तथा प्रतिदिन 10–12 हेक्टेयर क्षेत्र बुरकाव कर सकते है। इसका प्रयोग ज्यादा क्षेत्रफल में बुरकाव करने हेतु उपयुक्त रहता है।

कीटनाशकों की आवश्यक मात्रा की गणना

सर्वप्रथम फसल को नुकसान पहुँचाने वाले कीटों को चिन्हित करने के बाद कृषि विशेषज्ञ से सलाह करके उचित कीटनाशी, संस्तुत दर, छिड़काव हेतु आवश्यक पानी की मात्रा

पावर चालित डस्टर

फुट स्प्रेयर

बूम स्प्रेयर

हाइड्रोलिक स्प्रेयर

तथा छिड़काव के समय का निर्धारण कर लें। फसलों की कीटों से सुरक्षा के लिए किसानों को कीटनाशी छिड़काव/बुरकाव की अच्छी तकनीक एवं संस्तुत मात्रा की गणना का ज्ञान होना अति आवश्यक है। जिससे फसल की उत्पादन क्षमता प्रभावित न हो।

गणना–1

गन्ने की फसल में पायरिला, कीट के नियंत्रण हेतु कीटनाशी की सान्द्रता प्रतिशत ज्ञात करें। जिसकी 1.5 लीटर मात्रा 1000 लीटर पानी में घोल तैयार है तथा जिसमें सक्रिय तत्व 35 प्रतिशत हो।

$$\text{कीटनाशी की सान्द्रता प्रतिशत} = \frac{\text{कीटनाशी की मात्रा X कीटनाशी में उपस्थित सक्रिय तत्व}}{\text{तैयार किये गये घोल की मात्रा}}$$

कीटनाशी की सान्द्रता प्रतिशत – 1.5X35/1000 = 0.0525 प्रतिशत सान्द्रता

गणना–2

गन्ने में छिद्रक कीटों की रोकथाम हेतु मोनोक्रोटोफॉस 40 ई.सी. का प्रयोग किया जाता है। इस कीटनाशी के आवश्यक मात्रा/हेक्टेयर की गणना निम्नवत करें:

- मोनोक्रोटोफॉस की सान्द्रता – 40 प्रतिशत
- पानी की आवश्यक मात्रा – 1000 लीटर
- अनुशंसित सान्द्रता – 0.04 प्रतिशत

$$\text{कीटनाशी की मात्रा} = \frac{\text{प्रतिशत आवश्यक सान्द्रता X पानी की मात्रा}}{\text{कीटनाशी में उपलब्ध सक्रिय तत्व}}$$

मोनोक्रोटोफॉस की आवश्यकता (ली.) – 0.04 X 1000/40 = 1 लीटर मोनोक्रोटोफॉस

भारतीय सभ्यता की अविरल धारा प्रमुख रूप हिंदी भाषा से ही जीवंत तथा सुरक्षित रह पाई है।

-अमित शाह

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

जलवायु परिवर्तन के दृष्टिकोण में गेहूँ का पर्णीय झुलसा रोगः समस्या एवं निदान

जीतेन्द्र कुमार त्रिपाठी, विशाल त्यागी, गोपी किशन, कल्याणी कुमारी एवं राजेश कुमार चौहान

भाकृअनुप–भारतीय बीज विज्ञान संस्थान, मऊ

यह बात सिद्ध हो चुकी है कि हमारे वायुमंडल मे *ग्रीन हाउस* गैसों की वृद्धि ही जलवायु परिवर्तन का कारण है। यदि कोई भ्रम रह गया है तो भारत में मानसून की आँखमिचौली और पूरी दुनिया में जलवायु का अस्थिर व्यवहार इसके प्रमाण हैं। यदि तापमान में दो डिग्री सेल्सियस की बढ़ोतरी हो जाए तो पूरा पारिस्थितिकी तंत्र बिगड़ जायेगा। 19वीं सदी के आरम्भ से अब तक विश्व के तापमान में 0.6 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि हो चुकी है। इस संदर्भ में *इंटर गवर्नमेंटल पैनल ऑन क्लाइमेट चेंज (आईपीसीसी)* का मानना है कि 2050 तक वैश्विक तापमान में 0.5 से 2.5 डिग्री सेल्सियस के बीच वृद्धि होगी, जबकि 2100 तक यह अनुमानित वृद्धि 1.4 से 5.8 डिग्री सेल्सियस के बीच हो जायेगी। एक आँकलन के अनुसार प्रति वर्ष लगभग 10 *बिलियन मीट्रिक* टन कार्बन हमारे वायुमंडल में छोड़ा जा रहा है जिसके परिणामस्वरूप इस सदी के अंत तक वैश्विक तापमान में लगभग 1.1 और 2.9 डिग्री सेल्सियस के बीच बढ़ोत्तरी सम्भव है।

इस परिवर्तन के कारण कृषि पर काफी नकारात्मक असर पड़ रहा है, जिससे पैदावार में कमी के कारण खाद्यान्न संकट की समस्या भी उत्पन्न हो रही है। फलस्वरूप पूरे संसार को खादय सुरक्षा की गंभीर समस्याओं से मुकाबला करना पड़ सकता है। समुचित विकास ही इन सभी समस्याओं को जड़ से दूर करनें का सबसे बेहतर उपाय है। सुप्रसिद्व समाज विज्ञानी जॉन रॉल्स बिल्कुल सही कहते हैं कि न्याय का मतलब ही होता है, कल्याण के दायरें में सभी व्यक्तियों का शामिल होना।

वर्तमान में बदलती जलवायु एवं एक समान जीन वाली प्रजातियों के चयन से गेहूँ का पर्णीय झुलसा पूरे देश की एक ज्वलंत समस्या हो गयी है जबकि लगभग 15 वर्ष पूर्व यह भारत के पूर्वी मैदानी, मध्य एवं दक्षिण भारत के गेहूँ उत्पादक क्षेत्रों में ही पाया जाता है। कृषि तकनीक के विकास, नयी प्रजातियों का चयन और नयी सस्य क्रियाओं के अनुपालन के बाद इस रोग के प्रकोप में आश्चर्यजनक रूप से बढ़ोतरी हुई है। इस रोग का प्रकोप पंजाब, हरियाणा, मध्य प्रदेश, बिहार एवं उत्तर प्रदेश के साथ–साथ सभी गेहूँ उत्पादक क्षेत्रों में पाया गया है। इस बीमारी से गेहूँ के उत्पादन में लगभग 20 प्रतिशत की हानि का आँकलन किया गया है। भारत में सर्वप्रथम 1924 में इस बीमारी को कुलकर्णी एवं रे के द्वारा संज्ञान में लाया गया। वर्ष 1974 में प्रभु एवं सिंह के एक आँकलन के अनुसार बिहार में उगाई जाने वाली गेहूँ की प्रजाति एन.पी. 830 में लगभग 60 प्रतिशत तक उपज में कमी पायी गयी।

पर्णीय झुलसा रोग *बाईपोलेरिस सोरोकिनियना* एवं *अल्टरनेरिया टिटिसना, अल्टरनेरिया अल्टरनाता, करबुलेरियों लुनाता* नामक कवकों में से किसी एक या सभी के सम्मिलित होने से होता है। ये कवक गेहूँ की कटाई के बाद गेहूँ के अवशेष, जो जमीन पर रह जाते हैं उन पर शुष्क अवस्था में जीवित रहते हैं। रोग से संक्रमित बीज पर भी ये कवक भण्डारण के दौरान जीवित अवस्था में बने रहते हैं। बीज की बुवाई के पश्चात ये कवक अपनें आपको विकसित करके पौधे में रोग पैदा कर देते हैं।

पर्णीय झुलसा के लक्षण

सर्वप्रथम यह रोग 5–7 सप्ताह की अवस्था वाली फसल पर दिखाई देता है। यह रोग पौधे की निचली पत्तियों से शुरू होता है और धीरे–धीरे ऊपर की पत्तियों तक फैल जाता है। इसके लक्षण पत्तियों पर प्रारंभिक अवस्था में छोटे–छोटे गोल धब्बे के रूप में उभरते हैं। एक सप्ताह में इनका आकार अण्डाकार होकर लंबे धब्बे के रूप में उभर कर आता है। धब्बों के चारों तरफ पीली आभा स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगती है। पन्द्रह दिन के अन्दर धब्बों का रंग काला और भूरा हो जाता है तथा वे एक दूसरे से मिलते हुये दिखाई देते हैं। धब्बों के बीच में देखने पर रोग कारकों के बीजाणु देखे जा सकते हैं। पर्णीय झुलसा बीमारी प्रमुखतः गेहूँ की प्रजाति, उसकी अवस्था, तापमान और आर्द्रता पर निर्भर करती है। उपर्युक्त कारकों की सम्पूर्ण जानकारी, रोग को समझनें और नियंत्रित करनें में बहुत ही उपयोगी है। भारत में उस

पर्णीय झुलसा रोग से ग्रसित गेहूँ के पौधे एवं बीज

जलवायु एवं परिस्थितियों में जहाँ औसत तापमान 17 डिग्री सेल्सियस से 30 डिग्री सेल्सियस के बीच हो तथा पत्तियों पर आठ से दस घंटे ओस का पानी रूकनें की स्थिति बन रही हो इसके साथ ही साथ गेहूँ की सारी पत्तियां निकल आयी हों, यह रोग बहुत ही कम समय में विनाशकारी हो जाता है। इस तरह की परिस्थितियां जनवरी एवं फरवरी में पूर्वी मैदानी क्षेत्रों में होती है। यदि इन दिनों में धीरे–धीरे दो से तीन दिन तक वर्षा हो जाये तो यह रोग महामारी का रूप ले सकता है और देश में खाद्यान्न की समस्या बन सकती है।

रोग प्रबंधन

आधुनिक खेती एवं जलवायु परिवर्तन का ध्यान रखते हुए इस बीमारी के प्रबंधन हेतु निम्नवत उपायों का समायोजित उपयोग करने की आवश्यकता है:

1. स्वस्थ एवं प्रमाणित बीजों का उपयोग

जैसा की पहले ही बताया गया है कि यह एक बीजजनित रोग है जो बीजों से फैलता है तो बीजों का चयन करने से पहले ये सुनिश्चित करना अति आवश्यक है कि बीज स्वस्थ हो तथा प्रमाणित स्रोतों से ही ख़रीदा गया हो।

2. बीजोपचार

क्योंकि यह रोग बाहय एवं आंतरिक बीजजनित भी हेाता है इसलिए उन क्षेत्रों में जहां इस रोग का प्रकोप अधिक होता है, बीज शोधन एक प्रभावी तरीका पाया गया है। वीटावैक्स 2–3 ग्राम मात्रा को प्रति कि.ग्रा. बीज या राक्सिल 12 ग्राम मात्रा को प्रति कि.ग्रा. बीज के अनुपात में बुवाई से पहले बीजोपचार करके बोना चाहिए।

3. प्रजातियों का चयन

पिछले पन्द्रह वर्षों के शोध के प्रजनन के माध्यम से अनेक रोगरोधी प्रजातियों का विकास किया गया पर ये सारी प्रजातियां सामान्य अवस्था में रोग से लड़ने की क्षमता रखती हैं। लेकिन यदि पत्तियों पर लगातार दो से तीन दिन पानी जमा हो जाए तो रोग प्रतिरोधी क्षमता घट जाती है। सूखे की दशा में रोग रोधी प्रजातियॉ पूर्णतया प्रभावकारी होती हैं। पूर्वी उत्तर प्रदेश एवं गंगा के मैदानी क्षेत्रों के लिये निम्नलिखित रोगरोधी प्रजातियां संस्तुति की गयी हैं:

एच.डी. 2967, एच.पी. 1761, एच.डी. 2733, एच.पी. 1744, एच.पी. 1731, एच.यू.डब्लू. 468, डी.बी.डब्लू. 14, पी.बी.डब्लू. 550, एच.डब्लू. 2045, बी.एल. 738, एच.एस. 277 एवं एच.डी. 2189

4. जल प्रबंधन

अपने देश में वर्तमान में सामान्यतः धान–गेहूँ फसल चक्र का चलन हो चला है। इस फसल चक्र की दशा में, सिंचाई एक कुशल रोग प्रबंधन का माध्यम सिद्ध हुई है। यदि खेत में 10 घंटे से ज्यादा के जल भराव से बचा जाए तो इस रोग से बहुत हद तक बचाव हो जाता है। क्योंकि पौधों की पत्तियों पर दस घंटे से अधिक जल जमाव रोग के फैलने एवं विनाशकारी होने के लिए उपर्युक्त वातावरण होता है। इस प्रकार जल प्रबंधन इस रोग के प्रबंधन मे एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

5. रासायनिक उर्वरकों का संतुलित प्रयोग

संस्तुति के अनुसार उर्वरकों का संतुलित मात्रा में उपयोग करने से इस रोग को नियन्त्रित रखा जा सकता है। पौधों की रोगरोधक क्षमता पोटेशियम की कमी से घटती है। अतः बड़े उत्पादकों को इसका समुचित प्रयोग अवश्य करना चाहिए। प्रयोगों के माध्यम से यह सिद्ध किया जा चुका है कि संस्तुति के अनुसार पोटेशियम का उपयोग करने से रोग पर आसानी से काबू पाया जा सकता है। इसके अलावा नत्रजन का संतुलित उपयोग भी इस बीमारी की रोकथाम में लिए बहुत आवश्यक होता है। अतः आवश्यकता से अधिक नत्रजन का उपयोग खेतों में नही करना चाहिए।

6. जैविक नियंत्रण

जैव नियंत्रक जैसे *ट्राइकोडर्मा विरिडी* और *ट्राइकोडर्मा हर्जियानम* की 4–5 ग्राम मात्रा को प्रति कि.ग्रा. बीज के अनुपात में बुवाई से पहले बीजोपचार करके बोना चाहिए।

7. फफूँदनाशी का पर्णीय छिड़काव

पर्णीय झुलसा के लक्षण की गम्भीरता को वातावरण की परिस्थितियों के साथ जोड़कर पर्णीय छिड़काव करना चाहिये। पर्णीय झुलसा रोग पूर्वी गंगीय मैदान में धान–गेहूँ फसल चक्र आधारित कृषि में अत्यधिक विनाशकारी है। इस वातावरण के लिए संस्तुत अनेक प्रजातियों में यह रोग पाया जाता है।

फफूंदीनाशक दवाओं का प्रयोग पर्णीय झुलसा रोग को कम करनें व उसके रोकथाम में आर्थिक रूप से अत्यधिक प्रभावी होता है। इस रोग में प्रयोग करने योग्य रसायनों का विवरण निम्नवत है:

- **टिल्ट 25 ई.सी.**: 500 मिलीलीटर प्रति हेक्टेयर के अनुपात में लक्षण दिखाई देने के पश्चात 15 दिन के अन्तराल पर 400–500 लीटर पानी में मिलाकर तीन बार छिड़काव करें।
- **मैंकोजेब 75 ई.सी.**: 2.5 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर के अनुपात में 15 दिन के अन्तराल पर 400–500 लीटर पानी में मिलाकर तीन बार छिडकाव करें।
- **प्लूसिलोजोल 4005 या प्रोपिकोनाजोल 25 ई.सी.**: 500 मिलीलीटर प्रति हेक्टेयर के अनुपात में लक्षण दिखाई देने के पश्चात 25 दिन के अन्तराल पर 400–500 लीटर पानी में मिलाकर दो बार छिड़काव करें।

8. अन्य उपाय

- खेत को हमेशा साफ रखें।
- सभी संक्रमित पोधों को जड़ सहित उखाड़कर खेत के बाहर निकाल देना चाहिए।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

गन्धी बग से धान को कैसे बचायें?

राघवेन्द्र तिवारी, वी.पी. जायसवाल, अरुण कुमार बैठा, अभय श्रीवास्तव, आशा गौर एवं दिव्या साहनी
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसन्धान संस्थान, लखनऊ

गंभीर रूप से प्रभावित धान के खेतों से एक प्रतिकूल गंध आने के कारण कीट को *गन्धी बग* बोला जाता है। धान की फसल में फूल आने के दौरान आमतौर से इस कीट का आक्रमण होता है। इसी समय भारी बारिश और उच्च आर्द्रता की शुरुआत भी होती है जिसमे इस कीट का प्रकोप तेज़ी से बढ़ता है। वयस्क और निम्फ दोनों ही पत्तियों, फूलों से तरल पदार्थ चूसते हैं। यह पौधों की युवावस्था से भोजन खाना पसंद करते हैं, ऐसे समय में जब अनाज के भीतर स्टार्च पूरी तरह से नहीं बनते हैं।

1. *लेप्टोकोरिसा एक्यूटा* वयस्क कीट लंबे पैरों और मुँह पर 2 लम्बे *एंटीना* के साथ लंबाई में लगभग 19 मि.मी. एवं 3–4 मि.मी. चौड़े होते हैं। वे हल्के पीले–हरे से पीले–भूरे रंग के होते हैं। सिर चौड़ा और लम्बाई एवं चौड़ाई में प्रकोष्ठ *(प्रोनोटम–थोरैक्स* पर पहली *प्लेट* की ऊपरी सतह) और स्कूटेलम (*स्कटेलम*–वक्ष पर त्रिकोणीय आकार की *प्लेट*, प्रकोष्ठ के विपरीत) के समान पाया जाता है। इन कीटो में गोलाकार एवं बाहर की तरफ उभरी हुई छोटी सरल आँखें होती हैं, जिन्हें देख पाना मुश्किल होता है। वयस्क आमतौर पर झुंड में पाए जाते हैं। खतरे की आशंका होने पर, वयस्क एक अप्रिय गंध का उत्सर्जन करते हैं, जो कि एक तेज़ बदबू वाले कीड़े *पेंटाटोमिडे* द्वारा उत्सर्जित गंध से अधिक अप्रिय होती है।
2. *लेप्टोकोरिसा अकुटा* के अंडे अंडाकार एवं सतह से चपटे हुए होते हैं। कीट के अंडे पत्तियों की ऊपरी सतह पर सीधी पंक्तियों में 10–20 के समूहों में मिलते है। शुरुआत में अंडे क्रीम–पीले रंग के होते हैं जो कि लगभग एक सप्ताह के बाद लाल–भूरे रंग में बदल जाते हैं।
3. एक सप्ताह के बाद अण्डों से बच्चे (*निम्फ*) निकलना शुरू हो जाते हैं, जो कि 3–4 घंटों के भीतर ही भोजन करना शुरू कर देते हैं। यह पूरी तरह से विकसित होने पर लगभग 14–16 मि.मी. लंबे हो जाते हैं। *निम्फ* पतले पंख रहित ज्यादातर पीले–हरे रंग के होते हैं एवं जैसे–जैसे यह बड़ा होता है, हरा रंग गहरा होता जाता है। शुरुआत में सभी *निम्फ* एक समान ही दिखते है। अलडीनी उप परिवार में अन्य प्रजातियों के विपरीत, *लेप्टोकोरिसा एक्यूटा* के *निम्फ* चींटियों की नकल नहीं करते हैं।

फसल में नुकसान कैसे पता करें?

छोटे या सिकुड़े हुए दाने, विकृत या धब्बेदार दाने, खाली अनाज तथा सीधा पुष्पगुच्छ वाले पौधों से फसल में क्षति का अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है। पत्री के मध्य में लाल भूरे रंग के चमकदार अंडे, चावल के दानों में तरल पदार्थ चूसते हुए पतले व भूरे हरे रंग के अर्भक व व्यस्क कीट तथा धान के खेतों से आने वाली अप्रिय गंध फसल में गन्धी बग की उपस्थिति की पुष्टि करती है।

नियंत्रण

- एक गाँव में एक ही समय में रोपण धान की बग समस्याओं को कम करने में मदद करता है।
- बग की अधिक आबादी से बचने के लिए देर से पकने वाली किस्मों का उपयोग करें
- खेत और उसके आस पास के क्षेत्र से खरपतवार को नष्ट कर दें, जिससे कीट के गुणन को रोकने में मदद मिलती है।

जैविक नियंत्रण

- धान के कीड़ों को निकालने के लिए सुगंधित साबुन (जैसे कि *लेमन ग्रास*) के घोल का छिड़काव करें।
- खेतों में सुबह जल्दी या दोपहर के बाद मच्छरदानी लगाकर बग को पकड़ना प्रभावी हो सकता है।
- ज्यादा व्यापक कीटनाशकों का छिड़काव न करके लाभकारी कीड़ों जैसे ततैया, टिड्डी, और मकड़ियों को संरक्षित करें।
- ततैया, गन्धी *बग* के अंडों को परजीवी बना लेते हैं और टिड्डे इनका शिकार करते हैं।
- मकड़ियां, *कोक्सीनेलिड बीटल (लेडीबीटल)* और *ड्रैगन फ्लाई* गन्धी *बग* के वयस्क और *निम्फ* दोनों का ही शिकार करते हैं।

रासायनिक नियंत्रण

- मैलाथियान डस्ट 5 प्रतिशत/8 कि.ग्रा. ग्राम/एकड़ या मैलाथियान 50 ई.सी./2 मि.ली./लीटर (350 मि.ली./एकड़) का पुष्पगुच्छ पर छिड़काव करें।
- छिडकाव के लिए इस रसायन की आवश्यकता प्रति एकड़ 270 लीटर होती है।
- अंधाधुंध कीटनाशक का उपयोग जैविक नियंत्रण को बाधित करता है, जिसके परिणामस्वरूप कीट का पुनरुत्थान हो सकता है। अतः रसायनिक कीटनाशकों के उपयोग से बचें।
- गन्धी *बग* को ख़त्म करने के लिए कोई भी कीटनाशक का उपयोग करने से पहले सुझाव और मार्गदर्शन के लिए फसल सुरक्षा विशेषज्ञ से अवश्य संपर्क करें।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

जैविक कृषि की आधुनिक तकनीकियाँ एवं उसके लाभ

आदित्य कुमार सिंह[1] नरेन्द्र सिंह[2] एवं एच.एस. कुशवाहा[3]

[1]क्षेत्रीय कृषि अनुसंधान केन्द्र, भरारी, झाँसी
[2]बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, बांदा
[3]महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट, सतना

जैविक कृषि इस प्रकार की कृषि है जो संश्लेषित उर्वरकों, कीटनाशकों, वृद्धि–नियंत्रकों एवं मवेशियों के भोजन उत्पादों इत्यादि के प्रयोग से बचती है। जैव कृषि पूर्ण रूप से फसलों के चक्रीकरण, पौधों के बचे–अवशेष, पशुओं द्वारा प्रदत्त खाद, फलीदार पौधों, हरी खाद, फार्म के जैविक अपशिष्ट पदार्थ एवं जैव उर्वरकों, यांत्रिक खेती, खनिज प्रदान करने वाली चट्टानें इन सभी पर निर्भर हैं। मृदा की उत्पादकता को बनाये रखने के लिये पौधों को पोषक तत्वों एवं जैविक पीड़क नियंत्रक, खरपतवारों का नियंत्रण, कीटों एवं अन्य रोगों को नियंत्रित करना पड़ता है। सभी प्रकार के कृषि उत्पादों जैसे अनाज, मांस, दुग्ध पदार्थ, अण्डे, रेशे जैसे कपास, पटसन फूल, इत्यादि इस प्रणाली द्वारा प्राप्त किए जा सकते हैं। इस प्रकार जैविक कृषि आगामी कई पीढ़ियों के लिये एक दीर्घोपयोगी जीवन शैली को तैयार करने में सहयोग देती है। जैविक कृषि, मृदा के जीवित घटकों की सही देख–रेख द्वारा स्वस्थ मृदा को तैयार करता है, इस कार्य में खेतों में पाये जाने वाले सूक्ष्मजीव एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, वे पोषक तत्वों के परिवर्तन व अन्तरण में सहायक हैं। इस प्रणाली के प्रयोग से न केवल भूमि की रचना सशक्त होती है, बल्कि उसकी पानी को रोकने की क्षमता में भी विकास होता है। ऐसे कृषक कुछ खास किस्म की फसलें, खाद व जैव पदार्थों के हस्तक्षेप द्वारा भूमि की उर्वरता को बनाये रखते हैं। इस प्रणाली से ऐसे स्वस्थ पौधों की पैदावार होती है, जो पीड़कों व कीटाणुओं के प्रहार से अधिक सुरक्षित हैं।

जैव कृषि और जैव खाद्य पदार्थों के कुछ महत्त्वपूर्ण लाभ इस प्रकार हैं::

जैव कृषि स्वयं में एक विज्ञान है जिसे कोई भी पारम्परिक (साधारण) किसान आसानी से सीख सकता है।

यह पाया गया है कि यदि पारम्परिक किसान साधारण प्रणाली की कृषि की बजाय जैविक कृषि का प्रयोग करता है, तो वह पारम्परिक कृषि में 25% से अधिक उत्पादन की दर में कमी ला सकता है। इस प्रणाली के प्रयोग से महँगे कृत्रिम उर्वरकों व पीड़कनाशकों का उपयोग लगभग न के बराबर होना है, भूमि की सतह का अपरदन 50% तक कम हो जाता है। यही नहीं, फसल का उत्पादन पाँच–गुना बढ़ जाता है। यदि प्रयोजन की प्रक्रिया सुनियोजित हो, तो एक पारम्परिक किसान बहुत आसानी से जैव कृषि के नये तरीके अपनाकर प्रभावपूर्ण ढंग से उनका प्रयोग कर सकता है।

जैव कृषि की प्रणालियाँ केवल कृषकों और उपभोक्ताओं को ही लाभ नहीं पहुँचाती, बल्कि दूध की डेरियों को भी लाभ पहुँचाती है। जब डेरियाँ अपने गायों–भैंसों को बिना रसायनों का चारा या जैव भोजन एवं जैव खेतों में चराते हैं, तब न केवल इन गायों–भैंसों का स्वास्थ्य बेहतर होता है, ये कम बीमार पड़ते हैं और रोग नहीं पनपते हैं। अंततः उपभोक्ताओं को स्वादिष्ट दूध भी प्राप्त होता है।

- जैव कृषि मृदा को बढ़ावा देती है जिसमें जीवन होता है एवं जो सूक्ष्म तत्वों से भरपूर, स्वस्थ होती है एवं जिसका फसल के लिये कई दशकों तक बगैर दोहन के प्रयोग किया जा सकता है।
- उपभोक्ताओं द्वारा खरीदे गये जैव खाद्य पदार्थ काफी स्वादिष्ट होते हैं। कीमतों में मामूली अंतर के कारण उपभोक्ता जैविक रूप से उगे खाद्य पदार्थों का स्वाद चख सकते हैं एवं जैविक रूप से उगाए गए खाद्य उत्पादों की गुणवत्ता में अंतर देखकर पता लगा सकते हैं।
- जैविक रूप से उगे हुए उत्पाद हानिकारक रसायनों, कृत्रिम सुगंध एवं परिरक्षकों से रहित होते हैं, जिसके कारण उपभोक्ताओं को गैर–जैविक रीति से उगे पदार्थों की तुलना में अधिक पैसा खर्च करना पड़ता है। आप हमेशा जैविक रूप से उत्पादित एवं पारम्परिक ढंग से उगाये पदार्थों के स्वाद में अंतर कर सकते हैं।

वर्मीकम्पोस्ट

वर्मीकम्पोस्ट (केंचुआ खाद) पशुओं के अपशिष्ट पदार्थ (मल–मूत्र), फसलों के अवशेषों एवं कृषि– औद्योगिक कूड़े के कुशल चक्रीकरण की एक तकनीक है। जैविक पदार्थों को खाद में परिवर्तित करने की प्रक्रिया मुख्य रूप से सूक्ष्म जैविक स्तर की है। जैविक अपशिष्टों से *वर्मीकम्पोस्ट* (केचुआ खाद) में परिवर्तित करने में केंचुओं की महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

वर्मीकम्पोट (केचुआ खाद) को हर प्रकार के जैविक अवशेषों से तैयार किया जा सकता है।

कृषि अवशेष

सूखा जैविक अपशिष्ट (जैसे ज्वार का भूसा, मवेशी को चारा खिलाने के बाद जो धान का भूसा बचता है, सूखे पत्ते, अरहर का अवशेष, मूंगफली का छिलका और गेहूँ के दानों के छिलके या भूसी), सब्जियों का कूड़ा–करकट, सोयाबीन के अवशेष, अपतृण (विशेषकर *पार्थेनियम हिस्टेरोफोरस*, जिसे व्याआरीभामा या पैण्डरफुल या कांग्रेस अपतृण (फूल आने से पहले की अवस्था में) के नाम से भी जाना जाता है

- गन्ने का रेशा उत्पादन के अपशिष्ट
- रेशम के उत्पादन की प्रक्रिया से निकला कूड़ा–करकट
- पशुओं की खाद
- डेयरी (दुग्ध पदार्थों) और मुर्गी द्वारा निकला कूड़ा–करकट
- खाद्य–उद्योगों द्वारा छोड़ा गया अवशेष
- *म्यूनिसिपल* (नगर निगम) के ठोस रूप में छोड़े गए अपशिष्ट
- *बायोगैस* (जैविक तत्वों से उत्पन्न गैस) का कूड़ा
- गन्ने की फैक्ट्रियों से निकला कूड़ा

एकीकृत कीट प्रबंधन

पीड़कों के नियंत्रण का सबसे सम्पोषित तरीका एक सावधानीपूर्वक तैयार किया गया एकीकृत पीड़क प्रबंधन के रूप में *डिजाइन* किया गया एक कार्यक्रम है। इस विधि में, प्रत्येक फसल की किस्म व उस पर वार करने वाले पीड़कों को परितंत्र के अभिन्न अंग के रूप में माना जाता है। इसके पश्चात, किसान एक ऐसी नियंत्रण प्रणाली को विकसित करते हैं जिसमें सही समय और सही अनुक्रम में जुताई, जैविक व रासायनिक विधियों का प्रयोग होता है।

इस एकीकृत कीट प्रबंधन (IPM) प्रणाली का उद्देश्य न केवल पीड़कों की जनसंख्या को पूर्ण रूप से समाप्त करना है बल्कि पौधों के विघटन को आर्थिक रूप से नष्ट होने से बचाना है।

किसान खेतों की देखभाल करते हैं और जब वे पीड़कों को जरूरत से ज्यादा पाते हैं, तब वे उनके नियंत्रण में पहले जैविक विधियों और जुताई की प्रक्रियाओं का इस्तेमाल करते हैं और यदि तब भी काम नहीं बनता, तब कीटनाशकों की छोटी मात्रा का प्रयोग करते हैं। जिससे कीटनाशक अक्सर पौधों से ही प्रदत्त होते हैं जैसे वे अंतिम उत्पाद हों।

जैविक नियंत्रण की विधि में निम्नलिखित सम्मिलित हैं:

(क) नीम आधारित जैविक कीटनाशक बनाने की आधुनिक तकनीक

नीम आधारित जैविक कीटनाशक (*बायोपेस्टीसाइड्स*) समन्वित कीट प्रबन्धन में फसलों को कीट व्याधि से बचाने के लिए एक महत्वपूर्ण और उपयुक्त घटक मानी गई है। इनके उपयोग से पर्यावरण को बिना नुकसान पहुँचाए फसलों के रस चूसने वाले कीटों, मधुआ, थ्रिप्स, सफेद मक्खी इत्यादि पर प्रभावी नियंत्रण किया जा सकता है। आजकल कई बहुराष्ट्रीय या राष्ट्रीय कम्पनियाँ नीम आधारित जैव कीटनाशक के उत्पादों का विपणन कर रही हैं, जो अपेक्षाकृत काफी महंगे होते है।

जबकि कृषक बन्धु इन उत्पादो को अपने खेत या घर पर स्वयं बना सकते हैं, जिसकी विधि काफी सरल है। नीम आधारित जैविक कीटनाशक बनाने की सरल तकनीक नीचे वर्णित है। कृपया इसका अधिकाधिक प्रयोग करें।

निबौली को एकत्रित करना–एक सूती कपड़ा या मच्छरदानी को निबौली से लदे नीम के पेड़ के नीचे बिछायें। अब टहनियों को हिलायें और पके फलों को कपड़े पर गिराकर एकत्रित करें तथा अनावश्यक फलों की अलग कर दें।

निबौली से गिरी (बीज) अलग करना–एकत्रित निबौलियों को पानी में भरी बाल्टी में डालें। हाथ से मसलकर गूदे को बीज से अलग करके बीजो को एकत्रित करना चाहिए।

बीजों की गिरी को सुखाना और जमा करना–बीजों को सूती कपड़े पर बिछाकर 7 से 8 दिनों तक सुखावें, फिर हवादार बोरी में भरकर जमा कर लेवें।

छिलका हटाना–बीजों के ऊपर के सख्त छिलकों को तोड़कर अन्दर की गिरी निकाल लें।

गिरी को पीसना–एकत्रित गिरी को पीसकर महीन पाउडर बना लें।

पाउडर का घोल बनाना–उक्त 2 किलो ग्राम पाउडर को 10 लीटर पानी में भिगोकर रातभर रख दें।

घोल तैयार करना–अगले दिन सुबह घोल को सूती कपड़े से छान लें, अब छने हुए घोल में 100 लीटर पानी मिलावें।

घोल का छिड़काव–आवश्यकता समझें तो घोल (नीम आधारित जैविक कीटनाशक) की साद्रता जाँच करा लेवें अन्यथा *स्प्रेयर* में डाल कर अपने खेत की खड़ी फसल में सिफारिश अनुसार उपयोग में लेवें।

इस प्रकार किसान भाई बिना किसी खर्च के नीम आधारित जैविक कीटनाशक अपने घर पर तैयार कर सकते हैं, जो कि एकदम शुद्ध नीम आधारित जैव कीटनाशक होगा और अपनी जैविक फसल पर कीट और रोग रोकथाम के लिए आवश्यकतानुसार इसका प्रयोग कर सकते हैं।

(ख) प्राकृतिक परभक्षी, परजीवी एवं रोगजनकों इत्यादि का प्रयोग करते हैं। इनके निम्नलिखित उदाहरण हैं:

- *रेड स्पाइडर माइट* नामक एक पीड़क खीरे के पौधे पर वास करता है। इसका नियंत्रण एक ऐसे परभक्षी जीव के माध्यम से किया जाता है जो *रेड स्पाइडर माइट* को खाता है।
- कैलिफोर्निया में संतरों को भारी नुकसान पहुँचाने वाले *स्केल* कीटों का नियंत्रण ऑस्ट्रेलियाई लेडीबर्ड द्वारा किया जाता है जो उन कीटों का भक्षण करती है।
- कसावा पौधे को नष्ट करने वाले पीली *बग* पीड़क का नियंत्रण उसके दुश्मन, *पैरासिटॉइड वास्प* के माध्यम से किया जाता है।
- कीटों के सामान्य जीवन–चक्र पर अवरोध पैदा करने के लिए उन हॉर्मोनों का प्रयोग किया जाता है जो उन्हें और अधिक परिपक्व होने एवं प्रजनन करने एवं अधिक उत्पन्न होने से रोकते हैं।

(ग) जुताई की विधियाँ

पीड़कों से छुटकारा पाने के लिये फसलों का चक्रीकरण, *पॉलीकल्चर* (बहु–कृषि प्रणाली) अथवा सम्मिलित फसलीकरण जैसी विविध जुताई की विधियों का प्रयोग किया जा सकता है।

(घ) एक आखिरी विकल्प के रूप में कुछ कीटनाशकों का भी प्रयोग किया जाता है। ये मुख्यतः पौधों से ही निकाले गए होते हैं (उदाहरणः पायरेथ्रम और रोटेनोन)।

(ड़) आनुवंशिक इंजीनियरिंग की प्रक्रियाओं के माध्यम से कुछ ऐसे पौधों का निर्माण हो सकता है जो पीड़कों व बीमारियों, दोनों का ही जमकर मुकाबला कर सके। इसका एक उदाहरण *बीटी* कपास है जो कि *बैसिलस थुरिनजिनेसिस* नामक जीवाणु के जीन में पाया जाता है। इसको कपास के पौधे में डालने से कपास का पौधा पीड़कों का मुकाबला कर सकता है।

किसी भी पीड़क नियंत्रण कार्यक्रम की तरह, इसकी भी कुछ कमियाँ हैं:

- हर एक पीड़क के विषय में किसानों को विशेषज्ञों जैसा ज्ञान होना अनिवार्य है।
- पारम्परिक पीड़कनाशकों की तुलना में ये धीमी गति से कार्य करते हैं।
- एक क्षेत्र में पाए गए पौधों के संदर्भ में जिन विधियों का विकास हुआ है, उन्हें किसी भी और क्षेत्र में इस कारण लागू नहीं किया जा सकता कि उनकी उगाने (वृद्धि) इत्यादि की स्थिति में अंतर है।
- हालाँकि आरम्भिक लागत कुछ ऊँची होंगी, परन्तु लम्बी अवधि में इनकी लागत बहुत कम हो जाएगी।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

कृषि में जैव–अवशेष का प्रबन्धन कर पर्यावरण संरक्षित बनाएं

दीपक पाण्डेय[1], सुधीर कुमार शुक्ल[2], उमेश चन्द्र पाण्डेय[3] एवं मनोज कुमार[4]

[1]चन्द्र भानु गुप्त कृषि स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बक्शी का तालाब, लखनऊ
[2,3]भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ
[4]कृषि विज्ञान केन्द्र, गनीवा, चित्रकूट

भारत में किसानों की बहुत बड़ी संख्या व्यावहारिक रूप से भी फसलों को उगाने के लिए परम्परागत विधि के पक्ष में रही है, जिसके कारण समाज में एक धारणा 'ज्यादा जुताई और ज्यादा उपज' एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में चलती रही। पिछले कुछ वर्षो से इस फसल चक्र में अत्यधिक वृद्धि होने के बावजूद इस फसलों की उत्पादकता में स्थिरता आ चुकी है। मृदा से पोषक तत्वों के अत्यधिक दोहन से मृदा में पोषक तत्वों की कमी होना, मृदा स्वास्थ्य में गिरावट, उर्वरकों एवं रसायनों का अधिक उपयोग, फसल अवशेषों को जलाने से पर्यावरण प्रदूषण एवं *ग्रीन हाउस* गैसों का उत्सर्जन आदि इन फसल प्रणालियों की मुख्य समस्याएं हैं। श्रमिकों की बढ़ती समस्या के कारण आजकल धान, कम्बाइन द्वारा कंटवाया जाता है। इसके बाद बहुतायत में फसल अवशेष खेत में ही रह जाते हैं। धान की कटाई के बाद और गेहूँ की बुवाई के बीच कम समय उपलब्धता होने एवं अन्य सस्ता विकल्प न होने के कारण किसानों द्वारा फसल अवशेष खेत में ही जला दिए जाते हैं। इसका एक कारण जागरुकता की कमी अथवा अच्छी तकनीकियों की अनुपलब्धता होना भी है। पुआल को जलाने पर निकलने वाली गैसों में 70 प्रतिशत कार्बन डाई ऑक्साइड, 7 प्रतिशत कार्बन मोनो ऑक्साइड, 0.66 प्रतिशत मिथेन एवं 2.09 प्रतिशत नाइट्रस ऑक्साइड होती है, जोकि हमारे वातावरण को अत्यधिक मात्रा में प्रदूषित कर रही है। उपरोक्त सभी गैस जलवायु परिवर्तन के लिए भी उत्तरदायी हैं। फसल अवशेषों के जलने से मृदा से 80 प्रतिशत नाइट्रोजन एवं गंधक, 25 प्रतिशत फॉस्फोरस और 21 प्रतिशत पोटाश नष्ट हो जाते है, जिसके कारण मृदा की उर्वरता भी दिन–प्रतिदिन घट रही है। फसल अवशेषों को खेत में जलाने से मृदा में कार्बन की मात्रा में भी कमी हो रही है। यह जल धारण क्षमता के कम होने का मुख्य कारण है। फसल अवशेषों को खेत में जला देने से मृदा में मौजूद लाभदायक जीवों की भी कमी होती जा रही है तथा भूमिगत जल भी प्रदूषित हो रहा है। जैसा कि हम जानते हैं कि पंजाब और हरियाणा राज्य फसल अवशेषों को जलाने में कुल प्रतिशत का 48 प्रतिशत साझेदारी करते हैं। इसको जलाने से कुछ लाभ भी हैं, जैसे कि हानिकारक कीट मर जाते हैं और गेहूँ की बुवाई तक खेत साफ हो जाता है। इन समस्याओं के समाधान के लिए जरूरी है कि फसल के अवशेषों का उचित प्रबंधन किया जाए। अवशेष प्रबंधन के लिए यह आवश्यक है कि पलवार या संरक्षित खेती को अपनाकर लगभग 30 प्रतिशत अवशेषों को मृदा की सतह पर रखा जाए। इससे मृदा में पर्याप्त नमी का संरक्षण होता है, फसल पर खरपतवारों का प्रकोप कम होता है और मृदा में उचित तापमान बना रहता है। मृदा में कार्बनिक पदार्थ बढ़ने से मृदा की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक संरचना में सुधार होता है जिससे पौधों की वृद्धि अच्छी होती है तथा मृदा क्षरण एवं उर्वरकों का ह्रास भी कम होता है। फसल अवशेषों को बिना जलाए कृषि कार्यों के लिए कई यंत्र विकसित किए गए हैं। इनमें हैप्पीसीडर, *स्ट्रॉबेलर, स्ट्रा कम्बाइन* एवं *जीरों टिलड्रिल* मुख्य हैं। परम्परागत तरीके से जुताई एवं बुआई की तुलना में *जीरोटिल सीडड्रिल* द्वारा एक हेक्टेयर में 22–25 लीटर डीजल, 10–15 प्रतिशत पानी एवं 40–70 प्रतिशत समय की बचत तथा उत्पादन लागत में ₹ 2,000 प्रति हेक्टेयर की कमी की जा सकती है। परम्परागत बुवाई की तुलना में *हैप्पीसीडर* द्वारा बुवाई करने पर परिचालन की लागत में 50–60 प्रतिशत तक की कमी आती है। इस यंत्र की कार्य दक्षता 0.30 से 0.35 हेक्टेयर प्रति घण्टा है। *स्ट्रॉबेलर* द्वारा धान की कटाई के बाद बचे हुए अवशेषों के संग्रह से किसानों की आय में ₹ 1,000 / हेक्टेयर तक की बढ़ोत्तरी हो सकती है।

फसल अवशेषों को जलाने से शुष्क पदार्थ में मौजूदा गौण एवं सूक्ष्म पोषक, तत्वों का भारी मात्रा में ह्रास होता है। हमारे देश के कुछ क्षेत्रों में धान, गेहूँ, मक्का, ज्वार तथा बाजरा के अवशेषों को पशुओं के चारे के रूप से प्रयोग करते है। कपास, दलहनी और तिलहनी फसलों के अवशेषों को घरों में खाना पकाने में प्रयोग किया जाता है। इसलिए हमें फसल अवशेषों को जलाने से रोकना चाहिए और हमें किसानों को फसल अवशेषों के महत्व के बारे में समझाना चाहिए।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

सतत कृषि उत्पादन प्रणाली के लिए मिट्टी की जैव–विविधता का उपयोग और प्रबंधन

प्रीति सिंह[1], संतोष कुमार[1] एवं मोना नगरगड़े[2]

[1]भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, हजारीबाग

[2]भाकृअप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

मृदा जीव पारिस्थितिकी तंत्र का एक अभिन्न अंग हैं, लेकिन उनकी गतिविधियों को कृषि प्रबंधन रणनीतियों में बहुत कम मान्यता प्राप्त है। जागरूकता बढ़ रही है कि मिट्टी का *बायोटा* पौधों और जानवरों/मानव जीवन को बनाए रखने के लिए अत्यावश्यक है। जीवाणु, आर्किया और कवक, सूक्ष्म/*मैक्रोस्कोपिक* मिट्टी *आर्थ्रोपोड*, अकशेरुकीय और पौधे की जड़ों सहित पदानुक्रमित खाद्य वेब में सह–मौजूद हैं और साथ में कार्य करते हैं। मृदा में रहने वाले सूक्ष्मजीव मिट्टी की प्रक्रियाओं में आवश्यक भूमिका निभाते हैं जैसे कि कार्बन/पोषक तत्व चक्र, पौधों द्वारा पोषक तत्व और मिट्टी कार्बनिक पदार्थ (*एसओएम*) का गठन। मृदा में कई ऐसे जीवाणु हैं जो वायुमण्डलीय नाइट्रोजन का यौगिकीकरण करते हैं। *राइजोबियम, एजोटोबैक्टर, बेजरिंकिया, क्लॉस्ट्रिडियम, रोडोस्पाइरिलम, हर्बास्पाइरिलम* और *एजोस्पाइरिलम* नाइट्रोजन यौगिकीकरण करने वाले कुछ महत्वपूर्ण जीवाणु हैं। फॉस्फेट और पोटैशियम को घुलनशील बनाने वाले कई कवक, जैसे *ऐकॉलोस्पोरा, जाइगास्पोरा, एंडोगोन, ग्लोमस, स्केरोसिस्टिस, ऐमेनिटा, बोलिटस* आदि पौधों की जड़ों के साथ सहजीवन बिताते हैं तथा पौधों के लिए फॉस्फेट और पोटैशियम की आपूर्ति करते हैं। *सेल्यूलोलिटिक* घटक सूक्ष्मजीवी जैविक पदार्थों का तेजी से विघटन करके मृदा में पोषक तत्वों को मुक्त करती है। मृदा *बायोटा*, विशेष रूप से केंचुए और दीमक, जैव विक्षोभ और मृदा संरचना के माध्यम से मिट्टी के निर्माण और उत्थान में भी योगदान करते हैं। जिससे मृदा वातन और अंतः स्यंदन क्षमता में सुधार होता है। इस बात के भी प्रमाण बढ़ रहे हैं कि मिट्टी की जैव विविधता पौधों, जानवरों और मनुष्य कीटों और बीमारियों के नियंत्रण में योगदान करते है। खाद्य उत्पादन काफी हद तक जैव विविधता और पारिस्थितिक तंत्र द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाओं पर निर्भर करता है। जैविक विविधता और संबंधित पारिस्थितिक तंत्र की सेवाएं खाद्य सुरक्षा प्राप्त करने के लिए महत्वपूर्ण हैं। जैव विविधता उत्पादन प्रणाली और आजीविका को जलवायु परिवर्तन के कारण होने वाले हानिकारक प्रभावों और तनावों के लिए अधिक लचीला बनाती है। यह पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभावों को सीमित करते हुए खाद्य उत्पादन को बढ़ाने के प्रयासों में एक महत्वपूर्ण संसाधन है। यह कई लोगों की आजीविका में विभिन्न प्रकार के योगदान देता है, अक्सर खाद्य और कृषि उत्पादकों में इस्तेमाल होने वाले महंगे व पर्यावरणीय रूप से हानिकारक बाहरी रसायनों की आवश्यकता को कम करता हैं।

वैश्विक चुनौतियां और मृदा जैव विविधता का प्रबंधन

भूमि की उपलब्धता

फसल की कटाई, मृदा का कटाव, *लीचिंग* या गैसीय उत्सर्जन के माध्यम से पोषक तत्वों की निरंतर कमी और उपजाऊ उत्सर्जन के कारण मिट्टी के कार्बनिक पदार्थ का स्तर घटता है, जो अक्सर मूल स्तर से आधे से भी कम हो जाता है और कार्बनिक पदार्थों में इस गिरावट के परिणामस्वरूप मिट्टी की जैव विविधता घट जाती है क्योंकि कार्बनिक पदार्थ रोगाणुओं के लिए भोजन के रूप में काम करती है। मृदा क्षरण और मिट्टी की जैव विविधता का नुकसान भूमि क्षरण के महत्वपूर्ण घटक हैं। मिट्टी की जैव विविधता के लिए गहन खेती सबसे बड़ा खतरा रही है।

कृषि के लिए प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग की दक्षता में वृद्धि करके इस प्रवृत्ति को बदला जा सकता है। सावधानी से *डिजाइन* किए गए, एकीकृत प्रबंधन प्रथाओं, जैसे कि जुताई रहित खेती, संरक्षण कृषि, मिश्रित फसल, पशुधन प्रणाली, कुशल खाद प्रबंधन के साथ, बारहमासी और वार्षिक प्रजातियों के साथ फसल प्रणाली, सिंचाई के पानी का कुशल उपयोग और संग्रह और सूखा–सहिष्णु फसलों का विकास वह रणनीतियाँ है जिसके परिणामस्वरूप वर्ष–दर–वर्ष मृदा आवरण का रखरखाव होता है, कार्बनिक पदार्थों में वृद्धि होती है, मृदा संरचना में सुधार होता है और इससे कटाव कम होता है और मृदा जैव विविधता में वृद्धि होती है।

पानी की कमी

शहरी और औद्योगिक जल उपयोग, जलविद्युत संयंत्र, मनोरंजक उपयोग के लिए धाराओं की पुनर्स्थापना, मीठे पानी में मछली पालन और प्राकृतिक पारिस्थितिकी प्रणालियों की सुरक्षा, सभी पहले से कृषि के लिए समर्पित जल संसाधनों के लिए प्रतिस्पर्धा कर रहे हैं और यह संघर्ष तेज होता जा रहा है। चूंकि मिट्टी की जैव विविधता काफी हद तक अनुकूल मिट्टी की नमी पर निर्भर करती है, इसलिए मिट्टी के पानी का प्रबंधन बहुत आवश्यक है।

सिंचाई के बेहतर प्रबंधन, फसल और पशुधन उत्पादन प्रणालियों के विकास के माध्यम से कृषि को पानी के उपयोग में तेजी से कुशल बनाना होगा जो पानी का अधिक कुशलता से

उपयोग करते हैं, कृषि प्रणालियों से पानी के नुकसान में कमी और *वाटरशेड* प्रबंधन में सुधार करते हैं।

पोषक तत्वों की अधिकता

उर्वरकों के अत्यधिक प्रयोग और कुप्रबंधन ने लगभग सभी विकसित देशों में और कई विकासशील देशों में तेजी से भूजल को बड़े स्तर में प्रदूषित कर दिया है। यह *डाउनस्ट्रीम* कृषि और प्राकृतिक प्रणालियों को प्रभावित करता है। 1960 के बाद से, स्थलीय पारिस्थितिक तंत्र में जैविक रूप से प्रतिक्रियाशील नाइट्रोजन का प्रवाह दो गुना हो गया है, और फॉस्फोरस का प्रवाह तीन गुना हो गया है। यह बड़े पैमाने पर उर्वरक उपयोग के माध्यम से खाद्य उत्पादन बढ़ाने के प्रयासों के कारण हुआ है। इसके अलावा, यह पाया गया है कि डाले गए नाइट्रोजन उर्वरक का केवल 30% और फॉस्फोरस उर्वरक का लगभग 45% फसलों द्वारा लिया जाता है। उर्वरकों के लिए आवश्यक खनिजों की उपलब्ध वैश्विक आपूर्ति तेजी से घट रही है। सिंचाई जो कि मृदा के अनुकूल जलस्तर को नहीं बनाए रखती वह मृदा के जैवविविधिता और उर्वरता दोनों को काम करती है।

यदि कृषि उत्पादन में निरंतर वृद्धि करना है तो हमे ऐसी उत्पादन प्रणालियों की आवश्कता है जो कि इन संसाधनों पर कम निर्भर रहे या फिर इन संसाधनों का कुशल प्रबंधन करे।

जलवायु परिवर्तन

वैश्विक जलवायु परिवर्तन के कारण विभिन्न क्षेत्रों में कृषि उत्पादन पर काफी प्रभाव पड़ने की सम्भावना है। जलवायु परिवर्तन पर अन्तः–सरकारी *पैनल* के चौथे आकलन के अनुसार कटिबंधो में तापमान के बढ़ने से पानी की कम उपलब्धता तथा नए नए कीटों के प्रकोप के कारण फसल की उपज में कमी आएगी। पहले से ही विभिन्न स्थानीय मौसमों में अचानक परिवर्तन तथा विभिन्न प्रकार के कीटों एवं व्याधियों के आकस्मिक विस्फोटक प्रकोप के कारण मौसम दर मौसम एवं वर्ष दर वर्ष उत्पादन की अप्रत्याशितता रहती है जिसका सामना करने के लिए अनुकूलनीय प्रबंधन क्रियाओं की आवश्यकता है। खाद्य और कृषि से जुड़ी जैवविविधता के विभिन्न घटकों की उपलब्धता और विविधता में परिवर्तन के कारण फसलों की उत्पादकता तथा पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं की वृद्धि एवं प्रगति को प्रभावित करेगी।

जलवायु परिवर्तन के कारण होने वाले परागणकों, फसलों और लाभकारी और हानिकारक मृदाजीवों के विविधता में परिवर्तन का फसलों के उत्पादन और उत्पादकता पर गहरा प्रभाव पड़ सकता है। एक ही समय में जनसंख्या में वृद्धि एवं खेती योग्य भूमि में कमी होने तथा समुद्र के स्तर में वृद्धि के कारण शेष बची खेती योग्य भूमि पर अधिक कुशल उत्पादन ही इस का समाधान हो सकता है। जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने और अनुकूल बनाने के लिए किसानों को मौजूदा कृषि संबंधी प्रथाओं को बदलना होगा। जिसमे सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण अनुकूलतम जल उपयोग (सिंचाई) में प्रभावशाली सुधार, फसलों की उन्नत किस्मों का विकास एवं उसका उपयोग तथा अनुकूलित पशुधन नस्लों, फसल के *शेड्यूल* में बदलाव और फसल चक्र को अपनाना शामिल है और जलवायु परिवर्तन से संभावित जोखिम का सामना करने की क्षमता में सुधार के लिए उत्पादन रणनीतियों का विविधीकरण महत्वपूर्ण होगा। पारिस्थितिक तंत्र के गुणों में से जो जलवायु परिवर्तन की स्थिति में उत्पादन को बनाए रखने के लिए नए तरीके से कृषि क्रियाओं में बदलाव के जरिए कृषि में लचीलापन एवं स्थिर संतुलन को अत्यधिक महत्ता देने की आवश्यकता है। फसलों, नस्लों की विविधता और प्रबंधन रणनीतियों का विविधीकरण, पारिस्थिति की प्रणालियों के गुणों का आधार है। सामान्यतया परंपरागत रूप से फसलों की विविधता किसानों को विभिन्न जोखिमों जिनमें जलवायु से सम्बन्धित जोखिम भी शामिल हैं, से सुरक्षा प्रदान करता है। कुछ मामलों में, वैकल्पिक प्रकार के उत्पादन को अपनाना एक मात्र विकल्प हो सकता है और बदलाव के लिए जरुरी संसाधन बहुत हद तक बदलती हुई परिस्थितियों में परिवर्तित आनुवंशिक संसाधनों की उपलब्धता और इन संसाधनों का उपयोग करने वाली क्रियाओं को अपनाने पर निर्भर करेगा।

समस्त भारतीय भाषाओं के लिए
यदि कोई एक लिपि आवश्यक हो तो वह
देवनागरी हो सकती है।

-जस्टिस कृष्णस्वामी अय्यर

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

आत्मनिर्भर भारत में कृषि क्षेत्र की भूमिका

हिमांशु पाण्डेय[1], अजय कुमार साह[1], अभिषेक कुमार सिंह[1] एवं राहुल कुमार राय[2]

[1]भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

[2]बाँदा कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, बाँदा

आत्मनिर्भर भारत योजना की शुरुआत 12 मई 2020 को की गयी। इस महत्वाकांक्षी योजना से पूरे विश्व में भारत की पहचान एक सशक्त, संवेदनशील एवं आर्थिक प्रगति की ओर अग्रसर होने वाले राष्ट्र के रूप में स्थापित करने का सार्थक प्रयास किया गया है तथा इस योजना के अन्तर्गत देश को आत्मनिर्भर बनाने के लिए 20 लाख करोड़ रुपए की धनराशि के रूप में एक विशेष आर्थिक प्रोत्साहन *पैकेज* की घोषणा की गयी। जो कि सकल घरेलू उत्पाद का लगभग 10 प्रतिशत हिस्सा है।

यह प्रोत्साहन *पैकेज* कोविड–19 महामारी के कारण सुस्त पड़ी अर्थव्यवस्था को गतिशीलता प्रदान करने एवं देश के विभिन्न (उच्च, मध्य एवं निम्न) वर्गों के नागरिकों को रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने में यह *पैकेज* महत्वपूर्ण भूमिका अदा करेगा। इसके साथ ही आत्मनिर्भर भारत योजना के अन्तर्गत अन्य विभिन्न प्रकार की योजनाओं को भी सम्मिलित करने का प्रावधान किया गया है जैसे – *एम.एस.एम.ई.* ऋण, किसान क्रेडिट कार्ड (के.सी.सी.), शिशु मुद्रा ऋण एवं *क्रेडिट लिंक्ड सब्सिडी* इत्यादि योजनाओं के माध्यम से निवेश, अवसंरचना एवं नवाचार इत्यादि पर सबसे अधिक जोर दिए जाने का प्रावधान भारत सरकार द्वारा किया गया है। भारतीय अर्थव्यवस्था विश्व में विद्यमान तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है, जिसको गतिशीलता प्रदान करने के साथ–साथ और अधिक शक्तिशाली बनाने के लिए भारत सरकार निरन्तर प्रयास कर रही है।

भारत एक कृषि प्रधान देश है जहाँ भारत की लगभग 1.30 अरब जनसंख्या में से लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या की आजीविका का मुख्य साधन आज भी कृषि है। देश के विभिन्न वर्गों की आबादी कृषि से संबन्धित अलग–अलग कार्यों से जुड़कर अपना जीवन यापन करती है।

भारतीय कृषि ने मानव सभ्यता के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। औद्योगिक क्रांति से पूर्व, मानव आबादी का अधिकांश हिस्सा कृषि में ही कार्यरत था। परन्तु तत्कालीन कृषि तकनीकों के विकास के द्वारा कृषि उत्पादन एवं उत्पादकता को बढ़ाने में सफलता प्राप्त की जा सकी है। जिससे भारत आज के दौर में अनाज का आयात करने के स्थान पर निर्यात करने में लगभग सक्षम हो गया है।

भारत के कुल सकल घरेलू उत्पाद का लगभग 16 प्रतिशत कृषि क्षेत्र से प्राप्त किया जाता है, इसलिए कृषि को आज भी भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ की हड्डी माना जाता हैं। इसके साथ–साथ उत्पादन एवं उत्पादकता को गतिशीलता प्रदान करने के लिए माननीय प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी जी ने आत्मनिर्भर

भारत में कृषि क्षेत्र को प्राथमिकता देते हुए "आत्मनिर्भर कृषि और आत्मनिर्भर किसान" का नारा दिया है।

आत्मनिर्भर भारत में कृषि क्षेत्र महत्वपूर्ण भूमिका निभाता चला आ रहा है, जिसके महत्व को कदापि नकारा नही जा सकता है। देश की निरन्तर बढ़ती आबादी एक चिंताजनक विषय बना हुआ है, जिसे नियंत्रण करना इतना आसान नही होगा तथा सम्पूर्ण भारतीय आबादी को भर पेट भोजन उपलब्ध कराने के लिए तथा रोजगार मुहैया कराने के लिए कृषि क्षेत्र में बढ़ावा देना एवं अत्यधिक उत्पादन प्राप्त करना अति आवश्यक हो गया है।

हालांकि अभी तक भारतीय शोध संस्थानो के द्वारा नई–नई तकनीकों एवं उन्नतशील प्रजातियों का विकास करके भारतीय कृषि को निरन्तर गतिशीलता प्रदान की जा रही है। जिससे आज भारत विश्व में अधिकतम खाद्यान्न उत्पादन करने वाले देशों की बराबरी करने में सक्षम हो गया है।

आत्मनिर्भर भारत योजना के उद्देश्य

देश की सम्पूर्ण आबादी को सभी क्षेत्रों में रोजगार उपलब्ध कराने एवं उन्हे विभिन्न क्षेत्रों में सक्षम बनाने के लिए माननीय प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी जी ने आत्मनिर्भर योजना के माध्यम से पाँच स्तंभों को रेखांकित किया है। जिनकी सहायता से देश के सम्पूर्ण जनमानस को रोजगार आसानी से उपलब्ध कराया जा सकेगा। जोकि पाँच स्तम्भ निम्नलिखित है:–

कृषि क्षेत्र की आत्मनिर्भर भारत में भूमिका

कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की आधारशिला होने के साथ–साथ लगभग देश की दो तिहाई जनसंख्या को रोजी रोटी प्रदान करने का साधन भी है। इसके साथ–साथ सम्पूर्ण देश में खाद्य, पोषण और आजीविका सुरक्षा के लिए कृषि आज भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। देश की तेजी से बढ़ती हुयी आबादी के लिए खाद्यान्न व्यवस्था सुनिश्चित करने के लिए देश में समय–समय पर खाद्य पोषण और आजीविका सुरक्षा के लिए विभिन्न प्रकार की वैज्ञानिक क्रांतियों की शुरुआत की गयी है जैसे:– हरित क्रांति, पीली क्रांति, नीली क्रांति तथा श्वेत क्रांति इत्यादि क्रांतियों के योगदान से भारतीय कृषि ने आज सम्पूर्ण विश्व में कीर्तिमान स्थापित किया है, जोकि निम्नवत है:

खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भरता

भारत जैसे विशाल जनसंख्या वाले देश में खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भरता लाना देश के लिए अपने में ही बहुत बड़ा परिवर्तन एवं आत्मसम्मान की बात है। जोकि बहुरंगी क्रांतियों जैसे–हरित क्रांति, पीली क्रांति, श्वेत क्रांति, नीली क्रांति इत्यादि के कारण सम्भव हो पाया है। जिससे भारत आज विश्व में खाद्यान्न उत्पादन के क्षेत्र में अपना परचम लहरा रहा है। कृषि मंत्रालय के अनुसार देश भर में 30 करोड़ 54 लाख 40 हजार टन खाद्यान्न उत्पादन होने का अनुमान 2020–21 में लगाया जा रहा है जबकि यह आँकड़ा पिछले वर्ष की अपेक्षा 79 लाख 40 हजार टन ज्यादा है। जोकि यह दर्शाता है, कि देश के किसान वैज्ञानिकों द्वारा विकसित नई–नई तकनीकों एवं तौर तरीकों को अपनाकर निरन्तर कृषि क्षेत्र को एक नयी दिशा प्रदान करने में लगभग सक्षम हो गयी है।

दलहन उत्पादन में आत्मनिर्भरता

भारत दलहन के वैश्विक उत्पादन में लगभग 24 प्रतिशत की हिस्सेदारी करता है तथा इसके साथ–साथ दलहन के उत्पादन में विश्व में प्रथम स्थान पर विद्यमान होने के साथ–साथ भारत विश्व में दलहन का सबसे बड़ा उपभोक्ता भी है। विगत पाँच–छः वर्षों में दलहन का उत्पादन 1.4 करोड़ टन से बढ़कर 2.4 करोड़ टन हो गया है और इसके साथ–साथ भारत दलहन उत्पादन में लगभग आत्मनिर्भर हो गया है।

तिलहन उत्पादन में आत्मनिर्भरता

भारतीय अर्थव्यवस्था में तिलहन उत्पादन का अहम योगदान है। भारत विश्व में 14 प्रतिशत हिस्सेदारी के साथ वैश्विक वनस्पति तेलों के उत्पादन में लगभग 7.0 प्रतिशत का योगदान देता है। भारत में मुख्य रूप से मूँगफली, अरंडी, तिल, *रेपसीड* और सरसों, अलसी, सोयाबीन, सूरजमुखी तथा *नाइजर* इत्यादि फसलों से तेल का उत्पादन किया जाता है तथा चीन और कनाडा के बाद भारत *रेपसीड* का तीसरा सबसे बड़ा उत्पादक देश है।

चीनी उत्पादन में आत्मनिर्भरता

गन्ना विश्व मे चीनी उत्पादन का मुख्य स्रोत है। विश्व में

आत्मनिर्भर भारत अभियान पैकेज के क्षेत्र

कुल चीनी उत्पादन का लगभग 60 प्रतिशत चीनी गन्ने से प्राप्त की जाती है। ब्राजील के बाद भारत दुनिया का सबसे बड़ा चीनी उत्पादक देश होने के साथ सबसे बड़ा उपभोक्ता भी है। भारत चीनी निर्यात करने में विश्व में 7वें स्थान पर आता है तथा वर्तमान में लगभग 600 लाख किसान गन्ना उत्पादन से संबन्धित कृषि कार्यों में शामिल है जिसमे लगभग 7.50 प्रतिशत ग्रामीण आबादी प्रत्यक्षध अप्रत्यक्ष रूप से गन्ना उत्पादन पर निर्भर करती है।

बागवानी फसलों एवं फलों के उत्पादन में आत्मनिर्भरता

भारत ने बागवानी फसलों के उत्पादन एवं निर्यात में काफी प्रगति की है। देश के कई राज्यों के आर्थिक विकास में बागवानी फसलों की अहम भूमिका है। कृषि सकल घरेलू उत्पाद में 30–40 प्रतिशत का योगदान बागवानी फसलों द्वारा किया जाता है तथा फलों एवं सब्जियों के उत्पादन में भारत विश्व में द्वितीय पायदान पर विद्यमान है। भारत में उत्पादित बागवानी फसलों की विदेशों में लगातार मांग बढ़ रही है। भारत आम, केला, नारियल, काजू, पपीता एवं अनार इत्यादि बागवानी फसलों के उत्पादन में विश्व में प्रथम स्थान पर है।

पशुपालन एवं दूध उत्पादन में आत्मनिर्भरता

भारत में पशुधन खेती एक बहुत ही लम्बी परम्परा रही है, परन्तु कृषि प्रकृति में मौसम पर आधारित होने के कारण पूरे वर्ष में अधिकतम 180 दिनों के लिए रोजगार कृषि क्षेत्र से उपलब्ध हो पाता है। अर्थात पशुधन क्षेत्र भारतीय कृषि का एक महत्वपूर्ण उप–क्षेत्र होने के कारण खाद्य सुरक्षा एवं विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। भारत आज विश्व में सबसे बड़ी पशुधन आबादी वाला देश हो गया है तथा भारतीय अर्थव्यवस्था में पशुपालन का एक अलग ही महत्व है। जोकि लगभग 8.8 प्रतिशत आबादी को रोजगार उपलब्ध कराने में सक्षम है और लगभग दो–तिहाई ग्रामीण आबादी को आजीविका प्रदान करने के साथ–साथ सहायक आय का एक मुख्य स्रोत भी है तथा सकल घरेलू उत्पाद में लगभग 4.11 प्रतिशत तथा कुल कृषि सकल घरेलू उत्पाद का लगभग 25.6 प्रतिशत का योगदान देता है। भारत आज विश्व में दुग्ध उत्पादन के क्षेत्र में अग्रणी है। इसके साथ ही दुग्ध का उत्पादन 1463 लाख टन से बढ़कर 1984 लाख टन हो गया है।

कोरोना संकट के समय सरकार द्वारा कृषि क्षेत्र को बढ़ावा देने के लिए उठाए गए महत्वपूर्ण कदम

भारत सरकार द्वारा कृषि क्षेत्र में बढ़ावा देने तथा ग्रामीण एवं शहरी आबादी को रोजगार उपलब्ध कराने के लिए भारत सरकार द्वारा समय–समय पर निम्नलिखित महत्वपूर्ण कदम उठाए गए है जोकि निम्नवत हैं:

कृषि क्षेत्र को बढ़ावा देने के लिए राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक *(नाबार्ड)* द्वारा किसानों के लिए कोविड़–19 महामारी के दौरान ₹30,000 करोड़ की अतिरिक्त आपातकालीन कार्यशील पूंजी का प्रावधान किया गया जिसके अन्तर्गत ₹ 3 करोड़ लघु एवं सीमांत किसानों को सम्मिलित करने का प्रावधान रखा गया। जिससे कोरोना जैसी भीषण महामारी के कारण आए ठहराव से उबारने और गतिशीलता प्रदान करके लघु एवं सीमांत किसानों की आर्थिक–सामाजिक स्थिति को मजबूती प्रदान की जा सके।

- कोरोना नामक विषाणु ने भारत क्या सम्पूर्ण विश्व के लगभग सभी देशों में त्राहि–त्राहि मचा दी जिसके प्रभाव से निपटने के लिए भारत सरकार ने कृषि क्षेत्र की ओर ध्यान देने के साथ–साथ पशुपालन पर भी काफी हद तक जोर दिया है। कोविड़–19 के प्रभाव से देश में दूध की मांग में उत्पन्न हुई लगभग 20–25 प्रतिशत तक की कमी को दूर करने तथा पशुपालको को दूध उत्पादन एवं विक्रय में आने वाली समस्याओं से छुटकारा दिलाने के लिए सरकार ने सहकारी समितियों के माध्यम से प्रतिदिन 560 लाख लीटर दूध का क्रय करने का निर्णय लिया जिससे पशुपालकों को दूध उत्पादन एवं विक्रय में उत्पन्न होने वाली समस्याओं से कोरोना काल में सहायता प्रदान की जा सके।

- प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि योजना की सहायता से कृषि कार्यों में आने वाली समस्याओं से निपटने के लिए किसानों को रियायती ब्याज दर पर ऋण उपलब्ध कराने के लिए भारत सरकार ने किसान *क्रेडिट कार्ड* के माध्यम से 2.5 करोड़ किसानों को ₹ 2 लाख करोड़ का प्रोत्साहन ऋण प्रदान करने का प्रावधान किया है, जिससे किसान कृषि कार्यों में उत्पन्न होने वाली समस्याओं जैसेः–समय पर जुताई एवं वुवाई, खाद तथा पानी इत्यादि का प्रबंध करके खाद्यान्न उत्पादन को आसानी से बढ़ाया जा सके।

- भारत सरकार ने मत्स्य पालन को बढ़ावा देने के उद्देश्य से प्रधानमंत्री मत्स्य सम्पदा योजना के अन्तर्गत कुल ₹ 20,000 करोड़ की धनराशि का प्रावधान किया। जिससे मत्स्य श्रंखला में आये अंतराल को दूर करने के लिए सरकार ने एकीकृत, टिकाऊ समुद्री, अनुर्देशीय मत्स्य पालन एवं *एक्वाकल्चर* गतिविधियों के लिए ₹ 11,000 करोड़ की लागत से प्रधानमंत्री मत्स्य सम्पदा योजना का शुभारंभ किया। जिसके तहत लगभग 55 लाख आबादी को रोजगार उपलब्ध कराया जा सकेगा।

- आत्मनिर्भर भारत योजना के अन्तर्गत इतना ही काफी नही रहा बल्कि, देश को स्वारोजगार युक्त भारत बनाने के लिए माननीय प्रधानमंत्री जी ने ₹ 500 करोड़ की लागत से मधुमक्खी पालन पहल की शुरुआत की तथा केंद्र सरकार की ओर से एक नई प्रधानमंत्री आत्मनिर्भर स्वस्थ भारत योजना बजट वर्ष 2021.22 के अन्तर्गत *लांच* करने का प्रावधान किया गया। जिसके माध्यम से 6 वर्षों में लगभग ₹ 64.180 करोड़ खर्च किये जाने का प्रावधान रखा गया है।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

बैकयार्ड पोल्ट्री फार्मिंग (वनराजा मुर्गी पालन)

विनय कुमार सिंह, शैलेन्द्र कुमार सिंह, अंगद प्रसाद एवं एस.एन. सिंह चौहान
कृषि विज्ञान केन्द्र, पिलखी, मऊ

किसानो की आय वृद्धि में पशुपालन पूर्व के समय से ही अहम भूमिका निभाता रहा है और वर्तमान समय में कृषि विज्ञान व कृषि से जुड़े अन्य घटक किसानों को आर्थिक रूप से समृद्ध करने के लिए दृढ़ संकल्पित हैं। ग्रामीण आजीविका मिशन के तहत भूमिहीन एवं छोटे जोत वाले किसानों के जीविकोपार्जन एवं उनको आर्थिक रूप से सशक्त बनाने के लिए *बैकयार्ड पोल्ट्री फार्मिंग* एक बेहतर विकल्प सिद्ध हो रहा है जिसमें कम व्यय एवं कम व्यवस्थाओं में भी अच्छी आय अण्डोत्पादन एवं मांस उत्पादन से प्राप्त किया जा सकता है। *बैकयार्ड पोल्ट्री* पालन के लिए अच्छे द्विकाजी नस्ल की जानकारी के अभाव में बैकयार्ड पोल्ट्री से छोटे कृषक/महिला कृषकों को समुचित लाभ प्राप्त नही हो पा रहे हैं। ऐसे में भारतीय पक्षी अनुसंधान संस्थान की शाखा हैदराबाद द्वारा विकसित नस्ल वनराजा (जो कि RIR X असिल की *क्रास* है) पूर्वी उत्तर प्रदेश के लिए एक बेहतर विकल्प साबित हो सकती है। इस नस्ल की प्रमुख विशेषताएं निम्नवत हैं–

1. यह एक बहुवर्षीय एवं आर्कषक पक्षी है।
2. बेहतर रोग प्रतिरोधक क्षमता
3. निम्न आहार उपलब्धता पर अच्छी वृद्धि
4. देशी मुर्गी की अपेक्षा अधिक अण्डा उत्पादन
5. वनराजा का मांस स्वादिष्ट एवं कम चर्बी वाला होता है एवं टांगें लम्बे होने के कारण पर पक्षी से रक्षा करने में माहिर होते हैं।
6. वनराजा खुला विचरण में उत्तम प्रदर्शन करते हैं।

वनराजा मुर्गी का प्रदर्शन

उम्र	वजन
एक दिन चूजा	35– 40 ग्राम
6 सप्ताह	700–850 ग्राम
8 सप्ताह	1.000 किग्रा
अण्डों की प्रतिशतता	70–75%
अण्डा उत्पादन उम्र	लगभग 6 माह
अण्डों से चूजा उत्पादन	80%
औसत वजन अण्डा	45–50 ग्राम

ब्रूडिंग–अण्डों से चूजा प्राप्त होते ही उसके शरीर का तापक्रम नियंत्रित करने के लिए *ब्रूडर* का उपयोग करना चाहिए। *ब्रूडिंग* के लिए पहले सप्ताह तापक्रम 95 °फ रखा जाता है जिसे प्रति सप्ताह 5 °फ कम करते हुए 70 °फ पर लाया जाता है। चूजों के बिखराव पर नियंत्रण के लिए चिक गार्ड का प्रयोग करना चाहिए।

आवास–ग्रामीण क्षेत्रों में चूजे को शुरू से बाजार भेजने तक एक *शेड* में रखा जाता है। स्थानीय उपलब्ध संसाधन से आवास का निर्माण कम लागत पर किया जा सकता है। आवास में उचित वायुसंचार प्रकाश एवं परपक्षी से सुरक्षा की व्यवस्था रखी जाती है। रोग रोकथाम में बिछाली का सूखा रहना अति आवश्यक है। बिछाली को समय–समय पर पलटते रहना चाहिए। जिससे बिछाली को सूखा बनाये रखा जा सके अन्यथा संक्रमण फैलने की सम्भावना रहती है। बिछाली के रूप में धान की भूसी/लकड़ी के बुरादे का प्रयोग किया जाता है एवं गर्मी के मौसम में बिछाली की मोटाई 2'' से 3'' तक रखनी चाहिए।

आहार–आरम्भ के 2–5 दिनों तक बिछाली पर अखबार बिछाकर *प्री स्टार्टर राशन* देना चाहिए। आरम्भ के 6 सप्ताह तक विटामिन एवं खनिज लवण से परिपूर्ण संतुलित आहार प्रदान किया जाता है। आहार की उपापचयी ऊर्जा 2400, प्रोटीन प्रतिशत लाइसिन 0.77%, मीथियोनिन 0.36%, फास्फोरस 0.35% एवं कैल्शियम 0.7% रखा जाता है। पक्षीपालक स्थानीय उपलब्ध आहार अवयव को लेकर स्वयं आरम्भिक 6 माह तक प्रदान करने वाला आहार बना सकतें हैं।

अवयव	प्रतिशत मात्रा
मक्का/बाजरा/रागी/चावल कूट	50–70%
चावल चोकर/गेहूँ चोकर	10–15%
खली	15–20%
डाइकैल्शियम फास्फेट	1.2%
चूना पत्थर	1.3%
नमक	0.5%
विटामिन एवं खनिज (*प्रीमिक्स*)	0.3%

बाजार में उपलब्ध *ब्रायलर मैंस* का भी प्रयोग किया जा सकता है। पक्षी को आरम्भिक (4–6 सप्ताह) अवस्था में इच्छा भर आहार प्रदान किया जाता है जिससे इनके पंख, कंकाल तथा प्रतिरक्षा तंत्र का उचित विकास हो। *फ्री रेंज* पालन में 6 सप्ताह के बाद पक्षी को दिन में खुले वातावरण में छोड़ देते हैं ताकि खुला विचरण हो मुक्त कर देते हैं ताकि वह चरायी कर सकें।

टीकाकरण–मुर्गी/मुर्ग को स्वस्थ रखने हेतु संक्रामक बीमारियों से बचाव हेतु इनका टीकाकरण अति आवश्यक है। इनको उम्र की अलग–अलग अवस्थाओं में निम्नलिखित टीकाकरण करना आवश्यक है–

उम्र	रोग	*स्टेन*	खुराक	मार्ग
1 दिन	मेरेकरू	*एच.एम.टी.*	0.2 मि.ली.	अधोत्वचीय
5–7 दिन	रानीखेत	*एफ 1*	एक बूँद	आँख में
14 दिन	गम्बोरो	*लसोटा*	एक बूँद	मुँह में
9वाँ सप्ताह	रानीखेत	*आर$_2$बी*	0.5 मि.ली.	अधोत्वचीय
10 से 12वां सप्ताह	चेचक	*मुर्गीमाता*	0.2 मि.ली.	अधोत्वचीय

इसके साथ ही साथ मुर्गीशाला को कीटमुक्त करने हेतु पन्द्रह दिनों के अन्तराल पर कीटनाशी का छिड़काव भी करते रहें।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

आत्मनिर्भर भारत में कृषि क्षेत्र का योगदान

पंकज कुमार अरोड़ा
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

कोरोना विषाणु के कारण संपूर्ण देश में लॉकडाउन लागू होने के बावजूद खेतों में फसलें उगती बढ़ती रहीं किसान उनकी देखभाल करते रहे व पशु पालन से लेकर फसलों की कटाई व उनके विपणन तक कृषि से संबधित अन्य भी कई गतिविधियां जारी रहीं। इस दौरान सार्वजनिक निजी कार्यालय शैक्षणिक संस्थान औद्योगिक व व्यापारिक संस्थान इत्यादि सब बन्द रहे। यह किसानों व खेत मजदूरों की सहनशीलता दर्शाती हैं। उनके समर्पित कार्य ने आवश्यक वस्तुओं की आपूर्ति को सुनिश्चित किया तथा शहरी क्षेत्रों में दिनचर्या की आवश्यक वस्तुएं बिना किसी अवरोध के मिलती रहीं। यह भी सत्य है कि सब्जियों को कुछ कठिनाईयों का भी सामना करना पड़ा। सरकार ने किसानों खेत मज़दूरों सहित सभी क्षेत्रों व वर्गों के लोगों के कल्याण की चिंता दिखाई हैं। उनके व देश के आर्थिक हित में सुधार प्रारंभ किए जा रहे हैं। जिनका मुख्य उद्देश्य देश को आत्मनिर्भर बनाना संतुलित जीवन व्यतीत करना व आजीविका कमाना है।

इस संदर्भ में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने 12 मई, 2020 को लाख करोड़ रूपऐ के सामाजिक आर्थिक कल्याण *पैकेज* की घोषणा की। इसमें भूमि श्रमिक व कानून तथा आपूर्ति मूल्य श्रृंखला कायम रखने जैसे व्यापक सुधार शामिल हैं। यह पैकेज *पहाड़ों* से लेकर मैदानों व समुद्री तटों तक को अपने में समाविष्ट करता है। लघु मध्यम व बड़ें किसानों खेत मजदूरों सहित समाज के असुरक्षित क्षेत्रों व वर्गों को कोरोना की महामारी के बुरे प्रभावों से बचाव हेतु अत्यधिक विचार–विमर्श के उपरान्त तैयार किए इस पैकेज के विवरण बाद में वित्तमंत्री निर्मला सीतारमण ने दिए।

इस कल्याण *पैकेज* में प्रत्येक प्रकार के लोगों की समस्याओं व आवश्यकताओं का पूरा ख्याल रखा गया है। ग्रामीण क्षेत्र से संबंधित पैकेज की प्रमुख विशेषतायों में ये कुछ शामिल हैं। फार्म गेट आधारभूत संरचना हेतु ₹ एक लाख करोड़ कृषि आधारभूत संरचना कोष हेतु ₹ 1 लाख करोड़, लघु खाद्य प्रसंस्करण हेतु ₹ 10,000 करोड़, मत्स्य सम्पदा हेतु ₹ 20,000 हजार करोड़, राष्ट्रीय पशु रोग ₹ 135343 करोड़, पशुपालन ₹ 15 करोड़, हर्बल पौधे ₹ 400 करोड़ का खर्च मधुमक्खी पालन के लिए ₹ 500 करोड़ कृषि क्षेत्र हेतु शासन व प्रशासकीय सुधारों हेतु उपाय किसानों आदि को बेहतर मूल्य लेने के योग्य बनाने हेतु आवश्यक वस्तुओं से संबंधित कानून में संशोधन कोविड 19 से लड़ने तथा जीवन व आजीविकाएं बचा के दोधारी युद्ध की अगुवाई करते हुए अबरखे गए सरकारी नीति में प्रस्तावित मुद्रा संबंधी व नियंत्रक सुधार कृषि को सशक्त करने ग्रामीण जीवन की कायाकल्प करने हेतु रूचित हैं। ऐसी आवश्यकता अत्यधिक थी।

कुछ लोगों का विचार है कि ये उपाय अत्यधिक देरी से घोषित किए गए है। अन्य का कहना है कि कारोना वायरस का तनाव कम करने हेतु उपयुक्त आय सहायता व भोजन सुरक्षा आवश्यक थे। कुछ ने इन उपायों को बजट भाषण बताया है तथा साथ ही यह भी कहा जा रहा है कि ऋण लेना सुगम कर दिया गया है। पंजाब के किसानों को ऋण की आवश्यकता नहीं है। इसके स्थान पर लघु औद्योगिक इकाईयां व कृषि सेवाओं को संगठित करने की आवश्यकता है क्यों अधिकतर लोग नाम इलेक्ट्रानिक नेशनल एग्रीकल्चर मार्किट पोर्टल का उपयोग नहीं कर सकते। ऐसे कई प्रकार के विचार प्रकट किए जा रहे है।

भारत के कुल घरेलू उत्पादन का 15 प्रतिशत कृषि से आता है। देश की 123 अरब की जनसंख्या में आधे से अधिक की आजीविका का साधन भी यही है। अर्थशास्त्रियों, कृषि वैज्ञानिकों व नीति निर्धारकों का कहना है कि कृषि के कुल घरेलू उत्पादन पर *लॉकडाऊन* का अधिक प्रभाव नहीं पडेगा तथा इस बार मानसून की ऋतु में वर्षा भी अच्छी होने की आशा है। नीति आयोग के सदस्य डॉ. रमेश चन्द्र ने कहा कि विकट परिस्थितियों के बावजूद वित्तीय 2020–21 के दौरान कृषि क्षेत्र में तीन प्रतिशत की बढ़ोत्तरी होने का अनुमान है। कृषि क्षेत्र को छूट देने का लाभ हुआ है।

अब कृषि उद्योग अथवा कृषि खाद्य उत्पादों पर बल देना इस क्षेत्र का ख्याल रखना *फार्म गेट* की बर्बादियां अधिक से अधिक कम करना, किसानों की आय में बढ़ोत्तरी करना तथा कृषि उत्पादों वाले विश्व बाजारों पर कब्जा करना महत्वपूर्ण है। घोषित की गई नीतिगत पहलों से ऐसे लगता है इन से कृषि भोजन उद्योग के निर्माण व निर्यातों में बढ़ोत्तरी हो सकती है। कुछ राज्यों में *ई नाम* द्वारा कार्य हो रहा है। यह अनुमान है कि समस्त देश में लगभग 1,68,000 पंजीकृत किसान हैं जो घर बैठे हुए अपनी फसलें बेचने हेतु इसका लाभ ले रहे हैं। *ई नाम* मंच पर अब तक कुल 785 मण्डियां *ऑनलाइन* हैं। सरकारी आंकड़ों के अनुसार कृषि से संबंधित वस्तुओं की 1,500 प्रमुख मण्डियों में

लगभग आधी अब *ऑनलाइन* हैं। किसानों को *ई नाम* संबंधी और शिक्षित करने की आवश्यकता हैं तथा किसान इसे बड़े स्तर पर अपनाएं तथा उन्हें इसके लाभ मिलें इसके लिए ग्रामीण क्षेत्रों में सुरक्षित इन्टरनेट व सूचना प्रौद्योगिकी उपलब्ध करवानी होगी।

इसका अर्थ होगा कि शिक्षा का विस्तार करने का एक नया रूझान बनेगा तथा सार्वजनिक निजी भागीदारी को सम्मिलित अनिवार्य होगा। आर्थिक पैकेज से यह संकेत मिलता है कि कृषि विपणन में तीव्रता से सुधार करने हेतु आवश्यक वस्तुओं से संबंधित अधिनियम में संशोधन की तैयारियां कर रही हैं ताकि किसानों व खरीददारों के बीच सीधे लेन–देन हो सके। अनाज खाद्य तेल, दालों, प्याज व आलू को स्टाक सीमा से बाहर रखने की घोषणा ही सही दिशा में एक कदम है। विपणन सुधारों के अतिक्ति किसानों की संस्थागत ऋण तक अवरोध मुक्त पहुंच उपयुक्त कानूनों की सहायता से कृषि क्षेत्र को अन्दरूनी रूकावटों से मुक्त करवाने की आवश्यकता है। देश के किसानों के ऋण पूरी तरह माफ करने खासकर पंजाब के मामले पर पुनः विचार करने की आवश्यकता है। अब तक पूरी तरह सही ढंग से फसलों का उत्पादन व उत्पादकता बढ़ाने कृषि की लागतें कम करने, फसलों का विपणन सुनिश्चित करने व फसल की लाभदायक कीमत दिलवाने वैज्ञानिक भण्डारण शीघ्र नष्ट होने वाली वस्तुओं हेतु *कोल्ड चेन* आवाजाही पर बल दिया गया है।

समय के साथ इस क्रम में कुछ गलतियां भी सामने आई हैं। इन्हें ही सही करने की आवश्यकता है। एकल कृषि व मानसिकता ने कृषि में बहुत अधिक ऐच्छिक व आवश्यक विभिन्नताओं को रोके रखा है। उससे प्राकृतिक संसाधन संभालने व भूमिका उपजाऊपन को संभालने व सुरक्षित रखने व भूमिगत जल भण्डारों को *रिचार्ज* करने व पर्यावरण में सुधार लाने व जैव विभिन्नता को उत्साहित करने में सहायता मिलनी थी। अतः अब संपूर्ण ध्यान अधिक मात्रा में फसलों के स्थान पर अधिक मूल्यों की फसलें उगाने भूमि के स्वास्थ्य का ख्याल रखने जल संरक्षण पर्यावरण अर्थव्यवस्था पर केन्द्रित करने की आवश्यकता है।

विश्वस्तरीय महामारी से बाद के सुधारों में प्रत्येक को यही आशा होगी कि फसलों में कौन से *बायोटैक्नोलोजीकल* विकास होंगे अथवा पोष्टिकता में बढ़ोत्तरी से *जेनैटिक इंजीनियरिंग* का महत्व बढ़ेगा। इसका अर्थ तब पूंजी व प्रौद्योगिकी के मामलें में अधिक सार्वजनिक निजी निवेश है। सभी प्रस्तावित प्रयासों में राज्यों के कृषि विश्वविद्यालयों व खोज संस्थानों को सक्रिय भूमिका निभाने व कृषि अध्यापक खोज को नया रूप देने व सरकारी तथा निजी क्षेत्र की वित्तीय सहायता से शिक्षा कार्यक्रमों का विस्तार करने की आवश्यकता होगी। टिकाऊ कृषि व जीवंत ग्रामीण क्षेत्र सस्ती पहुंच योग्य गुणवत्तापूर्ण शिक्षा ही जन स्वास्थ्य व स्वच्छता सुनिश्चित करने व अन्दरूनी प्रवास पर नजर रखने जितनी ही आवश्यक होगी। यह आधारभूत आवश्यकता उतनी ही अनिवार्य व आवश्यक है जितनी कि युवाओं को खेतों की ओर वापस आकर्षित करने के लिए नीतियां बनाना।

देश अब अनाज के रिकार्ड लगभग 30 करोड़ टन उत्पादन हेतु तैयार है। फिर भी हम सभी को मिलकर ऐसी आशा रखनी चाहिए कि कृषि को नया रूप देने कृषि विकास से कायाकल्प करने हेतु घोषित किए गए समुचित सुधारों पर कार्य होगा।

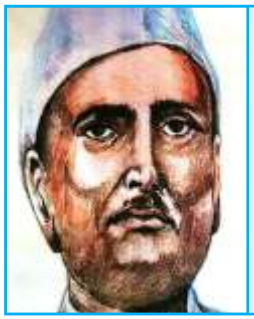

वही भाषा जीवित और जागृत रह सकती है जो जनता का ठीक-ठाक प्रतिनिधित्व कर सके और हिंदी इसमें समर्थ है।

-पीर मुहम्मद मूनिस

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

महामारीजन्य वैश्विक विकास की चुनौतियां और आर्थिक मंदी प्रवंधन

अश्विनी कुमार शर्मा, ब्रह्म प्रकाश, सुमित कुमार एवं लाल सिंह गंगवार

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

कोविड–19 महामारी ने हमारे समय की सबसे खराब आर्थिक मंदी पैदा की है। उत्पादन बिल्कुल कम हो गया है जबकि नौकरियों का खत्म होना बढ़ गया है। मांग एवं पूर्ति के सदमों से व्यापार बुरी तरह से प्रभावित हुआ है। नीति निर्धारकों के लिए अब यह एक चुनौती है कि जैसे ही स्वास्थ्य संकट हटता है तो वे मजबूत, सशक्त, सतत एवं समावेशी आर्थिक सुधार (*रिकवरी*) की नींव कैसे रखें? इस महामारी ने दुनिया को यह भी याद दिलाने का कार्य किया है कि हम सब संसार मे एक दूसरे पर अत्यंत निर्भर रहते हैं जिसकी संभावनाएं तो बहुत हैं लेकिन इससे खतरे भी साथ–साथ चलते हैं। इस महामारी ने बढ़ी हुई असमानताए, असहनीय ऋण और सर्वत्र पर्यावरण विनाश जैसी पूर्व मे विद्यमान स्थितियो पर रोशनी डालने का कार्य किया है; जो कि वैश्विक वित्तीय संकट के उपरांत भी अछूती रह गई थी । वर्ष 2019 के अंत तक विश्व अर्थव्यवस्था का जितना आंकलन किया गया था अर्थव्यवस्था उससे भी बहुत कमजोर हो चुकी है। अतः कोविड –19 ने हमें यह सावधानीपूर्वक सोचने पर मजबूर किया है कि वैश्विक एवं स्थानीय स्तर पर एक स्वस्थ एवं लचीला समाज कैसे बनता है और पिछले द्शक में सीखे सबक को किस प्रकार याद रखा जा सके।

आर्थिक मंदी एवं विश्व व्यापार

लगभग 11 वर्ष पूर्व विश्व की मुख्य अर्थव्यवस्थों ने 1930 के दशक की सबसे गंभीर आर्थिक मंदी के बाद की दूसरी बड़ी वित्तीय मंदी वर्ष 2008 में झेली है। बैंको के माध्यम से उत्पन्न हुई इस मंदी ने वैश्विक वित्तीय तंत्र को वर्ष 2008 में घुटनों पर लाकर खड़ा कर दिया था। बड़ी कम्पनियों के धराशायी होने से अर्थव्यवस्था में गिरावट आयी और पूरी जनता को इसका नुकसान भरना पड़ा। उसके उपरान्त विश्व ने कई कदम उठाएँ हैं लेकिन उसका अधिक लाभ नहीं हो सका है। वर्ष 2019 के अंत तक वैश्विक अर्थव्यवस्था बुरे दौर से गुजर रही थी। विकसित देशों में वर्ष 2010–2019 के मध्य की वैश्विक अर्थव्यवस्था की प्रगति 2% थी जो वर्ष 2001–2007 की प्रगति दर 2.4% से कम थी। चीन को छोड़कर सभी विकासशील देशों में वर्ष 2010 मे 7.9% और वर्ष 2019 मे 3.5% तथा इस अवधि में औसतन 5% की विकास दर थी जो 2001–2007 की अवधि में 6.9% और शुरुआत और आखिरी वर्ष में क्रमशः 3.4% और 4.9% थी। हालांकि वैश्विक मंदी के जोखिम की लागत निकालना मुश्किल है, लेकिन विश्व व्यापार संगठन व *फेडरल रिजर्व बैंक,* डेल्लास के अनुसार अमेरिका के लिए इसकी अनुमानत लागत 6–14 *ट्रिलियन डॉलर* आँकी गई है।

विश्व अर्थव्यवस्था एक महान गहरी मंदी और अभी भी अनियमित महामारी के दौर से गुजर रही है। वैश्विक अर्थव्यवस्था के लिए आगामी एक दो वर्ष बहुत कठिन होंगे। कई देश इस महामारी के कारण कुछ भी करने को तैयार नहीं है। ज़िंदगियों एवं स्वास्थ्य सेवा तंत्र को बचाने के लिए उन्हें *लॉकडाउन* ही एकमात्र विकल्प नजर आ रहा है। ऐसा करने से आर्थिक मंदी का भी जन्म हुआ है जो विषाणु की भाति ही तेजी से फैल रही है। आंकड़े इस बात की तरफ सूचना कर रहे हैं कि वर्ष 1930 की विश्वव्यापी आर्थिक मंदी से मिलती–जुलती एक अन्य मंदी इन वर्षो मे देखने को मिल सकती है ।

विश्व व्यापार के आंकड़ों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि विश्व बस्तुओं का व्यापार वर्ष 2019 में घनफल के आधार पर 0.1% कम हुआ है जबकि वर्ष 2018 में यह 2.9% से बढ़ा था। कीमतों के आधार पर इसमे वर्ष 2018 में दर्ज 8.4% वृद्धि के सापेक्ष वर्ष 2019 में 3% की वृद्धि हुई है। सेवा क्षेत्र भी प्रभावित हुआ है जिसमें यातायात सेवा क्षेत्र का व्यापार 0.8% घट गया जबकि भ्रमण क्षेत्र में मात्र 1% की वृद्धि हुई है। अन्य वाणिज्यिक सेवाएँ जैसे संचार, कम्प्यूटर और सूचना सेवाएँ ही एकमात्र ऐसा क्षेत्र है जिसमे 3.3% की वृद्धि देखी गई है। विश्व व्यापार अभी भी कुछ देशों तक ही केन्द्रित है। सबसे अधिक व्यापार करने वाले 10 देशों में विश्व व्यापार का 50% से अधिक व्यापार होता है। "बहुत कम विकसित देशों" में वस्तु व्यापार 2% घटा है लेकिन वाणिज्यिक व्यापार 10% बढ़ा है। यह वृद्धि यातायात क्षेत्र से जुड़ी हुई है जो कोविड–19 महामारी के बाद बुरी तरह प्रभावित हुई है।

लॉकडाउन के प्रभावों का बड़े–बड़े अर्थशास्त्री भी सही आंकलन नहीं कर पा रहे हैं क्योंकि कभी पहले ऐसी स्थिति नहीं आई थी। न यह युद्ध जैसी स्थिति थी, न पूर्ति आधारित वैश्विक मंदी का सदमा और न ही यह बैंकिंग क्षेत्र द्वारा वितीय मंदी का मामला हैं। यह वैश्विक मंदी "जीवन को लाभ से पहले देखने" की एक नई प्रकार की मंदी हैं जिसके अंतर्गत एक साथ एक दूसरे को बल देने वाली पूर्ति, माँग और वित्तीय सदमों की एक श्रंखला हैं। इन सदमों से वैश्विक अर्थव्यवस्था का वर्ष 2020 मे 4.3% सिकुड़ने और वैश्विक उत्पादन का 6 *ट्रिलियन डॉलर* कम होने का अनुमान हैं। विश्व व्यापार 20% तथा विदेशी मुद्रा सीधा निवेश (*एफ़डीआई*) 40% तथा भेजी गई मुद्रा *(रेमिटेंसेज)* लगभग 100 *ट्रिलियन डॉलर* तक गिरने का अनुमान है। विकसित देशो मे उत्पादन मे ज्यादा गिरावट होगी लेकिन विकासशील देशों में आर्थिक और सामाजिक परिवर्तन देखने को मिलेगा जहां पर अनौपचारिकता अधिक हैं और विदेशी मुद्रा के स्त्रोत कुछ ही वस्तुओं या मात्र पर्यटन पर निर्भर हैं।

नीतिगत कमियाँ

वैश्विक मुद्रा मंदी से सुधार की गति पूर्व मे निर्धारित मापदंडो से काफी धीमी रही तथा घरेलू, औद्योगिक एवं क्षेत्रीय सैक्टर्स में असामान्य रही है। हालांकि नीतियों द्वारा सभी क्षेत्रों को समावेश करने का कार्य किया हैं। मौद्रिक नीति से भी *रिकवरी* को गति देने का कार्य किया गया है। वेतन एवं बढ़ती असमानता

की बजाय *इक्विटी* और संपतियों के मूल्यो मे वृद्धि को ही सफलता माना गया। सरकारी खर्च मे बढ़ोतरी हुई लेकिन सरकारों के सभी कार्यक्रम बड़ी–बड़ी फ़र्मों और वित्तीय संस्थाओं के ऊपर केन्द्रित रहे न कि श्रमिकों, गृह–मालिकों तथा स्थानीय संस्थानो के प्रति केन्द्रित रहे। सामाजिक सुरक्षा तंत्र को कमजोर करने और वेतन/पारिश्रमिक को न बढ्ने देने के लिए पहले करों में कमी, सम्पतियों का बेचा जाना तथा सस्ती मुद्रा द्वारा बाजार को सामान्य रखा गया। तदोपरांत मूलभूत सुधारों के साथ–साथ एकदम खर्चो मे कटौती पर बल दिया गया। ऐसा होने से मांग आधारित उन्नति की रणनीति को बढ़ावा दिया गया तथा नोकरियों एवं आय में सुधार के लिए मध्यम से दीर्घकालीन सतत सुधार की सारी आशाएँ खत्म हो गयी। कमजोर मांग होने के कारण त्वरित मौद्रिक आय, *आउटसोर्सिंग*, लाभांश की खरीद–वापसी, कम्पनियों का एक दूसरे मे विलय तथा उनकी खरीद का रिवाज बढ़ गया। उदाहरणतया, वर्ष 2019 मे "एस और पी 500" कम्पनियों ने शेयरों की खरीद–वापसी और लाभांश के भुगतान में प्रतिवर्ष लगभग तीन *ट्रिलिएन डॉलर* की धनराशि लगाई है।

निवेशों पर अच्छा *रिटर्न* लेने के लिए विकासशील देशों द्वारा विदेशी मुद्रा बाहुल्य सरकारी एवं निजी ऋण की भरमार लाई गई है। इससे वित्तीय बाज़ार में अप्रवासी निवेशकों, विदेशी बैंकों एवं अन्य दिखावटी वित्तीय संस्थानों की भरमार हुई है। बांड एवं *इक्विटी* बाज़ार में विदेशी फ़र्मों की ज्यादा उपस्थिति से विनिमयन दर की अस्थिरता में वृद्धि हुई है तथा स्वदेशी वित्तीय बाजारो को वैश्विक जोखिम की भूख एवं तरलता की स्थितियो में झोंक दिया गया है। वित्तीय संसाधनों की भरमार के गुब्बारे, वस्तुओ एवं गैर–वित्तीय सेवाओ की कम मांग, कमजोर निवेश और कम उत्पादकता एक साथ होने से सभी क्षेत्रों की प्रगति में रूकावट आ गई। बैंक के क्षेत्र में बड़े बदलाव हुए है। बैंक पहले से बड़े हो गए है तथा कई बुद्धिजीवियों ने अब उन्हें (*शैडो*) अस्पष्ट बैंकिंग प्रणाली का नाम दे दिया है। बड़ा आकार होने के वावजूद वित्तीय लेनदेन ज्यादा अपारदर्शी हो गया है। *कॉर्पोरेट* ऋण में आशातीत वृद्धि होने से महामारी से पहले ही *बॉन्ड मार्केट* में उथल–पुथल मची हुई थी। मंदी से निपटने के लिए कई देशों द्वारा जो राहत पैकेज दिये जा रहे है, इससे कई बड़ी एवं बंद होनी वाली फ़र्मे तो चलती रहेगी लेकिन इस प्रकार से जोखिम निजी क्षेत्रों से सरकारी वित्तीय भुगतान विवरण (*बैलेन्स शीट*) पर स्थानांतरित होगा। इस सोच के साथ कार्य किया गया कि सरकारी खर्चे को कम करने से संसाधन निजी क्षेत्र के लिए उपलब्ध होंगे और अर्थव्यवस्था की प्रगति होगी, लेकिन ऐसा हुआ नहीं। निजी क्षेत्र के जोखिमों कों सरकारी क्षेत्र के जोखिमों में परिवर्तित करने का मतलब है लाभ का निजीकरण और घाटे का समाजीकीकरण। ऐसा करना नैतिकता के आधार पर भी सही नहीं था। यह एक प्रकार से खतरे में डालने बाली बात थी।

सरकारी स्वास्थ्य सुविधा/अवस्थापना की कमी कोविड–19 महामारी के प्रबंधन मे हुई कमी का एक मुख्य कारण है। 1990 के शुरुआत से ही पशुजन्य बीमारियों का खतरा मंडरा रहा था जो कि प्राकृतिक परिवेश के खत्म और इसकी जगह पर सघन पशु उत्पादन कार्यों से चरम सीमा पर पहुँच गया। वैज्ञानिकों एवं सरकारी स्वास्थ्य विशेषज्ञ ने जंगलो की सफाई और औद्योगिक खेती के संभावित खतरो से अवगत कराया था। लेकिन कुछ निहित स्वार्थों ने इनसे जुड़े स्वास्थ्य जोखिमों को दर–किनार कर अमीर देशों के उपभोक्ताओं की सस्ते मांस की आदत डाल दी है। अब पशुजन्य रोगो के रोकथाम के लिए जो वित्तीय संसाधन लगेगे वो मंदी की लागत से काफी कम होंगे ।

विकसित देशों के केन्द्रीय बैंको की आसान मुद्रा नीति होने से और विकासशील देशों में कमजोर वित्तीय स्थिति ने जोखिम उठाने वालों तथा नकद वित्तीय संसाधन पूर्ण फ़र्मों के लिए निवेश की नई संभावनाएँ उत्पन्न हुई हैं। हालांकि अगले वर्षों में ज्यादा असमानता, ज्यादा असुरक्षा और प्रचलित अनिश्चितता के कारण कुल माँग और अमीर देशों की कंपनियों के वित्तीय विवरण ज्यादा नहीं बढ़ेंगे और इससे निवेशकों का विश्वास बढ़ेगा। 2022 में कई देशों में दो अंको वाली मंहगाई दर देखने को मिल सकती है। यदि सरकारी खर्चे कम किए जाते हैं तो इसका असर निजी क्षेत्र की वित्तीय विवरण स्थिति संभालने में होगा और इससे स्थिति और बिगड़ेगी। अगर सरकारें अपना ऋण कम करने के लिए कठोर कदम उठाती हैं और फ़र्में निर्यात बढ़ाने के लिए मितव्ययी रणनीति अपनाती हैं तो अर्थव्यवस्था का सुधार नहीं हो पाएगा और मंहगाई बढ़ेगी। सतत सुधार के लिए कम वेतन की नौकरियों के वेतन बढ़ोतरी करने की आवश्यकता है ताकि उत्पादकता और रोजगार मे वृद्धि हो सके। कम वेतन का होना और श्रमिक बाजार नियमो का कमजोर होना अर्थव्यवस्था को और कमजोर बनाएगा।

विगत 10 वर्षो में जो कमियाँ रह गई हैं उनकी भरपाई की आवश्यकता हैं। 2008 की मंदी के बाद मितव्ययी नीति कार्यो से अर्थव्यवस्था मे सुधार नहीं हो पाया। भारत ने भी अन्य देशो की तरह मितव्ययता की राजनीति अपनाई थी लेकिन अब भरोसेमंद वित्तीय संसाधनो की सहायता ली जा रही हैं।

सुधार और संभावनाएँ

अर्थव्यवस्था का भविष्य जैसा होना चाहिए था वैसा नहीं होगा। आगामी वर्षो में कुछ सुधार अवश्य होगा। कुछ अनुमानों के द्वारा अंग्रेजी के अक्षर वी (v) के आकार में सुधार होने की उम्मीद है तथा प्रगति की दर 5% तक हो सकती हैं। लेकिन यह सुधार विभिन्न देशो में तथा उनके अंदर के राज्यों में भी अलग–अलग तरह से होगा और अनिश्चितता बरकरार रहेगी। बेरोजगारी बढ़ेगी और ज्यादा से ज्यादा कंपनियाँ दिवालिया होने की कगार पर होंगी। आपूर्ति श्रृंखला कमजोर होगी। भरोसा डूबा रहेगा तथा मांग कमजोर रहेगी। विश्व भर के देशों में सरकारी एवं निजी क्षेत्रों के पहले से बढ़े हुए ऋणों के स्तर और बढ़ जायेंगे। ऐसी स्थिति मे पिछले दशक के अनुभवों से सीख न लेते हुए अगर गलत नीतिगत निर्णय लिए गए तो नये उतार–चढ़ाव शुरू होंगे जिसके कारण सुधार की गति पटरी से उतर जाएगी और विश्व अर्थव्यवस्था 10 वर्ष पीछे हो जाएगी। विकसित देशों मे ऐसे खतरे अधिक हैं जहाँ पर मितव्ययता पर ज़ोर दिया गया था और ऋण लेने जैसे कदमो मे उच्चस्तरीय अनौपचारिकता बरती गयी तथा स्वास्थ्य और आर्थिक मोर्चे को संयमित करने बाली नीति निर्धारण स्थिति के अंतर्गत उपलब्ध कम स्वतन्त्रता के कारण वैश्वीकरण मंदी से लड़ने की क्षमता भी बाधित हुई है।

कोविड–19 महामारी ने पिछली महामारियों की तरह ही दुनिया को हिला करके रख दिया है। इस महामारी ने कुछ सैद्धांतिक प्रश्नो को भी खड़ा किया है कि हम अपने समाज एवं

उससे जुड़े मूल्यों को कैसे एक साथ बांधकर चल पायेंगे जिनसे हमारी जिंदगी प्रभावित होती है। साथ ही इस महामारी ने हमें एक बेहतर दुनिया की कल्पना करने के लिए भी प्रेरित किया है द्य अगर हम उस कल्पना के अनुसार कार्य करते है तो हमें, खासतौर पर अमीर देशो को, पिछले दशक में की गई गलतियों को स्वीकार करना होगा। इसके लिए हमे खुशहाल भविष्य के रास्ते मे आने वाली रुकावटों को चिन्हित करने और उनका समाधान करने के मौके के रूप मे देखना चाहिए, न की एक संकट की स्थिति की व्यवस्था करने के रूप में। आगामी वर्षो में सफलता, रोगो को समझने एवं स्थिति का समाधान के बजाए राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर के नेताओ द्वारा लिए गए निर्णयों एवं उनके प्रभावों को सहन करने के प्रति उत्सुक होने पर निर्भर करेगी। भविष्य मे सफलता इस पर निर्भर नहीं करेगी कि हमने एक दूसरी आर्थिक मन्दी को टाल दिया और बढ़ते हुए सरकारी ऋण को कम किया। आने वाली पीढ़ियां शेयरों के मूल्यों के उच्च भावों और भरी हुई तिजोरियों के लिए खुश नहीं होंगी। यदि अनगिनत लोगो की जान और अनगिनत लोगो की आजीविका के साधनों को खोजने की चुनौतियों को पूर्ण करने में हम असफल हुए।

कोरोना विषाणु ने जान–माल व आर्थिक परिवेश को बर्बाद करने के साथ–साथ बदलने के लिए एक मौका भी प्रदान किया है। इसने विश्व व्यापार की कमियों को उजागर किया हैं, जो इस विषाणु के आने से पहले विद्यमान थीं। गत दशक की आर्थिक मंदी ने भी यही कार्य किया लेकिन विश्व इस चुनौतियों को पूरा नहीं कर सका और हम अभी भी उस असफलता के असर के साथ जी रहे हैं जैसे कि जब जानवरो से एक विषाणु मनुष्य मे कूद पड़ा था। अब समस्याए गंभीर है लेकिन बुद्धिजीवी परिवेश भी अब ज्यादा गंभीर हैं और इससे लड़ने के लिए राजनीतिक इच्छा शक्ति का सकारात्मक प्रदर्शन भी देखने को मिला हैं। अतः उम्मीद है कि आगामी काल अच्छा होगा लेकिन शांत होकर बैठने से बात नहीं बनेगी।

बहुपक्षीय व्यापार के हिमायती लोगो के सामने जो चुनौती वर्ष 1945 में थी, वही चुनौती अब कोविड–19 के समय पर हैं। महामारी आने से पहले भी बहुपक्षीय व्यापार प्रणाली कठिन दौर से गुजर रही थी लेकिन कोविड–19 ने खुले दिमाग से चर्चा करने और बड़े और प्रभावी सुझावों की आवश्यकता बता दी है। आज के विश्व नेताओ को 1945 के समय के अनुरूप कठोर कदम उठाने की आवश्यकता है। वर्ष 1945 में 50 देशों के 800 प्रतिनिधियों ने सयुंक्त राष्ट्र संघ के बारे में सोचा था ताकि विभिन्न देशों में मित्रता, आदर, न्याय और सहयोग को बढाबा दिया जा सके। विश्व में कई छोटे–छोटे देश हैं और बड़े–बड़े देशों के कार्य और उनका रवैया सहयोग निभाने में बहुत मायने रखता है। वर्ष 2015 में इस दिशा में कुछ शुरुआत हुई थी जब सयुंक्त राष्ट्र में बदलाव और जलवायु परिवर्तन का मुद्दा रखा गया था जिस पर आगे कार्य नहीं बढ़ पाया। अब इसे आगे बढ़ाने की आवश्यकता है। अंतराष्ट्रीय तरलता को बढ़ाने के लिए क्षेत्रीय, द्विपक्षी एवं बहुपक्षी व्यापार और निवेश अनुबंधों में मूलभूत सुधारों की आवश्यकता है। 2030 के सतत विकास लक्ष्यों को हासिल करने के लिए बहुपक्षीए व्यापार के ढांचे में मूलभूत सुधारों की आवश्यकता है ताकि अर्थव्यवस्था में सुधार हो सके। कंपनियों द्वारा भरोसे को तोड़ने के विरुद्ध नियमों (जैसे एक वैश्विक ऋण प्राधिकरण का गठन) को सुदृढ़ करने की आवश्यकता है।

कोविड–19 महामारी ने सेवा क्षेत्र की महत्ता को दर्शाया है। इस महामारी ने डिजिटल व्यापार की महत्ता से भी अवगत कराया है। *ई–कॉमर्स* और *डिजिटल* व्यापार में वृद्धि के लिए मुख्य कारक बेंड्विड्थ और तकनीक नवाचार में सुधार थे। इन सुधारों ने टेलिमेडिसिन जैसी महत्वपूर्ण सेवाओ को भी संभव बना दिया है। दवाईयों की मूल्य वृद्धि की एक तिहाई आपूर्ति श्रृंखला भी सेवा क्षेत्र का हिस्सा है। कोविड–19 महामारी के दौरान यह आपूर्ति श्रृंखला अवरुद्ध हुई है जिससे मेडिकल एवं अन्य जरूरी पदार्थों की पूर्ति पर प्रभाव पड़ा है। उपभोक्ताओं की पसंद के बदलने के भी प्रमाण मिले हैं जिससे यह प्रतीत होता है कि प्लास्टिक और अन्य ऐसे पदार्थो की मांग घटी है जो पर्यावरण को नुकसान पहुँचने का काम कर रहे थे। गैर परंपरागत ऊर्जा स्त्रोतों जैसे *विंड टरबाईन, सोलर पैनल* और *इलैक्ट्रिक कार* की मांग भी हाल ही में बढ़ी है। महामारी ने विश्व व्यापार को आँकने के उपलब्ध तरीकों की कमियों को भी उजागर किया है। कुछ देश नियमित रूप से विश्व व्यापार के आंकड़ों से सूचित करते है लेकिन वस्तु और सेवा व्यापार के अन्तर्गत जो वर्गीकरण प्रणाली बनाई गई है वह कोविड–19 महामारी से उत्पन्न चुनौतियों को समझने में असक्षम साबित हुई है। अतः अंतराष्ट्रीय संस्थाओं को ऐसी व्यापकता बाली चुनौतियों से लड़ने के लिए आपस में सहयोग बढ़ाकर तैयार रहने की आवश्यकता है।

विश्व व्यापार संगठन की वर्ष 2020 *रिपोर्ट* के अनुसार विभिन्न देशों ने अपनी सरकारी नीतियों द्वारा तकनीकी प्रगति और *डिजिटल* नवाचार को बढ़ावा दिया है। महामारी की शुरूआत से ही *ऑन लाइन प्लेटफ़ार्मों* में आशातीत वृद्धि देखने को मिली है। उदाहरणतया मेरकडोल लिबरे की प्राप्तियों में 70. 5% और अलीबाबा की बिक्री में 22% की बढ़ोतरी हुई है। सूचना प्रौद्योगिकी अनुबंध के माध्यम से विश्व स्वास्थ्य संगठन ने सीमा–शुल्क को समाप्त करके नवोन्मेष को बढ़ावा दिया है। वर्ष 2017 में भारत, चीन और जापान जैसे एशियाई देशों ने विश्व शोध के लिए 40% का योगदान किया जबकि वर्ष 1996 में इनका योगदान मात्र 8.2% था। चीन और रूस के देशों ने *ब्रेन गेन* (आजीविका के लिए बुद्धिजीवी वर्ग का देश में आना और रहना) से फायदा उठाया है जबकि भारत ने इस क्षेत्र में अभी तक फायदा नहीं उठाया है। कोविड–19 संकट के कारण लगभग 115 देशों ने *डिजिटल* एवं औद्योगिक रणनीति अपनाते हुए (करों में छूट, आंकड़ों के लेनदेन की नीति, सर्वाधिक ज्ञानवर्धन के लिए तकनीक *हब* तथा शोध एवं विकास) *डिजिटल* अर्थव्यवस्था की स्थापना की है। मजबूत, सशक्त, सतत एवं समावेशी आर्थिक सुधार की दिशा में सही निर्णय लेने के लिए सही आंकड़ों का होना भी आवश्यक है। अतः विश्व में अब *डिजिटल डाटा* की मांग बढ़ने से डाटा स्थानीयकरण, *प्राइवेसी* बचाव *पॉलिसी* और *डाटा* स्थानांतरण हेतु नए वैश्विक नियमो की आवश्यकता होगी जिसके लिए शीघ्र ही आवश्यक बदलाव करने होंगे। इस क्षेत्र में आवश्यक अवस्थापना का सृजन करना अभी भी मुख्य समस्या है और इसके बदलाव में तेजी लाने की आवश्यकता है।

आशा है कि वैश्विक अर्थव्यवस्था शीघ्र ही पटरी पर फिर लौट आएगी। यह भी आशा की जा रही है कि विश्व के महान नेता एक साथ मिलकर शीघ्र ही विश्व अर्थव्यवस्था के लिए संरचनात्मक सुधार करें ताकि विगत में हुई कमियों को दूरकर नई चुनौतियों का हल शीघ्र ढूंढा जा सके।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

भारत की प्रमुख कृषि क्षेत्र की क्रांतियों का योगदान

ओम प्रकाश[1], पल्लवी यादव[2], ब्रह्म प्रकाश[1] एवं कामिनी सिंह[2]

[1]भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

[2]एस एन सेफ क्रॉप्स साइसेज़, इंदौर

देश की उन्नति में विभिन्न कृषि क्रांतियों का बहुत योगदान है। कभी भारत अपनी जरूरत का अनाज दूसरे देशों से आयात करता था, लेकिन आज यह इस मामले में आत्मनिर्भर है। इसके पीछे कृषि क्रांतियों का बहुत योगदान है। देश में दो प्रमुख कृषि क्रांतियां हुई हैं। पहली हरित क्रांति और दूसरी श्वेत क्रांति। दोनों अपने–अपने क्षेत्र में देश को तरक्की के रास्ते पर ले गईं। भारत के कृषि क्षेत्र में विभिन्न क्रांतियां हुई हैं जिनसे खेती–किसानी की उन्नति के साथ देश के खाद्यान्न और अन्य क्षेत्र में भी उत्पादन बढ़ा है। आइए जानते हैं देश की प्रमुख कृषि क्रांतियों के बारे में जिनके जरिए इस क्षेत्र में गुणात्मक परिवर्तन हुआ।

कृषि क्षेत्र की क्रांति का नाम	कृषि क्रांति का उदेश्य	संबन्धित कृषि क्षेत्र में उपलब्धता
हरित ह ांति	कृषि उत्पादन बढ़ाने के उद्देश्य से वर्ष 1966–67 में हरित क्रांति की औपचारिक तौर पर शुरुआत की गई थी	खाद्यान्न (गेहूँ, धान)
श्वेत क्रांति	दुग्ध उत्पादन बढ़ाने के लिए श्वेत क्रांति की शुरुआत की गई। वर्गीज कुरियन को इस क्रांति का जनक कहा जाता है। इसकी शुरुआत 1970 में हुई।	दूध
धूसर क्रांति	उर्वरक उत्पादन के लिए धूसर क्रांति शुरू की गई थी।	उर्वरक
लाल क्रांति	देश में मांस और टमाटर उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए लाल क्रांति की शुरुआत की गई।	मांस, टमाटर
नीली क्रांति	मत्स्य पालन क्षेत्र में तरक्की के लिए इसकी शुरुआत की गई। यह सातवीं पंचवर्षीय योजना (1985 से 1990) के बीच शुरू हुई। इसकी वजह से मछली पालन, प्रजनन, विपणन और निर्यात में बहुत सुधार हुआ।	मत्स्य
सुनहरी क्रांति	यह फल उत्पादन से संबंधित है। राष्ट्रीय बागवानी मिशन 2005–06 में फलों के बगीचों, बीजों के विकास के लिए शुरूआत की गई।	बागवानी में फलोत्पादन
गुलाबी क्रांति	झींगा मछली उत्पादन में वृद्धि के लिए गुलाबी क्रांति शुरू की गई।	झींगा
रजत क्रांति	रजत क्रांति देश में अण्डा उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि हेतु शुरू की गयी।	अंडा/मुर्गी उत्पादन
गोल क्रांति	इसका संबंध आलू उत्पादन बढ़ाने से है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद – केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला द्वारा विकसित प्रौद्योगिकियों एवं रोगरोधी किस्मों द्वारा भारत में आलू क्रांति संभव हुई। चीन के बाद भारत विश्व का दूसरा सबसे बड़ा आलू उत्पादक राष्ट है।	आलू
पीली क्रांति	यह तिलहन उत्पादन से संबंधित है। तिलहन में भारत काफी पीछे है। उत्पादन में आत्मनिर्भर बनने के लिए इसकी शुरुआत की गई। तिलहन में नौ फसलों सूरजमुखी, सोयाबीन, मूंगफली, अरंडी, तिल, राई और सरसों, अलसी एवं कुसुम को शामिल किया जाता है।	तिलहन (तेल)
भूरी/काली क्रांति		चॉकलेट, बेकरीज़, टॉफी, आदि/वैकल्पिक ऊर्जा स्रोत
इंद्रधनुषी/सतरंगी क्रांति या सतत क्रांति या द्वितीय क्रांति	कृषि के विभिन्न उत्पादों में उल्लेखनीय वृद्धि को इन्द्रधनुषी सतरंगी क्रांति नाम दिया गया है।	देश में 21वीं सदी में एक और नई क्रांति चाहिए।
मीठी क्रांति	शहद उत्पादन बढ़ाने से यह क्रांति सम्भव हुई।	शहद उत्पादन
हरित सोना क्रांति	इसका संबंध बांस उत्पादन से है। भारत में बांस के वन सर्वाधिक हैं। देश में बांस की 136 किस्में हैं। इनमें से 89 किस्में पूर्वोत्तर क्षेत्र में मिलती हैं। बांस की खेती को बढ़ावा देने के लिए अब सरकार ने इसे घास की श्रेणी में डाल दिया है.	बांस उत्पादन
अन्य क्रांतियां	केसर उत्पादन में वृद्धि के लिए से• न क्रांति, मसाला उत्पादन के लिए बादामी क्रांति	केसर व मसाला उत्पादन में वृद्धि

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

पेड़: एक रोचक तथ्य

प्रसून कृष्णा एवं के.जी. शर्मा
केंद्रीय विद्यालय, एएमसी, तोपखाना बाजार, लखनऊ

पेड़ धरती पर सबसे पुराने जीवित जीव है और ये कभी भी ज्यादा उम्र की वजह से नहीं मरते। हर साल पाँच अरब पेड़ लगाए जा रहे हैं। लेकिन हर साल दस अरब पेड़ काटे भी जा रहे है। एक पेड़ एक दिन में इतनी ऑक्सीजन देता है कि चार आदमी जिन्दा रह सकें। देशों की बात करें, तो दुनिया में सबसे ज्यादा पेड़ रूस में हैं, उसके बाद कनाडा में, उसके बाद ब्राजील में फिर अमेरिका में और उसके बाद भारत में केवल 35 अरब पेड़ बचे हैं।

- दुनिया की बात करें तो एक इंसान के लिए 422 पेड़ बचे है लेकिन अगर भारत की बात करें तो एक हिन्दुस्तानी के लिए सिर्फ 28 पेड़ बचे हैं।
- पेड़ों की कतार धूल मिट्टी के स्तर को 75 प्रतिशत तक कम कर देती है और 50 प्रतिशत शोर को कम करती है।
- एक पेड़ इतनी ठंड पैदा करता है जितनी एक एसी दस कमरों में 20 घण्टे तक चलने पर करता है। जो इलाका पेड़ों से घिरा होता है वह दूसरे इलाको की तुलना में 90 प्रतिशत ठंडा रहता है।
- पेड़ अपनी 10 प्रतिशत खुराक मिट्टी से और 20 प्रतिशत खुराक हवा से लेते है। एक एकड़ में लगे हुए पेड़ एक साल में इतनी कार्बन डाईआक्साइड सोख लेते हैं जितनी एक कार 41,000 कि.मी. चलने पर छोड़ती है।
- दुनिया की 20 प्रतिशत ऑक्सीजन अमेजन के जंगलो द्वारा पैदा की जाती है। ये जंगल 8 करोड़ 15 लाख एकड़ में फैले हुए हैं।
- हम इंसानों की तरह पेड़ों को भी कैंसर होता है। कैंसर होने के बाद पेड़ कम ऑक्सीजन देने लगते हैं। पेड़ की जड़ें बहुत नीचे तक जा सकती हैं।
- दक्षिण अफ्रीका में अंजीर के पेड़ की जड़ें 400 फिट नीचे तक पाई गई थीं। दुनिया में सबसे पुराना पेड़ स्वीडन के डलारना प्रांत में है। टीजिक्को नाम का यह पेड़ 9,550 वर्ष पुराना है।
- किसी एक पेड़ का नाम लेना मुश्किल है लेकिन तुलसी, पीपल, नीम और बरगद दूसरो के मुकाबले ज्यादा ऑक्सीजन पैदा करते हैं। इस बरसात में कम से कम 5 पेड़ अवश्य लगाएं।
- एक पूरी तरह से उगा हुआ वृक्ष एक नए लगाए गए पौधे से 70 गुना ज्यादा पर्यावरण को साफ रखता है।
- एक पूरी तरह से उगे हुए पेड़ की कीमत लगभग ₹ 50,000 तक होती है। एक पेड़ अपने पूरे जीवन काल के दौरान लगभग 1,000 कि.ग्रा. कार्बन डाईऑक्साइड सोखता हैं।
- अध्ययनों से पता चला है कि पौधे सेहत में सुधार के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। एक मरीज जो कि अस्पताल के कमरे में हरे–भरे पेड़ों को देखता है तो उसके स्वास्थ्य में जल्दी सुधार होता है।
- पेड़ कभी भी बड़ी उम्र की वजह से नहीं मरते हैं, वह हमेशा बीमारी, कीड़ों या फिर मनुष्य की वजह से ही मरते है। अन्यथा यह कभी भी नहीं मरते। कोलकता में एक वृक्ष है जिसकी आयु 2,000 वर्ष से ज्यादा है। एक पेड़ सालाना 2,000 लीटर पानी धरती में से चूस लेते हैं।
- विश्व भर में पेड़ों की 20,000 से ज्यादा प्रजातियाँ पाई जाती है। भारत में वनस्पतियों की सबसे ज्यादा प्रजातियाँ पाई जाती हैं।
- दुनिया का सबसे ऊंचा जीवित पेड़ रेडवुड नेशनल पार्क, कैलिफोर्निया में स्थित है। इसकी ऊँचाई करीब 115.85 मीटर है। दिल्ली में स्थित कुतुबमीनार से भी ऊंचे इस पेड़ की तुलना कुछ और चीजों से करें तो पाएंगे कि यह अमेरिकी संसद भवन और *स्टेच्यू ऑफ लिबर्टी* से भी कहीं ज्यादा ऊँचा है।

स्वयं जगें, लोगों को जगाएं।
मिलकर पर्यावरण बचाएं।।

आइए, इस धरा का सौंदर्य वृक्ष लगाकर बढ़ाए।

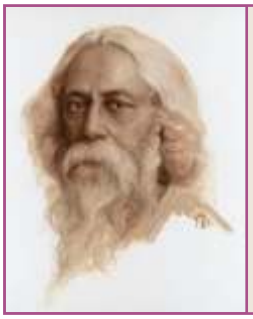

भारतीय भाषाएं नदियां है और
हिंदी महानदी।

-रवीन्द्रनाथ ठाकुर

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

वनों की पुर्नस्थापना एवं पारिस्थितिकी

दीपक कोहली

पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन विभाग, उत्तर प्रदेश शासन,
5/104, विपुल खंड, गोमती नगर, लखनऊ

आप सभी वनों के महत्व से परिचित ही हैं। वन संपदा ही है जो मानव जीवन को आसान बनाने में मदद करती है। विशेषज्ञ मजबूती के साथ दावा करते हैं कि वनों के बिना जीवन की कल्पना करना बेबुनियाद है। वनों के महत्व के बारे में जागरूकता बढ़ाने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ ने 28 नवंबर 2012 में एक संकल्प पत्र पारित किया। इस पत्र के जरिए हर साल 21 मार्च को 'विश्व वानिकी दिवस' मनाने की घोषणा की गई। इसके बाद से ही पूरी दुनिया में वानिकी दिवस मनाए जाने की परंपरा शुरू हुई। विश्व वानिकी दिवस का उद्देश्य है कि विश्व के सभी देश अपनी वन–सम्पदा की तरफ ध्यान दें और वनों को संरक्षण प्रदान करें। प्रत्येक वर्ष विश्व वानिकी दिवस का कोई न कोई *थीम* अवश्य ही होता है। इस वर्ष 21 मार्च, 2021 को आयोजित हुए विश्व वानिकी दिवस का *थीम* 'वनों की पुनर्स्थापनारू पारिस्थितिकी कार्यक्षमता को पुनः प्राप्त करने तथा मानव कल्याण को बढ़ावा देना' रखा गया था।

धरती का एक तिहाई भू भाग (विश्व का करीब 31 प्रतिशत भू भाग) वनों से आच्छादित है। ये वन क्षेत्र 80 प्रतिशत से ज्यादा पशुओं की प्रजाति, पौधों और कीटों के लिए एक घर है। लगभग 1.6 *बिलियन* लोग, जिसमें लगभग 2,000 सभ्यताएं शामिल हैं, वे अपने जीवन के लिए वनों पर निर्भर हैं। वन क्षेत्र आश्रय, रोजगार और इन पर निर्भर रहने वाले समुदायों को सुरक्षा प्रदान करते हैं। भारतीय वन सर्वेक्षण, देहरादून की नवीनतम रिपोर्ट के अनुसार भारत में वनों एवं वृक्षों से आच्छादित कुल क्षेत्रफल 8,07,276 वर्ग कि.मी. (कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का 24.56%) है। 'राष्ट्रीय वन नीति, 1988' के तहत देश के 33.3% क्षेत्र पर वन होने चाहिए। भारत में सर्वाधिक वन क्षेत्रफल वाले 5 राज्य हैं, मध्य प्रदेश–77,482 वर्ग कि.मी., अरुणाचल प्रदेश–66,688 वर्ग कि.मी., छत्तीसगढ़–55,611 वर्ग कि.मी., ओडिशा–51,619 वर्ग कि.मी. तथा महाराष्ट्र–50,778 वर्ग कि.मी.।

वन या जंगल एक ऐसा जीवित समुदाय होता है, जिसमें विभिन्न प्रकार के जीव–जंतु, पेड़–पौधे, कीट–पतंगे एक–दूसरे पर निर्भर होकर अपना जीवन बिताते हैं। विश्व भर में तेजी से हो रही जंगलों की सफाई के कारण पेड़–पौधों की दुर्लभ प्रजातियां और जीव–जंतुओं की दुर्लभ प्रजातियां तेजी से विलुप्त हो रही हैं। इसके अतिरिक्त पेड़ों की निरंतर घटती संख्या से एक ओर जहां *ग्लोबल वार्मिंग* की समस्या तेजी से बढ़ रही है तो वहीं पर्यावरण और प्रकृति का संतुलन भी बिगड़ रहा है। नदियां गर्मियों में सूखने लगी हैं और बारिश में कई जगहों पर बाढ़ की नौबत आ जाती है। कभी बेमौसम बारिश तो कभी भीषण अकाल का सामना करना पड़ रहा है। पेड़ों के कम होने और उद्योगों के बढ़ने के चलते प्रदूषण का स्तर बढ़ता जा रहा है।

गत कुछ दशकों में जिस तरह से मनुष्य ने अपने लालच की पूर्ति के लिए जंगलों को काटना शुरू किया है, उससे जलवायु परिवर्तन, *ग्लोबल वॉर्मिंग, ग्लेशियर* का पिघलना जैसी विकट समस्याएं शुरू हुई हैं। अगर हमने अभी भी ध्यान नहीं दिया तो समस्त प्रकृति व जीव खतरे में पड़ जाएंगे। उल्लेखनीय है कि किसी वयस्क व्यक्ति को जिंदा रहने के लिए जितनी ऑक्सीजन की जरूरत है, वह उसे 16 बड़े–बड़े पेड़ों से मिल सकती है। लेकिन पेड़ों की अंधाधुंध कटाई से उनकी संख्या दिन–ब–दिन कम होती जा रही है। वर्तमान समय में वायुमंडल से कार्बन डाई ऑक्साइड, कार्बन मोनो ऑक्साइड, *सीएफसी* जैसी जहरीली गैसों को सोखकर धरती पर रह रहे असंख्य जीवधारियों को प्राणवायु 'ऑक्सीजन' देने वाले जंगल आज खुद अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष कर रहे हैं।

दुनिया की आधे से ज्यादा वनस्पति, जंतु तथा कीट प्रजातियां इन्हीं उष्णकटिबंधीय वर्षावनों में पाई जाती हैं। लेकिन बड़ी तेजी से काटे जा रहे पेड़ों के कारण सभी का जीवन खतरे में पड़ रहा है। मानव जिस निर्ममता से पृथ्वी को जंगलविहीन कर रहा है, उसे देखकर लगता है कि आने वाले कुछ वर्षों में जंगल संग्रहालय की वस्तु बनकर रह जाएंगे। अतः हमें हर हाल में जंगलों को बचाने एवं ज्यादा से ज्यादा पेड़–पौधे लगाने की आवश्यकता है। संयुक्त राष्ट्र महासभा की 75वीं वर्षगांठ के अवसर पर संयुक्त राष्ट्र जैव विविधता शिखर सम्मेलन में भारत ने वर्ष 2030 तक बंजर तथा वनों की कटाई वाली 2.6 करोड़ हेक्टेयर भूमि को पुनर्स्थापित करने की अपनी प्रतिबद्धता को दोहराया है। वर्तमान में जलवायु परिवर्तन और वैश्विक तापमान में वृद्धि के कारण जैव विविधता को हो रही क्षति को रोकने के लिये प्रदूषण तथा उत्सर्जन को कम करने के प्रयासों के साथ पारिस्थितिकी तंत्र में सुधार लाने पर विशेष ध्यान दिया जाना बहुत ही आवश्यक है। इसलिए वर्ष 2021–30 को 'संयुक्त राष्ट्र पारिस्थितिकी तंत्र पुर्नस्थापना दशक' के रूप में घोषित किया गया है। जर्मनी द्वारा अंतर्राष्ट्रीय प्रकृति संरक्षण संघ के साथ मिलकर वर्ष 2011 में *'बॉन चैलेंज'* की शुरुआत की गई जिसके तहत वर्ष 2020 तक 1500 लाख हेक्टेयर और वर्ष 2030 तक 3500 लाख हेक्टेयर बंजर तथा वनोन्मूलन से प्रभावित क्षेत्रों में वनों की पुनर्बहाली का लक्ष्य रखा गया। इसके साथ ही भारत द्वारा राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित योगदान के तहत वर्ष 2030 तक अतिरिक्त वन एवं वृक्ष आवरण के माध्यम से 2.5 से 3 अरब टन कार्बन डाइऑक्साइड समतुल्य अतिरिक्त कार्बन *सिंक* तैयार करने का लक्ष्य रखा गया है।

वनों की पुनर्स्थापना एवं पारिस्थितिकी कार्यक्षमता को पुनः प्राप्त करने के लिए पेड़ और अन्य वनस्पतियाँ प्रकाश संश्लेषण के माध्यम से पर्यावरण से कार्बन डाइऑक्साइड को कम करने में सहायता करती हैं साथ ही मृदा भी पशुओं और पौधों से मिलने वाले जैविक कार्बन को अवशोषित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। हालाँकि मृदा में अवशोषित इस प्रकार के कार्बन की मात्रा भूमि प्रबंधन प्रथाओं, खेती के तरीकों, मिट्टी के पोषण और तापमान के साथ बदलती रहती है। जलवायु परिवर्तन जैसी गंभीर चुनौती से निपटने के अलावा वन हमारे दैनिक जीवन में कई तरह से महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अंतर्राष्ट्रीय प्रकृति संरक्षण संघ की एक *रिपोर्ट* के अनुसार, वैश्विक स्तर पर लगभग 1.6 *बिलियन* लोग (वैश्विक आबादी का लगभग 25%) अपनी आजीविका के लिये वनों पर निर्भर हैं, जिनमें से बहुत से लोग विश्व के सबसे गरीब वर्ग से संबंधित हैं। वन प्रत्येक वर्ष स्वच्छ जल और स्वस्थ मिट्टी के अतिरिक्त लगभग 70–100 *बिलियन* अमेरिकी डॉलर की वस्तुएँ एवं सेवाएँ उपलब्ध कराते हैं। विश्व की कुल स्थलीय जैव विविधता का लगभग 80% भाग वनों से संबंधित है।

भारतीय वन सर्वेक्षण के एक अध्ययन के अनुसार, यदि देश में प्रभावित हुए कुल वन क्षेत्र के 50% हिस्से की पुनर्स्थापना की जाती है। तो वर्ष 2030 तक इससे 1.63 *बिलियन* टन कार्बन डाइऑक्साइड के समतुल्य कार्बन *सिंक* को बढ़ाया जा सकता है, जबकि 70% की पुनर्स्थापना से कार्बन सिंक में 3.39 बिलियन टन की वृद्धि की जा सकती है। देश में वनावरण को बढ़ाने के लिये निम्नलिखित उपायों को अपनाया जा सकता है:

1. गंभीर रूप से प्रभावित और खुले वनों की पुनर्स्थापना
2. बंजर भूमि का वनीकरण
3. कृषि वानिकी
4. हरित गलियारों का विकास, रेलवे लाइन, नहरों, नदियों और सड़कों के किनारे वृक्षारोपण।

वर्तमान में भारत में वन प्रबंधन के तीन प्रमुख उद्देश्य हैं:

1. जल के लिये वनों का प्रबंधन

इसके तहत भूजल पुनर्भरण को बढ़ाने के साथ–साथ नदियों और झरनों में सतही प्रवाह और उप–सतही प्रवाह को बनाए रखना शामिल है। इसके माध्यम से कई अन्य लाभ जैसे– वनाग्नि के मामलों में गिरावट आदि के लक्ष्य को भी प्राप्त किया जा सकता है।

2. कार्बन *सिंक* के रूप में वनों का प्रबंधन

पेड़ पौधों द्वारा कार्बन डाईऑक्साइड के संग्रह के अतिरिक्त वन उस क्षेत्र के पारिस्थितिकी तंत्र को मजबूत करते हैं, जिसके माध्यम से इसके विभिन्न घटक पर्यावरण में कार्बन उत्सर्जन को कम करने में सहायता करते हैं।

3. आजीविका के लिये वनों का प्रबंधन

विश्व में लाखों लोग अपनी आजीविका के लिये प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से वनों पर निर्भर करते हैं। ऐसे में नीतियों के निर्माण के दौरान वन संरक्षण और इस पर आश्रित लोगों के हितों के बीच संतुलन को बनाए रखने पर ध्यान देना बहुत ही आवश्यक है।

वन–भूमि पर उद्योग–धंधों तथा मकानों का निर्माण, वनों को खेती के काम में लाना और लकड़ियों की बढती माँग के कारण वनों की अवैध कटाई आदि वनों के नष्ट होने के प्रमुख कारण है। हमने अपने लाभ के लिए पेड़ काट दिए, लेकिन जंगल कुदरत द्वारा दिए गए वे उपहार हैं, जो हमें जीवन के लिए जरूरी ऑक्सीजन देते हैं। जलवायु परिवर्तन जैसी तमाम समस्याओं से बचने के लिए हमें पेड़ लगाने चाहिए। अब समय आ गया है कि देश की 'राष्ट्रीय निधि' को बचाए और इनका संरक्षण करें। हमें वृक्षारोपण को बढ़ावा देना चाहिएं। आप इसकी शुरुआत अपने घर के आसपास एक पेड़ लगाकर कर सकते हैं। पृथ्वी को इस घोर संकट से बचाने के लिए विश्व में हम सभी अगर 1–1 पेड़ लगाएं तो पृथ्वी को फिर से हरा–भरा बनाया जा सकता है और तभी विश्व वानिकी दिवस की सार्थकता पूर्ण होगी। अब तो आप समझ ही गए होंगे कि वन और वृक्ष हमारे जीवन के लिए लिए इतने महत्वपूर्ण क्यों हैं? इसी सम्बन्ध में प्रसिद्ध पर्यावरणविद कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी ने उचित ही कहा है कि–'वृक्षों का अर्थ है जल, जल का अर्थ है रोटी और रोटी ही जीवन है।

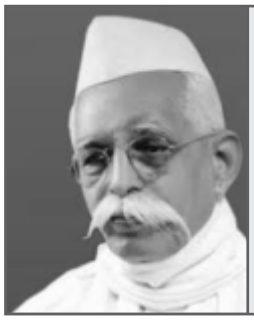

देवनागरी ध्वनिशास्त्र की दृष्टि से अत्यंत वैज्ञानिक विधि है।

-रविशंकर शुक्ल

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

कृषि क्षेत्र में महिलाओं की सहभागिता

आँचल सिंह, राघवेन्द्र कुमार एवं संगीता श्रीवास्तव
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

भारत एक कृषि प्रधान देश हैं, जहाँ महिला और पुरूष कंधे से कंधा मिलाकर एक साथ खेती का काम करते हैं। लेकिन जब कभी खेती–किसानी की बात होती है तो सिर्फ भाईयों की बात होती है। किसान बहनों की बात बहुत कम होती है, जबकि महिलाओं का योगदान भी कृषि में उतना ही सराहनीय होना चाहिए जितना श्रेय पुरूषों को मिलता है। यह हैरान कर देने जैसी हकीकत है कि खेती–बाड़ी को आमतौर से पुरूष किसान का काम समझा जाता है।

इसके विपरीत कृषि काम में महिलाओं का योगदान बराबर होता है, लेकिन कंधे से कंधा मिलाकर चलने के बावजूद भी महिलाओं के पास किसी भी तरह के अहम फैसले लेने का अधिकार नहीं होता है या फिर महिला की भूमिका लगभग नगण्य होती है। यह बात इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि खेती–बाड़ी का लगभग आधे से अधिक काम किसान परिवार की महिलाओं के जिम्मे में आता है।

ग्रामीण अर्थव्यवस्था में योगदान

अगर आँकड़े देखें तो दुनिया की अस्सी प्रतिशत महिलाएँ खेती–बाड़ी से जुड़ी हैं और हमारे देश में भी यह आँकड़ा कुछ कम नहीं है। पुरुष कृषि श्रमिकों के बहुमत संख्या होने में, महिलाओं का न केवल भौतिक श्रम में योगदान है, बल्कि गुणवत्ता और दक्षता उत्पादन के मामले में भी महिलाएँ शामिल हैं। सभी विकासशील देशों में कृषि और ग्रामीण अर्थव्यवस्था के लिए महिलाएँ आवश्यक योगदान करती हैं। ऐसा माना जाता है कि परिवार में महिलाएँ कृषि कार्यबल की बुनियाद होती है। पिछले कुछ वर्षों में महिलाएँ कृषि एवं विकास, खाद्य सुरक्षा, डेयरी, पोषण, रेशम उत्पादन, बागवानी, मत्स्य पालन और अन्य संबद्ध सेवाओं में भी उसके योगदान की महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं।

बराबरी का दर्जा तो मिलें

विशेषज्ञों का मानना है कि अगर कृषि में महिलाओं को बराबर का दर्जा दिया जाए तो कृषि कार्यों में महिलाओं की बढ़ती संख्या से उत्पादन में बढ़ोत्तरी हो सकती है और ग्रामीण आजीविका सृजन में भी व्यापक सुधार होगा। हमारी सरकार ने कृषि, सहकारिता एवं किसान कल्याण विभाग के माध्यम से महिलाओं के लिए कई प्रकार की योजनाओं की पहल की है। इन दिनों सरकार की विभिन्न नीतियाँ जैसे जैविक खेती, भारतीय कौशल विकास योजना इत्यादि में महिलाओं को प्राथमिकता दी जा रही है और यदि महिलाओं को अच्छा सुअवसर तथा सुविधा प्राप्त हो तो महिलाएँ देश की कृषि को द्वितीय हरित क्रान्ति की तरफ ले जाने के साथ–साथ देश के विकास का परिदृश्य भी बदल सकती हैं। महिलाओं को कृषि क्षेत्र के प्रति जागरूक करने और उन्हें इस क्षेत्र में सम्मानजनक अवसर दिलाने के उद्देश्य से कृषि एवं कल्याण मंत्रालय द्वारा प्रति वर्ष 15 अक्टूबर को 'राष्ट्रीय महिला किसान दिवस' के रूप में मनाने का फैसला किया गया है। इस दिवस का उद्देश्य कृषि में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी को बढ़ाना है। इसके अलावा कृषि और सम्बद्ध क्षेत्र में महिलाओं को और सशक्त बनाने के लिए कृषि एवं किसान मंत्रालय ने किसानों के लिए बनी राष्ट्रीय कृषि नीति में उन्हें घरेलू और कृषि दोनों पर संयुक्त पद देने जैसे नीतिगत प्रावधान दिए हैं। साथ ही कृषि नीति में उन्हें किसान *क्रेडिट कार्ड* जारी करना, फसल, पशुधन, कृषि प्रसंस्करण आदि के माध्यम से आजीविका के अवसरों का सृजन करवाए जाने जैसे प्रावधान का भी जिक्र किया गया है।

घरेलू जीवन के साथ खेती–किसानी

महिला किसानों और पर्यावरण स्वास्थ्य के बीच का संबंध सिर्फ निर्वाह और अस्तित्व के लिए नहीं है, बल्कि यह भारतीय अनुष्ठान और अभ्यास में शामिल कृषि उर्वरता के सांस्कृतिक मूल्यांकन से उपजा है। हमारे देश में महिलाओं से जमीन तथा पौधों का संबंध नया नहीं है। यह करीबी रिश्ता देश के विभिन्न भागों में रस्मों और समारोहों के दौरान साफ परिलक्षित है जहाँ

कोयम्बटूर की महिला पद्मश्री किसान पप्पम्मल

तमिलनाडु के कोयम्बटूर की प्रसिद्ध 107 साल की महिला किसान पप्पम्मल उन 10 हस्तियों में शामिल हैं, जिन्हें वर्ष 2021 के गणतंत्र दिवस के अवसर पर भारत के चौथे सर्वोच्च नागरिक पुरस्कार पद्मश्री पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। 1914 में तमिलनाडु के देवलपुरम गांव में जन्मी बुजुर्ग महिला पप्पम्मल ने बहुत ही कम उम्र में अपने माता–पिता को खो दिया था और उनका पालन–पोषण नीलगिरि जिला के लिए मशहूर कोयम्बटूर जिले के थेक्कमपट्टी में उनकी नानी ने किया। पिछली शताब्दी में पप्पम्मल ने दो विश्व युद्धों, भारत की स्वतंत्रता, कई प्राकृतिक आपदाओं और अब कोरोना वायरस महामारी को देखा है।

107 साल की बुजुर्ग महिला किसान आज भी हर दिन यह दादी अपनी जमीन पर जा कर सक्रिय है और अपने ढाई एकड़ क्षेत्र में ऑर्गेनिक खेती से बाजरा, दाल, सब्जियां और केले के साथ–साथ वह तमाम फसलों की जैविक खेती करती है। वह जैविक खेती की एक महान योद्धा बनी हुई है। वह कहती है कि युवा पीढ़ी केवल त्वरित परिणाम चाहती है और वास्तव में जैविक खेती में निवेश करने का समय नहीं है।

कृषि में योगदान देने के अलावा पप्पम्मल कृषि से संबंधित विभिन्न कार्यक्रमों में भाग लेती है और वो भवानी नदी के किनारे स्थित गांव थेक्कमपट्टी में अपने खेत पर रहती है। तमाम सेमिनार और कॉन्फ्रेंसों में हिस्सा लेकर वह जैविक खेती की तकनीक और फायदों के बारे में बताती है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने अपने फेसबुक पेज पर एक बुजुर्ग महिला की तस्वीर शेयर की है। इस तस्वीर में वह उनके आगे सिर झुकाकर आशीर्वाद लेते नजर आ रहे हैं।

नवधान्य पूजा, जौ अनाज आदि की पूजा की जाती है। इसके अलावा महिला किसान पारंपरिक कृषि विधियों का पर्यावरण के अनुकूल उपयोग करती है जैसे ही बीज संरक्षण, प्राकृतिक जैविक खाद इत्यादि। भारत में महिला कृषि मजदूर का काम जैसे कि बुआई, रोपाई, निराई, जुताई और कटाई तक सीमित ही नहीं है बल्कि सिंचाई, पक्षियों से रखवाली इत्यादि सभी कामों में पुरूष कृषि मजदूरों के साथ काम करती हैं और यह काम प्रायः घरेलू जीवन और बच्चों के लालन–पालन के दायरे के बाहर होता है। इसके अलावा गृह वाटिका में सब्जी के पौधे लगाना, रोपाई के लिए बीज साफ करना, नवोदित पौधों की *नर्सरी* तैयार करना जैसे अनेक काम भी महिलाएँ करती हैं।

आर्थिक आजादी के लिए प्रयासरत

कृषि मंत्रालय के स्तर से भी निरंतर इस बात के लिए प्रयास किए जा रहे हैं कि कृषि कार्यों में संलग्न ग्रामीण महिलाओं की आर्थिक स्थिति में तेजी से सुधार हो। हमारे देश में महिलाओं के लिए कृषि विज्ञान केन्द्रों के द्वारा विकास हेतु विशेष प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाए जाते हैं, इनके द्वारा सिर्फ संस्थागत प्रशिक्षण की

पद्मश्री किसान चाची

बिहार के मुजफ्फरपुर सरैया प्रखंड के आनंदपुर की राजकुमारी देवी किसान चाची, साइकिल चाची, किसानश्री नाम से प्रचलित है। वर्ष 2020 में इन्हें पद्मश्री अवार्ड मिला, तो महिला कृषकों में नई शक्ति का संचार हुआ। ये बिहार की पहली महिला कृषक हैं, जिन्हें यह सम्मान मिला।

राजकुमारी देवी ने आर्थिक तंगी की हालत में खुद कुछ करने की ठानी। गांव की सामान्य परिवार से आने के बावजूद खेती से निकली चीजों से अचार, मुरब्बा जैसे उत्पाद तैयार कर स्वयं साइकिल से व्यवसाय करने की शुरुआत किया। प्रारंभ में घर में भी विरोध हुआ, लेकिन हार न मानी। वे बताती है की जब स्वयं बनाए उत्पाद पसंद किए जाने लगे तो लगा कि उन्होंने इसे और गुणवत्तापूर्ण बनाने की ठानी। पहले तो राजेंद्र कृषि विश्वविद्यालय से उन्नत कृषि की जानकारी लेकर पपीता और ओल की खेती शुरू की। अपने खेत में पैदा हुए ओल का अचार और आटा बनाकर बनाकर बेचना शुरू किया। साइकिल उठाई और मेला–ठेला और घर–घर जाकर इसकी बिक्री शुरू की। गांव की महिलाओं को जब इसका पता चला तो वे भी सीखने आने लगी। उनके बनाए अचार की महानायक अमिताभ बच्चन भी सराहना कर चुके है और अपने शो में बुलाया। किसान चाची को मुख्यमंत्री नीतीश कुमार से लेकर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी तक सम्मानित कर चुके हैं।

कृषि विश्वविद्यालय में प्रशिक्षण लेकर आसपास के किसानों को भी जोड़ते हुए किसान चाची ने अपना ब्रांड बना लिया। 2003 में सरैया मेले में काम को सराहा गया। 2007 में किसानश्री अवार्ड मिला तो नाम राष्ट्रीय फलक तक पहुंचा। पद्मश्री मिलने को किसान चाची ग्रामीण महिलाओं का सम्मान मानती है। उनका मानना है की महिलाओं का सशक्तीकरण तभी होगा जब महिलाएं रूढ़ियों को तोड़ अपना रास्ता स्वयं बनाने लगेंगी।

ही व्यवस्था नहीं की गई है बल्कि गाँवों में महिलाओं के लिए 'महिला चर्चा मंडल' स्थापना की गई है, जिसके माध्यम से उचित कृषि एवं गृह विज्ञान के तकनीकों को पहुँचाने का प्रयास किया गया है। आकाशवाणी के विभिन्न केन्द्रों से महिलाओं के लिए कृषि, पशुपालन एवं विकास इत्यादि से संबंधित तकनीकी समय–समय पर प्रसारित की जाती है।

भविष्य की संभावनाएं

सहकारी समितियों के माध्यम से महिलाओं को प्रखर सदस्य बनाने के लिए अभियान चलाने की आवश्यकता है जिससे महिलाओं को भी सहकारी समितियों से ऋण मुहैया करवाने तकनीकी मार्गदर्शन, कृषि उत्पादों का मंडी में कुशलतापूर्वक विपणन इत्यादि की सुविधा उपलब्ध हो सके। महिला किसानों को अधिक से अधिक राजनीतिक और वित्तीय समर्थन दिया जाए और कृषि उत्पादन के विकास कार्यक्रमों का आयोजन किया जाना चाहिए। देश में खेतिहर महिलाओं की भागदारी 3.60 करोड़ है यानी 30.33 प्रतिशत जबकि महिला कृषि श्रमिक में 6.15 करोड़ महिलाएँ शामिल हैं जो कुल कृषि मजदूरों का 42.67 प्रतिशत है। महिला सशक्तिकरण योजना के दायरे में अब तक 36 लाख किसान महिलाएँ आ चुकीं हैं। इस योजना को और अधिक बढ़ाने की आवश्यकता है, ताकि कृषि में अधिकार संपन्नता आ सके। इससे किसानों की आय दोगुनी करने के उद्देश्य में भी सफलता मिलेगी।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

समाज तथा परिवार के उत्थान में महिलाओं की भागीदारी

काम्या सिंह
1/3/117, सहादतगंज, अयोध्या

हमारे समाज में महिला अपने जन्म से लेकर मृत्यु तक एक अहम किरदार निभाती है। अपनी सभी भूमिकाओं में निपुणता दर्शाने के बावजूद आज के आधुनिक युग में महिला पुरूष से पीछे खड़ी दिखाई देती है। पुरूष प्रधान समाज में महिला की योग्यता को से पुरूष कम देखा जाता है। वैसे तो प्राचीन काल से ही दुनिया भर में महिलाओं को पुरूषों की अपेक्षा निम्न स्थान दिया जाता रहा है, परन्तु शिक्षा और औद्योगिक विकास के साथ–साथ विकसित देशों में महिलाओं के प्रति सोच में परिवर्तन आया और नारी समाज को पुरूष के बराबर मान सम्मान और न्याय प्राप्त होने लगा। आदिकाल हो, वैदिक काल हो या आज का आधुनिक काल, महिलाएं हमेशा से शिक्षा और समाज में अग्रणी रही हैं। हां यह जरूर है कि मध्य काल में महिलाओं की भूमिका दयनीय स्थिति में हो गई थी न उनको शिक्षा के क्षेत्र में आगे आने दिया जाता था न समाज में उनका महत्व रह गया था। देश की स्वतंत्रता के उपरांत महिलाओं ने अपने वर्चस्व की लड़ाई शुरू कर दी चाहे वह शिक्षा का क्षेत्र रहा हो या समाज का। भारत में महिलाओं का इतिहास काफी गतिशील रहा है। आधुनिक भारत में महिलाएं राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, लोकसभा अध्यक्ष, प्रतिपक्ष की नेता आदि जैसे शीर्ष पदों पर आसीन हुई हैं।

भारत में महिलाओं की स्थिति सदैव एकसमान नहीं रही है। उनकी स्थिति में वैदिक युग से लेकर आधुनिक काल तक अनेक उतार–चढ़ाव आते रहें हैं। वैदिक युग में स्त्रियों की स्थिति सुदृढ़ थी। परिवार तथा समाज में उन्हें सम्मान प्राप्त था। उनको शिक्षा का अधिकार प्राप्त था। सम्पत्ति में उनको बराबरी का हक था। सभा व समितियों में स्वतंत्रतापूर्वक भाग लेती थी। मध्यकाल महिलाओं के सम्मान, विकास और सशक्तिकरण का अंधकार युग था। मुगल शासन, सामन्ती व्यवस्था, केन्द्रीय सता का ध्वस्त होना, विदेशी आक्रमण और शासकों की विलासितापूर्ण प्रवृत्ति ने महिलाओं को उपभोग की वस्तु बना दिया था और उसके कारण बाल विवाह, पर्दा प्रथा, अशिक्षा आदि विभिन्न सामाजिक कुरीतियों का समाज में प्रवेश हुआ, जिसने महिलाओं की स्थिति को हीन बना दिया तथा उनके निजी व सामाजिक जीवन को कलुषित कर दिया। इन परिस्थितियों के बावजूद भी कुछ महिलाओं ने राजनीति, साहित्य, शिक्षा और धर्म के क्षेत्रों में सफलता हासिल की। मध्यकाल से लेकर 21वीं सदी तक आते–आते पुनः महिलाओं की स्थिति मे सुधार हुआ और महिलाओं ने शैक्षिक, राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, प्रशासनिक, खेलकूद आदि विविध क्षेत्रों में उपलब्धियों के नए आयाम तय किये। आज महिलाएं आत्मनिर्भर, स्वनिर्मित, आत्मविश्वासी हैं। जिसने पुरूष प्रधान चुनौतीपूर्ण क्षेत्रों में भी अपनी योग्यता प्रदर्शित की है। वह केवल शिक्षिका, नर्स, चिकित्सक न बनकर इंजीनियर, पायलट, वैज्ञानिक, तकनीशियन, सेना, पत्रकारिता, महिला कृषक जैसे नए क्षेत्रों को अपना रही है।

'जब–जब स्त्री अपनी उपस्थिति दर्ज कराना चाहती है तब–तब जाने कितने रीति–रिवाजों, परम्पराओं पौराणिक आख्यानों की दुहाई देकर उसे गुमनाम जीवन जीने पर विवश कर दिया जाता है।' महिलाओं ने स्वयं के अनुभव के आधार पर, अपनी मेहनत और आत्मविश्वास के आधार पर अपने लिए नई मंजिलें–नये रास्तों का निर्माण किया है।

सामाजिकता के निर्वहन में स्त्री–पुरूष को समान रूप से सहभागी बनना होगा और इसके लिए स्त्री को एक देह नही, स्त्री रूप में एक इंसान स्वीकार करे। स्त्री की असली आजादी तभी होगी जब उसके दिमाग की स्वीकार्यता हो, न कि केवल उसकी देह की।

वर्तमान समय में स्त्रियों की स्थिति में सामाजिक व पारिवारिक तौर पर काफी बदलाव आये हैं, लेकिन फिर भी वह अनेक स्थानों पर पुरूष प्रधान मानसिकता से पीड़ित हो रही है। इस सन्दर्भ में स्वामी विवेकानन्द का यह कथन उल्लेखनीय है–किसी भी राष्ट्र की प्रगति का सर्वोत्तम *थर्मामीटर* है, वहां की महिलाओं की स्थिति। हमें नारियों को ऐसी स्थिति में पहुँचा देना चाहिए, जहाँ वे अपनी समस्याओं को अपने ढंग से स्वयं सुलझा सकें। हमें नारीशक्ति के उद्धारक नहीं, वरन् उनके सेवक और सहायक बनना चाहिए। भारतीय नारियाँ संसार की अन्य किन्ही भी नारियों की भांति अपनी समस्याओं को सुलझाने की क्षमता रखती हैं। आवश्यकता है उन्हें उपयुक्त अवसर देने की। इसी आधार पर भारत के उज्जवल भविष्य की संभावनाएं सन्निहित हैं।

महिलाएं समाज के विकास एवं तरक्की में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं साथ ही साथ परिवार की तरक्की में अपना अहम योगदान देती हैं। उनके बिना विकसित तथा समृद्ध समाज की कल्पना भी नहीं की जा सकती। ब्रिघम यंग के द्वारा एक प्रसिद्ध कहावत है कि 'अगर आप एक आदमी को शिक्षित कर रहें हैं तो आप सिर्फ एक आदमी को शिक्षित कर रहें हैं पर अगर आप एक महिला को शिक्षित कर रहें हैं तो आप आने वाली पूरी पीढ़ी को शिक्षित कर रहे हैं।'

महिलाएं परिवार बनाती हैं, परिवार घर बनाता है, घर समाज बनाता है और समाज ही देश बनाता है। इसका सीधा अर्थ यही है कि महिला का योगदान हर जगह है। शिक्षा और महिला सशक्तिकरण के बिना परिवार समाज और देश का विकास नहीं हो सकता।

नारी ईश्वर की सर्वोत्तम रचना है। पौराणिक ग्रन्थों से लेकर आधुनिक समाज में महिला शक्ति को स्वीकार किया गया है। नारी परिवार में जहाँ बच्चों के लिए पहला गुरू, संसार निर्माण करने वाली, तो देश और समाज में आदर्श नागरिक बनाने में अहम भूमिका अदा करती है। यदि आपको विकास करना है तो महिलाओं का उत्थान करना होगा। महिलाओं का विकास होने पर समाज का विकास स्वतः हो जायेगा।

आरोग्य एवं संजीवनी प्रभाग

अच्छे स्वास्थ्य के लिए अत्यंत पौष्टिक है चना का सेवन

गोविंद कान्त श्रीवास्तव[1], राजेंद्र प्रसाद श्रीवास्तव[1], ब्रह्म प्रकाश[2], ओमप्रकाश[2] एवं कामिनी सिंह[2]

[1]भाकृअनुप–भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान, कानपुर

[2]भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

दालें शाकाहारी लोगों के लिए प्रोटीन का प्रमुख स्त्रोत हैं। भारत का दलहन उत्पादन में अग्रणी स्थान है। देश के कुल दलहन उत्पादन में लगभग 45% का योगदान करने वाली चना सबसे महत्वपूर्ण दलहनी फसल है। भारत में मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश व उत्तर प्रदेश प्रमुख चना उत्पादक राज्य हैं जो मिलकर चना के अंतर्गत कुल राष्ट्रीय क्षेत्र एवं उत्पादन में 89.46 तथा 88.4 प्रतिशत का योगदान देते हैं। मध्य प्रदेश भारत का प्रमुख चना उत्पादक राज्य है जहां 35.9 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में 1280 किलोग्राम/हेक्टेयर की औसत उत्पादकता के साथ 46 लाख टन चना का उत्पादन होता है। बीज के रंग और भौगोलिक वितरण के आधार पर, चना को दो प्रकारों में बांटा गया है: देसी और काबुली। काबुली चना की किस्में सफेद से क्रीम रंग की होती हैं और लगभग सम्पूर्ण बीज के रूप में पकाकर उपयोग की जाती हैं। देसी किस्मों के बीज भूरे, हल्के भूरे, हल्का पीला, पीला, नारंगी या हरे रंग के साथ चोंच पर झुर्रीदार होते हैं। इन किस्मों को आमतौर पर दाल प्राप्त करने के लिए प्रसंस्कृत किया जाता है। प्रसंस्करण के बाद पकी दाल को सीधे पकाया जाता है या आटे की तरह पीस कर बेसन बना दिया जाता है। देसी प्रकार की बड़े दानों वाली किस्मों का उपयोग प्रायः भूनने और *पर्चिंग* के लिए किया जाता है।

पोषण संबंधी संरचना

चना की औसत रासायनिक संरचना सारिणी 1 में दी गई है। चना के कुल बीज भार में बीजआवरण अर्थात छिलके का भार 14.5 से 16.4% का योगदान देता है। कुल बीज भार में बीज पत्रों का अंश 82.9 से 84.0% और भ्रूण का अंश 1.2 से 1.5% होता है। बीज पत्रों में सम्पूर्ण दाने का लगभग 96% प्रोटीन, 94% वसा, 81% राख, 88% कार्बोहाइड्रेट, 94% फास्फोरस और 70% लौह तत्व होता है। यद्यपि भ्रूण प्रोटीन, वसा और खनिजों में समृद्ध है, लेकिन कुल बीज भार के आधार पर इसका योगदान अत्यंत कम है। बीज आवरण (छिलके) में अधिकांशतया पच सकने योग्य कार्बोहाइड्रेट या कैल्शियम होता हैं। बीज पत्र (छिलके वाले विभाजित बीज) उपभोग के लिए पोषक तत्वों का प्रमुख स्रोत होते हैं ।

चना के सम्पूर्ण दाने में कार्बोहाइड्रेट की कुल मात्रा 52.4 से 70.9% के मध्य पाई गई है। स्टार्च चना का प्रमुख कार्बोहाइड्रेट है और 37.2 से 50.8% की *रेंज* में पाया जाता है। छिलके वाली दाल में 55.3 से 58.1% स्टार्च होता है। काबुली किस्मों की तुलना में देसी क़िस्मों में *स्टार्च* की मात्रा कम होती है। स्टार्च में 31.8 से 45.8% तक *एमाइलोज* होता है, जब कि शेष *एमाइलोपेक्टिन* होता है। *एमाइलोज* सामग्री में यह विभिन्नता *स्टार्च* अणुओं की आनुवंशिक संरचना के कारणों से होती है। *एमाइलोपेक्टिन* चना के *स्टार्च* का प्रमुख घटक है।

सारिणी 1: चना के सम्पूर्ण दानों की औसत रासायनिक संरचना

संघटक	प्रति 100 ग्राम दानों में मात्रा
प्रोटीन (ग्राम)	21.5
वसा (ग्राम)	4.5
कुल कार्बोहाइड्रेट (ग्राम)	63.0
क्रूड *फाइबर* (ग्राम)	8.0
राख़ (ग्राम)	2.7
खनिज लवण	
कैल्शियम (मिली ग्राम)	200.0
फास्फोरस (मिली ग्राम)	260.0
लौह तत्व (मिली ग्राम)	6.0
मैग्नीशियम (मिली ग्राम)	130.0
पोटैशियम (मिली ग्राम)	860.0
विटामिन	
थियामीन (मिली ग्राम)	0.34
राइबोफ्लेविन (मिली ग्राम)	0.22
नियासिन (मिली ग्राम)	2.25
पाइरोडोकसिन (मिली ग्राम)	0.55
कैरोटिन (मिली ग्राम)	0.12
एस्कोर्बिक एसिड (मिली ग्राम)	4.08

चना के बीजों में अधिकांश कार्बोहाइड्रेट अपचायक तथा गैर–अपचायक शर्करा तथा क्रूड *फाइबर* के रूप में होती है। चना में कुल शर्करा की *रेंज* 4.8 से 9.3% के मध्य होती है। चना की गैर–अपचायक शर्करा में अधिकांश घुलनशील शर्करा होती है। पीले रंग वाले चना में काले रंग वाले चना की अपेक्षाकृत अधिक *मोनोसैक्राइड्स* और *सुक्रोज* होते हैं। चना के सेवन से पेट में गैस बनाने वाले प्रभाव के लिए उत्तरदायी *रैफ़िनोज* परिवार के *ओलिगोसैक्राइड्स* देसी प्रकार की तुलना में काबुली में अधिक दर्ज किए गए हैं। काबुली चना में देसी चना की तुलना में घुलनशील शर्करा थोड़ी अधिक मात्रा में होती है। चना के बीजों में मूंग, मसूर एवं मसूर की तुलना में *रेफिनोज, स्टेकाइरोज़* तथा *वर्बेसकोज* की अधिक मात्रा होने के कारण पेट में गैस अधिक बनती है। चने में *क्रूड फाइबर* की मात्रा 7.1 से 13.5% के बीच होती है, जिसमें *सेल्युलोज* और *हेमिसेल्युलोज़* प्रमुख घटक होते हैं। क्रूड फाइबर की सांद्रता सीधे बीज आवरण या छिलके की मात्रा से संबंधित होती है। काबुली किस्मों की तुलना में देसी क़िस्मों में बीज आवरण की मात्रा सार्थक रूप से अधिक होती है। इसलिए देसी चना में *क्रूड फाइबर* की मात्रा अधिक होती है।

दाल और सम्पूर्ण बीज के कैलोरी मान और पोषक तत्वों के उपयोग के मामले में, काबुली चना देसी चना से बेहतर होता है, क्योंकि काबुली चना में *सेल्युलोज* और *हेमिसेल्युलोज* की मात्रा कम होती है। चना की सफेद किस्मों को इसलिए पसंद किया जाता है क्योंकि इनके बीजों के आवरण की मात्रा व मोटाई कम होती है। यह स्पष्ट करता है कि पतले बीज आवरण अधिक पसंद किए जाते हैं। उर्द, मूंग एवं मसूर के रेशों की तुलना में अधिकतम *हाइपोकोलेस्टेरोलेमिक* प्रभाव चने के बीज आवरण के रेशों में होता है। चना के कार्बोहाइड्रेट की पाचकता अन्य दालों की तुलना में सबसे कम होती है। काबुली चना की स्टार्च पाचकता देसी चना की तुलना में अधिक होती है।

चना के बीजों में प्रोटीन की मात्रा 18.0 से 30.6% के मध्य तथा औसतन 24.0% होती है। दाल के बाहरी हिस्से में अंदर के हिस्से से ज्यादा प्रोटीन होता है। बीज की प्रोटीन सामग्री में भिन्नता जीनप्रारूपों में विभिन्नता, पर्यावरणीय कारकों और उर्वरक उपयोग के कारण होती है। चना की कुछ सामान्य किस्मों के बीजों की प्रोटीन सामग्री में विभिन्नता सारिणी 2 में दर्शाई गई है। प्रोटीन की मात्रा सिंचाई और नाइट्रोजन के प्रयोग से काफी बढ़ जाती है और जब फसल लवणीय मृदाओं में उगाई जाती है तो यह काफी कम हो जाती है। नाइट्रोजन, फास्फोरस और गंधक उर्वरकों के प्रयोग से बीजों में प्रोटीन एवं गंधक युक्त अमीनो अम्लों की मात्रा बढ़ जाती है। चना के बीज में *ट्रिप्टोफैन, मीथियोनीन* और *वेलिन* सीमित मात्रा में पाए जाने वाले अमीनो अम्ल हैं। भ्रूण की अमीनो अम्ल संरचना बीज पत्रों की तुलना में पोषक रूप से बेहतर होती है क्योंकि इसमें *लाइसिन,* गंधक अमीनो अम्ल, *थ्रिओनिन* एवं *वेलिन* की मात्रा अधिक होती है। अन्य अमीनो अम्ल यथा *हिस्टीडीन, आर्जिनिन, सेरीन, प्रोलीन, अलनीन, ल्यूसिन, आइसोल्यूसिन, टाइरोसिन* तथा *फिनाइल एलानिन* बीज पत्रों तथा भ्रूण में लगभग बराबर होते हैं। क्योंकि बीज पत्र बीज का प्रमुख घटक होते हैं और भ्रूण आमतौर पर दालों की व्यावसायिक प्रसंस्करण के दौरान हटा दिया जाता है। अतः बीज पत्रों की

सारिणी 2 : चना के कुछ जीनप्रारूपों में प्रोटीन की मात्रा

जीनप्रारूप	प्रोटीन (%
बीजी 256	22.83
केपीजी 59	22.24
जीपीएफ 2	24.97
आरएसजी 143–1	22.56
आईसीसीवी 10	22.58
अवरोधी	23.60
पूसा 362	24.57
जीएल 769	25.44
के 850	23.07
पंत जी 114	23.14
फुले जी 5	21.90
अन्नीगेरी	22.50
आईसीसी 4958	23.10
राधे	22.96

प्रोटीन में गुणवत्ता के सुधार के लिए आनुवांशिक अथवा पर्यावरणीय हस्तक्षेप आवश्यक है। प्रोटीन, *मीथियोनीन* एवं *ट्रिप्टोफेन* की उच्च सामग्री वाली किस्में पोषण की दृष्टि से उपयोगी हो सकती है। चना की प्रोटीन को *एल्ब्यूमिन* (पानी में घुलनशील), *ग्लोब्युलिन* (नमक में घुलनशील), *प्रोलामिन* (अल्कोहल में घुलनशील), *ग्लूटेलिन* (अम्ल/क्षार में घुलनशील) और अवशिष्ट प्रोटीन में विभाजित किया जा सकता है। *ग्लोब्युलिन* बीज पत्र का प्रमुख भंडारण प्रोटीन (62.7%) है, इसके बाद *ग्लूटेलिन* (17.7%), *एल्बुमिन* (15.9%) और *प्रोलामिन* (2.3%) का स्थान है। बीज आवरण में मुख्य रूप से गैर–प्रोटीन नाइट्रोजन और *ग्लूटेलिन* होता है, जबकि भ्रूण *एल्ब्यूमिन* में अपेक्षाकृत समृद्ध होता है।

चना में कुल *लिपिड* सामग्री 3.1 से 6.9% के बीच होती है। *ट्राइग्लिसराइड्स* तटस्थ *लिपिड* के प्रमुख घटक हैं, जबकि लेसिथिन ध्रुवीय *लिपिड* का प्रमुख घटक है। वसीय अम्लों में, असंतृप्त वसीय अम्ल 79.68% होते हैं, जबकि संतृप्त वसीय अम्ल का अंश 20.32% होता है। *लिनोलिक* और *ओलिक* अम्ल असंतृप्त वसीय अम्ल होते हैं, जबकि *पामिटिक* अम्ल सबसे प्रमुख संतृप्त अम्ल होता है। दालों की *लिपिड* के असंतृप्त वसीय अम्ल निम्न रक्त *सिरम* और यकृत *कोलेस्ट्रॉल* के स्तर से जुड़े होते हैं, इसीलिए मनुष्यों में *हाइपोकोलेस्ट्रोलेमिक* प्रभाव पड़ता है।

चना कैल्शियम, फास्फोरस, मैग्नीशियम, लोहा और पोटेशियम जैसे खनिज लवणों का एक उत्तम स्रोत है। कैल्शियम को छोड़कर, सम्पूर्ण बीज और दाल के खनिज लवण संघटन में मामूली अंतर दिखाई देता है। बीज का अधिकांश कैल्शियम बीज आवरण में ही केंद्रित होता है। अतः शरीर में कैल्शियम की कमी होने पर सम्पूर्ण बीज के उपभोग की सलाह दी जाती है। अन्य दालों की तुलना में चना में लौह तत्व की उपलब्धता सबसे अधिक होती है।

चना में काफी मात्रा में *एस्कॉर्बिक एसिड* पाया जाता है, जो बीजों के अंकुरित होने पर और भी बढ़ जाता है। चना में अन्य विटामिन जैसे *थायमिन, राइबोफ्लेविन, पाइरिडोक्सिन* और *नियासिन* भी मौजूद होते हैं। सम्पूर्ण बीज तथा बीज पत्रों की विटामिन सामग्री में सार्थक अंतर नहीं होता।

अपोषक यौगिक

मसूर, मटर, मूंग, उर्द तथा अरहर की तुलना में चना के बीजों में कम *ट्रिप्सिन* अवरोधक गतिविधि होती है। अरहर एवं मसूर की तुलना में चना में *काइमोट्रिप्सिन* अवरोधक गतिविधि अधिक होती है।

चना में *पैंक्रियाटिक, माइलेज इनहिबिटर* भी मौजूद होता है। चना को 10 मिनट तक गर्म पानी में उबालने पर *एमाइलेज* अवरोधक गतिविधि पूरी तरह से नष्ट हो जाती है। अतः ठीक से पके हुए चना में इसका अधिक महत्व नहीं है।

पॉलीफिनौल्स विटामिन और खनिज लवणों की जैव उपलब्धता को कम कर देते हैं। चना के साबुत दानों में 78 से 272 मिली ग्राम *टैनिन्स* होते हैं, जब कि बीज पत्र के प्रति 100 ग्राम नमूने में 16 से 38 मिली ग्राम *टैनिन्स* होते हैं। अधिकांश *टैनिन्स* बीजावरण अथवा छिलके में मौजूद होते हैं। बीज की *पॉलीफिनौल्स* सामग्री मुख्य रूप से बीजा वरण/छिलके के रंग

पर निर्भर करती है। गाढ़े रंग के छिलके वाली क़िस्मों के *पॉलीफिनौल्स* में हल्के रंग के छिलके वाली क़िस्मों की तुलना में पाचन एंजाइमों के प्रति अधिक निरोधात्मक गतिविधि होती है। इसका महत्व तब अधिक बढ़ जाता है जब चना का सेवन ज्यादातर सम्पूर्ण बीज के रूप में किया जाता है। छिलका उतारने, पकाने और अंकुरण जैसी प्रसंस्करण तकनीकों से चना में *टैनिन्स* की मात्रा अत्यंत कम हो जाती है।

चना में अन्य दालों की तुलना में *ओलिगोसैक्राइड्स* की उच्च मात्रा होने के कारण यह अधिक पेट फूलने के लिए जाना जाता है। चना को पकाने (जब खाना पकाने के दौरान चने को पानी में भिगोया जाता है तथा पकाने के समय उस पानी को फेंक दिया जाता है), किण्वन और अंकुरित चने में इन *ओलिगोसैक्राइड्स* की मात्रा को अत्यंत कम कर देता है। ये *ओलिगोसैक्राइड्स* मुख्य रूप से बीज परिपक्वता के बाद के चरणों में विकासशील बीजों में एकत्रित होते हैं।

प्रसंस्करण और उपयोग

चना के सेवन से पूर्व प्रसंस्करण एक महत्वपूर्ण गतिविधि है। चना में दाने का छिलका हटाकर दाल बनाकर, दाल को आटा की तरह पीसकर (बेसन बनाकर), बेसन का उपयोग विभिन्न प्रकार के पारंपरिक उत्पादों जैसे पकौड़ी, लड्डू, नमकीन आदि तैयार करने के लिए, दाल या साबुत बीजों को मसालों के साथ पकाने, अंकुरण, किण्वन, हरे बीजों को सब्जी के रूप में उपयोग में लाने तथा डिब्बाबंद भोजन के रूप में चना के उपयोग में प्रयुक्त प्रमुख प्रसंस्करण विधियां निम्नवत हैं:

साबुत चना को दाल बनाने की प्रक्रिया में बीजावरण या तो गीला करके अथवा सुखाकर हटाना तथा बीज पत्रों को दो हिस्सों में विभाजित करना सम्मिलित होता है। मोटे दानों की प्रसंस्करण गुणवत्ता छोटे दानों की अपेक्षा बेहतर होती है। छिलके को हटाने से उसका रूप–रंग, बनावट, पकाने की गुणवत्ता, स्वादिष्टता और पाचन शक्ति में सुधार होता है और रेशों की मात्रा भी कम हो जाती है।

चना को पकाने से अच्छी सुगंध और कम अपोषक कारकों के साथ कोमल खाद्य उत्पाद प्राप्त होते हैं। सूखे या पानी में भिगोए हुए चना को पानी में 1–2 घंटे तक खुले बर्तन में उबालकर अथवा *प्रेशर कुकर* में 10–15 मिनट के लिए पकाया जाता है। खाना पकाने के अन्य तरीकों में भूनना, *पर्चिंग* और भिगोने के बाद तलना आदि प्रक्रियाएँ सम्मिलित होती हैं। दानों को भूनने से चना में उपस्थित *लाइसिन* तथा *मीथियोनिन* जैसे आवश्यक अमीनो अम्लों की मात्रा कम हो जाती है। अतः कभी भी 120 डिग्री से अधिक तापमान पर चना को 10 मिनट से अधिक नहीं भूनना चाहिए। भूनने से चना में विटामिन $बी_1$ एवं $बी_2$ की मात्रा कम हो जाती है। भुने हुए चने रक्त में *कोलेस्ट्रॉल* की मात्रा को काफी हद तक कम करने में सहायक होने के कारण स्वास्थ्य की दृष्टि से अत्यंत लाभदायक होते हैं। पकाने की प्रक्रिया का भी पेट में गैस बनने की प्रक्रिया पर प्रभाव पड़ता है। यदि चना अथवा छोलों को पकाने वाले पानी को फेंक दिया जाए, तो पेट में गैस बनने के प्रभाव को 45 से 80 प्रतिशत तक कम किया जा सकता है। पकाने वाले पानी को फेंक देने से 70 से 80% *टैनिन्स* भी निकल जाते हैं।

भारत में चना को पानी में भिगोकर अंकुरित करके सेवन करना एक अत्यंत आम एवं प्राचीन परंपरा है। अंकुरित चनों को नमक और नींबू के साथ खाया जाता है या खाने से पूर्व उबलते पानी में पकाया जाता है अथवा एक खुले बर्तन में तेल के साथ तला जाता है। अंकुरित दानों में *रैफिनोज* शर्करा में कमी आने के कारण खाने के बाद पेट में गैस कम बनती है। चना की प्रोटीन के जैविक मूल्य में सुधार करने के लिए नम गर्म उपचार की तुलना में अंकुरित चनों का सेवन करना बेहतर होता है। अंकुरण के 48 घंटों के पश्चात चना के *पीईआर* मान में कमी आ जाती है। अंकुरण से दानों में अमीनो अम्लों की मात्रा में कोई वृद्धि नहीं होती परंतु कुछ आवश्यक अमीनो अम्लों के अनुपात में परिवर्तन आ जाता है। अंकुरित चना के पिसे आटे (बेसन) को गेहूँ के आटे में 15–20% मिलाने पर *ब्रेड* में हल्का मीठा स्वाद आ जाता है तथा ब्रेड में एक्षिक गुण भी संरक्षित रहते हैं।

चना के अपरिपक्व हरे दानों का निर्जलीकरण (*डिहाइड्रेशन*) करके डिब्बाबंद करना उपयोग के लिए अत्यंत लोकप्रिय हो रहा है। अपरिपक्व हरे दाने प्रोटीन के साथ–साथ कुल शर्करा, खनिज लवणों एवं विटामिनों में समृद्ध होते हैं। अतः इनका सेवन पौष्टिकता की दृष्टि से अत्यंत लाभदायक होता है।

चना को अन्य धान्यों के साथ मिलाकर सेवन करने से प्रोटीन की गुणवत्ता पर सार्थक प्रभाव पड़ता है। मक्का एवं गेहूँ से बने खाद्य पदार्थ में चना को मिलाने से उसकी पौष्टिकता अधिक बढ़ जाती है। धान्यों एवं चना को मिलाकर खाना धान्य एवं चना को अकेले खाने की तुलना में अधिक पौष्टिक होता है। गेहूँ/मक्का तथा चना मिलाकर खाने की तुलना में चावल एवं दाल को मिलाकर खाना अधिक पौष्टिक होने के कारण अधिक लोकप्रिय है। गेहूँ के आटे में 20% चना के आटे को मिलाकर रोटी बनाने से बेहतर *ओर्गनोलेप्टिक* गुणों के कारण रोटियाँ अच्छी बनती हैं।

क्रिस्पी प्रकृति तथा बेहतर सुगंध के कारण *डीप–फ्राइड* उत्पाद बनाने के लिए चना के आटे (बेसन) का प्रयोग अधिक लोकप्रिय है। नमकीन, सेव, चकली, वड़ा तथा पकौड़ा कुछ अत्यंत लोकप्रिय *डीप–फ्राइड* उत्पाद हैं। बूंदी व बेसन के लड्डू, सोहन पपड़ी, मैसूर पाक तथा पुराण पोली चना आधारित कुछ लोकप्रिय मिठाईयाँ हैं। विभिन्न स्थानों पर उपरोक्त मिठाईयों में अलग–अलग मात्रा में विभिन्न अवयव मिलाए जाते हैं जो उनकी पौष्टिकता के स्तर को निर्धारित करते हैं।

चना को भूनने की प्रक्रिया के दौरान थोड़े समय के लिए उच्च तापमान उपचार देने से दाने *क्रंची* हो जाते हैं। यह लघु एवं मध्यम आय वर्ग के लोगों के समूहों के मध्य अत्यंत लोकप्रिय है। भूनने की प्रक्रिया में दानों को 200 से 300 डिग्री सेल्सियस तापमान पर गर्म बालू में भूना जाता है। इन भुने हुए चनों को नमक तथा अन्य मसालों को मिलाकर सेवन किया जाता है।

चना की पकाई हुई दाल भी रसम एवं सांभर के लिए *इंस्टेंट मिक्स* की तरह प्रयोग में लायी जाती है। इन मसाला मिले सूप व ग्रेवी को इडली, दोसा व वड़ा के साथ सेवन किया जाता है।

आरोग्य एवं संजीवनी प्रभाग

कोरोना के बाद अब *ब्लैक फंगस* का संक्रमण

राघवेन्द्र कुमार, आँचल सिंह एवं संगीता श्रीवास्तव
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसन्धान संस्थान, लखनऊ

प्रकृति में *जाइगोमाइसेट्स* कवक की उपलब्धता सर्वव्यापी है। सामान्यतः हवा, पानी, मिट्टी सहित तमाम कार्बनिक वस्तुओं पर इसके संक्रमण को आसानी से देखा जाता हैं। कोरोना वायरस की दूसरी लहर के दौरान काला कवक (*ब्लैक फंगस/ म्यूकरमाइकोसिस*) के बढ़ते संक्रमण ने जन मानस में विशेष चिंता बढ़ा दी है। देश के कई प्रान्तों में विशेष कर महाराष्ट्र, पंजाब, गुजरात और दक्षिण भारत के कई जगहों पर कोविड से स्वस्थ हो जाने के बाद सैकड़ों की तादाद में मौत की वजह यह नाशी कवक बनता जा रहा है। ऐसे में केंद्र सरकार ने इसे महामारी अधिनियम के अंतर्गत महामारी घोषित करने का संकल्प लिया है।

कोरोना संक्रमण के शुरुआती विषाणु प्रतिकृति अवस्था में बुखार, खांसी, सर्दी, सांस फूलना इत्यादि फेफड़े से जुड़ी स्वास्थ्य संकट देखने को मिलता है, जो 7 से 10 दिनों बाद उपचार नहीं मिलने के कारणवश दूसरी अपरिपक्व अतिसूजन (*हाइपर इन्फ्लेमेशन*) अवस्था में परिणत होने लगता है। विषाणुजनित अतिसूजन की अवस्था में रोगी इम्यूनो मध्यस्थता युक्त निमोनिया, अंतरालीय छिद्रिल फेफड़े के *फाइब्रोसिस, ल्यूकोसिस्टोसिस* जैसे गंभीर संकट में जकड़ जाता है और उपचार की प्रक्रिया में *म्यूकरमाइकोसिस* के *माइसिलियम* तीव्रतापूर्वक पनपने लगते हैं। *ब्लैक फंगस* एक ऐसा खतरनाक संक्रमण है, जो अब तक लाखों में किसी एक रोगी को होता था, किन्तु पिछले कुछ दिनों के दौरान कोरोना वायरस से संक्रमित मरीजों में यह संक्रमण बड़ी तेजी से फैल रहा है। मनुष्य में कमजोर *इम्यूनिटी* की वजह से *म्यूकरमाइकोसिस* चार प्रमुख प्रकार से संक्रमित करता हैः दिमागी (*रायनोसेरिब्रल*), फुफ्फुसीय (*पल्मोनरी*), जठरांत्रिय (*गेस्टरोइंटेस्टाइनल*), और त्वचीय (*क्युटिनिअस*)।

यह अत्यंत जानलेवा फफूंदजनित संक्रमण है और इसकी गिरफ्त में करीब आधे से अधिक जिन्दगी अत्यन्त अल्प अवधि में काल कलवित हो जाती है। नाक के रास्ते *साइनस* से होते यह कवक *साइनस*, आँख मस्तिष्क और फेफड़ों को बहुत कम समय में बुरी तरह से प्रभावित करता है। कुछ ऐसे मामले भी सामने आए हैं, जिनमें मरीजों को बचाने के लिए उनकी आँखें तक निकालनी पड़ी हैं। *ब्लैक फंगस* के सबसे गंभीर मामले मधुमेह के ऐसे मरीज में देखे जाते हैं, जिन्हें स्टेरॉयड दिए जा रहे हैं और वे कम शारीरिक गतिविधि करते है, गले के बलगम निकालने में भांप का अत्यधिक सेवन करते हों, और *जिंक सप्लीमेंट* का अधिक सेवन करते हों। ऐसे में इन्हें सबसे अधिक निगरानी बरतने की आवश्यकता है और नियमित तौर पर अपने रक्त शर्करा की जांच करते रहना चाहिए।

एक *रिपोर्ट* के अनुसार मधुमेह के अतिरिक्त स्वच्छता और दूषित मेडिकल उपकरणों के चलते भी *ब्लैक फंगस* के मामले बढ़ रहे हैं। कोरोना के मरीज इतने अधिक संख्या में आने से अस्पतालों में साफ–सफाई पर बहुत अधिक ध्यान नहीं दिया जा रहा है। इसके फलस्वरूप मेडिकल उपकरणों तथा उनके रख–रखाव पर फफूंदी जमा होने की आशंका है।

कोविड मरीज को हुए *म्यूकर माइकोसिस* में शुरुआती प्रारम्भिक लक्षण दर्द, नाक में भारीपन, गालों पर सूजन, मुंह के अंदर कवक का लाल धब्बा और पलकों में सूजन इत्यादि है। इसके लिए गहन चिकित्सा इलाज की जरूरत पड़ती है। आम तौर पर अधिक मात्रा में *कोर्टीकोस्टेरॉयड* तथा उच्च स्तर के *एंटीबायोटिक* इंजेक्शन लेने वाले कोरोना संक्रमित मरीज जो ऑक्सीजन *मॉस्क* या *वेंटिलेटर* के जरिए ऑक्सीजन *सपोर्ट* पर हैं अथवा कैंसर, गुर्दे किसी अन्य अंग का प्रत्यारोपण के इलाज करा रहे हो और जिनकी रोग प्रतिरोधक क्षमता बेहद कम है, में *ब्लैक फंगस* प्रमुखता से मनुष्य के शारीरिक अंगों को तेजी से प्रभावित करता है। हालांकि, मुँह के अंदर के भाग अथवा मस्तिष्क को *ब्लैक फंगस* से सबसे अधिक प्रभावित होने की आशंका रहती है लेकिन कई मामलों में यह शरीर के अन्य हिस्सों को भी प्रभावित कर सकता है जैसे कि आहार नाल, त्वचा और शरीर के अन्य शारीरिक अंग प्रणाली। *ब्लैक फंगस* को लेकर कई तरह के प्रपंच और झूठे दावे जन मानस में फैलाए जा रहे हैं कि ये संक्रमण कच्चा खाना खाने से फैलता है लेकिन इसकी पुष्टि करने के लिए अभी तक कोई प्रामाणिक आंकड़ा उपलब्ध नहीं है। दूसरी तरफ ऑक्सीजन के प्रयोग से भी इसका कोई लेना–देना नहीं है। ये *होम आइसोलेशन* में रहने वाले लोगों के बीच भी हो रहा है।

एक कोविड के मरीज में *ब्लैक फंगस* के प्रमुख लक्षण जैसे नाक बंद होना या नाक से खून या काला–सा तरल स्राव का निकलना, गाल की हड्डियों में दर्द होना, एक तरफ चेहरे में दर्द, सुन्न या सूजन होना, नाक की ऊपरी सतह का काला होना, मसूडों के बीच दाँतों का ढीले होना, आंखों में लालिमा सहित असहनीय तेज दर्द, धुंधला दिखना या दोहरा दिखना, आंखों के आस–पास सूजन होना, *थ्रांबोसिस, नेक्रोटिक* घाव, सीने में दर्द या सांस लेने में दिक्कत होना इत्यादि देखे जाते हैं। मधुमेह मरीजों में *ब्लैक फंगस* का शुरुआती इलाज में ही पता लगना

बहुत जरूरी है। मरीज को ज्यादा तेज असरकारी दवाएं देने से उनके गुर्दे या अन्य अंगों पर बुरा असर पड़ने का भी खतरा रहता है। जिन कोरोना संक्रमितों में *ब्लैक फंगस* के लक्षण पाये जाते हैं, उन्हें इलाज के समय और संक्रमण मुक्ति के बाद *स्टेरॉयड* की मात्रा बेहद सावधानीपूर्वक जाँच करके तय करनी चाहिए। कई बार देखा गया है कि कोरोना से ठीक हो जाने के उपरांत दिल का दौरा पड़ने में अनिर्धारित दवा की मात्रा के साथ *म्यूकरमाइकोसिस* के संक्रमण की अहम भूमिका होती है।

एक सामान्य चिकित्सा दिशानिर्देश के अनुसार *ब्लैक फंगस* का इलाज तीन चरणों में किया जाता है। पहले चरण में सिर्फ संक्रमण की वजह का पता लगाकर उसे दूर करना, रक्तशर्करा स्तर व *एसिडोसिस* जांच करते रहना और बाद में शल्य चिकित्सा के जरिए आक्रामक तरीके से मृत ऊतक हटाए जाते हैं, ताकि कवक के अवांछित फैलाव को तत्परतापूर्वक रोका जा सके। साथ ही उचित जीवनरक्षक दवाइयां जैसे *एंटीफंगल इंजेक्शन एंफोटेरेसिन–बी, पॉसकोनाजोल, इसावुकोजोल* इत्यादि *ब्लैक फंगस* सहित इसके अन्य कवक *वेरिएन्ट* जैसे सफेद कवक (*व्हाइट फंगस*) अथवा पीला कवक (*येलो फंगस*) *म्यूकरमाइकोसिस* के संक्रमण में उपयोगी होते हैं।

इन दिनों *सोशल मीडिया* तथा अन्य माध्यमों से *म्यूकरमाइकोसिस* से निपटने के घरेलू उपाय सुझाए जा रहे हैं। दावा किया जा रहा है कि फिटकरी, हल्दी, सेंधा नमक व सरसों के तेल से इसका कारगर इलाज किया जा सकता है। जब सरकारी संस्था *प्रेस इनफार्मेशन ब्यूरो* ने जांच–पड़ताल की तो इसे पूरी तरह से झूठे दावे फैलाए जाने की सहमति प्रदान की। इस तरह के नुस्खे से *ब्लैक फंगस* के उपचार का कोई वैज्ञानिक प्रमाण नहीं है। ऐसी किसी भी गंभीर स्वास्थ्य समस्या के उपचार के लिए केवल घरेलू नुस्खों पर विश्वास नहीं करना चाहिए। रोगी को बासी और उच्च कार्बोहाइड्रेट युक्त भोजन से परहेज करना चाहिए। नवीनतम अनुसंधान के अनुसार कोविड–19 के उपचार में टीकाकरण एकमात्र कारगर उपाय है, तो *ब्लैक फंगस* के संक्रमण से निजात पाने के लिए स्वच्छता ही सबसे कारगर बचाव है।

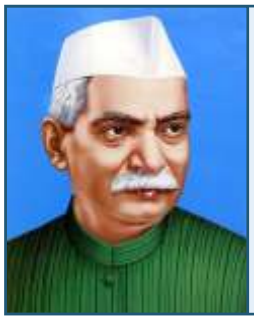

हिंदी चिरकाल से ऐसी भाषा रही है जिसने मात्र विदेशी होने के कारण किसी शब्द का वहिष्कार नहीं किया।

-डॉ. राजेन्द्र प्रसाद

आरोग्य एवं संजीवनी प्रभाग

स्तनपान अमृत समान

काम्या सिंह
1/3/117, सहादतगंज, अयोध्या

आज हमारे देश की महिलाओं में स्तनपान को लेकर बहुत सी गलत धारणाएं व्याप्त हो गयी हैं जिस कारण माँ व शिशु दोनों ही इसके होने वाले लाभ से वंचित हो रहे हैं। उनमें स्तनपान को लेकर बहुत सी जानकारियों का अभाव रहता है। महिलाएं ये नहीं जानती कि स्तनपान शिशु के साथ–साथ माँ के लिए भी कितना आवश्यक है। बच्चे के जन्म के बाद से 6 महीने तक शिशु के लिए माँ का दूध सर्वोत्तम आहार माना गया है क्योंकि माँ के दूध में बहुत से लाभदायक तत्व पाये जाते हैं। जिससे शिशु में शारीरिक, मानसिक व भावनात्मक विकास होता है। प्रसव के बाद माँ के स्तनों से निकलने वाला पहला गाढ़ा पीला दूध जिसे हम *कोलेस्ट्रम* कहते हैं। नवजात शिशु के लिए यही दूध अमृत माना गया है। शिशु के लिए यह पहला टीकाकरण कहलाता है क्योंकि माँ का दूध रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है शिशु को और बहुत से संक्रमणों से लड़ने की शक्ति प्रदान करता है। बच्चों में डायरिया, निमोनिया जैसी तमाम बीमारियों से बचाता है। माँ स्तनपान के माध्यम से शिशु को प्रर्याप्त पोषण प्रदान करती है, क्योंकि माँ के दूध में सभी पोषक तत्व जो शिशु के विकास के लिए चाहिए, उपस्थित रहते हैं। जैसे एण्टी–बॉडी, विटामिन ए, प्रोटीन, श्वेत रक्त कणिकाएं, खनिज लवण तथा अमीनो अम्ल आदि। स्तनपान से जीवन के बाद के चरणों में रक्त कैंसर, मधुमेह और उच्च रक्त चाप का खतरा कम हो जाता है। स्तनपान को बढ़ावा देकर शिशु मृत्युदर में कमी लाई जा सकती है।

केरल का पहला *ह्यूमन मिल्क बैंक* स्वास्थ्य मंत्री श्री के.के. शैलजानेड ने 5 फरवरी को खोला। रोटरी क्लब ऑफ कोचीन ग्लोबल के सहयोग से स्थापित ये दूध बैंक उन नवजात शिशुओं के लिए है जिन्हें माँ के द्वारा (बीमार, मृत, कम उत्पादन) से स्तनपान नहीं करवाया जा रहा है वहाँ 1 वर्ष में लगभग 3,600 बच्चे सामान्य अस्पताल में पैदा होते हैं। इनमें से 600 से 1,000 बीमार शिशुओं को *निओनेटल इंटेसिव केयर यूनिट* में भर्ती किया जाता है। क्योकि कम समय से पहले जन्म होने, जिन से शिशुओं की माँ पर्याप्त दूध देने से असमर्थ हैं। उसके कई कारण हैं जिनसे शिशु को दूध नहीं मिल पाता है। इसकी मदद से माँ का दूध सुरक्षित भण्डारित किया जाता है, वह दूध शिशुओं को पिलाया जाता है। यह *मिल्क बैंक* ब्राजील, यूरोप, पुर्तगाल, अमेरिका, भारत में शुरू किया गया है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार माँ का दूध शिशुओं के लिए आदर्श भोजन है। यह सुरक्षित, स्वच्छ और उनके लिए पहले टीके के रूप में कार्य करता है।

भारत के स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय के अनुसार स्तनपान शिशु की प्रतिरक्षा प्रणाली को बढ़ाने में मदद करता है। शिशु की मृत्यु दर को कम करता है, श्वसन दर के संक्रमण, *एलर्जी* रोग, मधुमेह और बचपन के संक्रमणों के विकास के जोखिम को कम करता है।

स्तनपान का महत्व

1. शिशु का माँ से भावात्मक जुड़ाव होता है।
2. शिशु में रोग प्रतिरोधक क्षमता वृद्धि करता है।
3. प्रकृति का उपहार है माँ के लिए जो हर समय उपलब्ध है।
4. माँ के लिए स्तनपान, बढ़ते वजन को कम करने में मदद करता है।
5. शिशुओं द्वारा किया गया स्तनपान शिशु के स्वस्थ हड्डियों का विकास करके उनके शरीर को शक्ति प्रदान करता है।
6. गर्भाशय कैंसर, स्तन कैंसर तथा अण्डाशय कैंसर के खतरे कम होते हैं।
7. सेहत के क्षेत्र में कार्यरत विश्व स्वास्थ्य संगठन, यूनिसेफ ने भी *कोलेस्ट्रम* यानि खीस को बहुत सारी बीमारियों से बचाने में लाभदायक बताया है।
8. शिशु के लिए माँ का दूध सुपाच्य होता है जो आसानी से पचा लेता है।
9. माँ की त्वचा का सम्पर्क शिशु के तापमान को स्थिर बनाए रखता है।
10. स्तनपान शिशु के जन्म के बाद होने वाले खून की क्षति को कम करता है। प्रसव के दौरान प्रसूताओं की मौत अधिक रक्तस्त्राव से होती है जिसे चिकित्सकीय भाषा में *पोस्टमार्टम–हैम्रेज* कहते हैं। अगर प्रसव के तुरन्त बाद माँ स्तनपान कराती है तो *ऑक्सीटोसिन हार्मोन रिलीज* होता है, जिससे प्रसूता का गर्भाशय सिकुड़ जाता है व रक्तस्त्राव की आशंका बेहद कम हो जाती है।

माँ का दूध शिशु के लिए अमृत समान होता है। प्रति वर्ष विश्व में 1 से 7 अगस्त तक विश्व स्तनपान सप्ताह मनाया जाता है। जिसका मुख्य उद्देश्य महिलाओं में स्तनपान को बढ़ावा देना, और शिशुओं को स्वस्थ बनाना है। इस वर्ष विश्व स्तनपान सप्ताह की *थीम* 2021 स्तनपान की रक्षा करें : एक साझा जिम्मेदारी है। इससे बच्चे की प्रतिरक्षा प्रणाली को बढ़ावा मिलता है। यह शिशु मृत्युदर को कम करने में मदद करता है।

विश्व स्तनपान सप्ताह एक वार्षिक उत्सव है जो हर साल 120 से अधिक देशों में आयोजित होता है।

विश्व स्वास्थ संगठन के अनुसार, बच्चे के स्वास्थ्य और अस्तित्व को सुनिश्चित करने के लिए स्तनपान सबसे प्रभावी तरीका है। कोरोना की संभावित तीसरी लहर का सबसे अधिक असर छोटे बच्चों पर पड़ने की आशंका है। जो माताएं बच्चों को भरपूर स्तनपान कराती हैं उन्हें बच्चों की चिन्ता करने की जरूरत नहीं। बस महिलाओं को स्तनपान के प्रति जागरूकता लाने की आवश्यकता है। स्तनपान की सही जानकारी न होने के कारण बच्चों में कुपोषण का रोग एवं संक्रमण से दस्त हो जाते हैं इसलिए उनको समय–समय पर स्तनपान करवाना चाहिए।

आरोग्य एवं संजीवनी प्रभाग

पोषण व स्वादः अलसी वाला गुड़

मिथिलेश तिवारी, प्रियंका सिंह, दिलीप कुमार, राजीव रंजन राय एवं ए.के सिंह
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

भारत में गन्ने के उत्पादन का लगभग 20–25 प्रतिशत गुड़ एवं खाण्डसारी उद्योग में प्रयोग होता है। गुड़ में पौष्टिकता के साथ–साथ औषधीय गुण भी होते हैं और यह मिठास के अतिरिक्त एक खाद्य पदार्थ भी है। ऐसे गुड़ में मौजूद सुक्रोज के अतिरिक्त अन्य पोषक तत्वों जैसे कि कैल्शियम, लोहा, फास्फोरस, विटामिन आदि के कारण होता है। गुड़ की अनेक विशेषताएं भी हैं जिनमें से ठंडक/गर्मी देने वाला, मूत्रवर्धक, गले को आराम देने वाला एवं एक टॉनिक की भांति काम करने वाले प्रमुख गुण है। आयुर्वेद के अनुसार गुड़ गन्ने के उत्पादों में सर्वोत्तम है।

हमारे देश में बहुत समय से ही गन्ने के रस से गुड़ बनाया जाता रहा है। वैज्ञानिक विधि से गुड़ बनाने हेतु ऐसी प्रजाति का गन्ना चुनें जो कम रेशेदार, मुलायम एवं सीधा हो। जिसके रस में सुक्रोज की मात्रा अधिक एवं प्रहासन शर्करा की मात्रा कम हो। रस हल्के रंग का एवं आसानी से साफ होने वाला हो और उसमें प्रोटीन रहित नत्रजन एवं राख की मात्रा कम तथा फॉस्फेट की मात्रा अधिक हो। रोगग्रस्त, गिरे एवं पानी में भरे खेत के गन्ने का गुड़ नही बनाना चाहिए। भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ में क्यूब के आकार में गुड़ बनाया जाता है। जिसे लोगों द्वारा बहुत पसंद किया जाता है। वैज्ञानिक विधि से बना रसायन मुक्त गुड़, चीनी तथा खाण्डसारी की तुलना में स्वास्थ्य के लिए अधिक लाभदायक होता है।

पोषण की दृष्टि से गुड़ का मूल्यवर्द्धन

पोषण की दृष्टि से किया गया मूल्यवर्द्धन गुड़ को और अधिक पोषक बनाता है जो कि ग्रामीण क्षेत्रों के स्कूल के बच्चों, गर्भवती महिलाओं को दिन में दिए जाने वाले भोजन का हिस्सा बन सकता है। गुड़ उत्पादन एक लाभकारी उद्योग के रूप में उभरा है। गुड़ के अनेक मूल्यवर्द्धक उत्पाद बाजार में देखे जा सकते हैं। गुड़ का अपने आप में भी मूल्यवर्द्धन किया जा सकता है। भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ में गुड़ के मूल्यवर्द्धन पर काफी कार्य हुआ है। गुड़ का क्यूब जैसे सुन्दर आकार में ढाला जाना भी एक प्रकार का मूल्यवर्द्धन ही है। इसके अतिरिक्त हल्दी, अजवाइन, सोंठ, काली मिर्च, कलौजी, हींग, गुलाब की पत्ती के प्रयोग द्वारा भी गुड़ का मूल्यवर्द्धन किया गया है। इन सामग्री को मिलाने से गुड़ का स्वाद भी अच्छा हो जाता है साथ ही साथ पोषक तत्वों की पूर्ति भी होती है। अजवाइन, हींग युक्त गुड़ से पेट की गैस से राहत मिलती है। काली मिर्च गले के लिए फायदेमंद है। आँवला विटामिन सी की पूर्ति करता है। हल्दी रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाती है।

अलसी वाला गुड़

गुड़ के मूल्यवर्द्धन के क्रम में गुड़ में अलसी को मिलाने का प्रयास किया गया जिससे कि इसके पोषक तत्व भी बने रहें तथा गुड़ का स्वाद भी बेहतर हो जाए। अलसी में ओमेगा–3 फैटी एसिड होते हैं जो कि कई प्रकार की कैंसर की कोशिकाओं को बढ़ाने से रोकते हैं। अलसी जोड़ो के दर्द और अकड़न को कम करने में मद्द करता है। इनके बीजों में अघुलनशील रेशे भी होते हैं। खाने के बाद पाचनमार्ग में ही रहते हैं। इस तरह यह पानी को सोख लेता है और कब्ज से राहत दिलाता है। अलसी के बीज शरीर में सभी तरह के कॉलेस्टॉल को कम करते हैं। अलसी के बीज में पाया जाने वाला फाइबर जो कि घुलनशील होता है, वह पाचन तंत्र के अंदर कोलेस्टॉल एवं वसा को फंसा लेता है और इसे शरीर के द्वारा अवशोषित होने से रोकता है। इसमें उच्च मात्रा में एंटीऑक्सीडेंट मौजूद होता है। अलसी के बीज में लिग्निन बहुत अधिक होता है। यह स्वास्थ्यप्रद और एंटीबैक्टीरियल है इसलिए आम फ्लू और जुकाम से बचाने में यह मदद् करता है।

इसके लिए सर्वप्रथम गुड़ में अलसी को भूनकर साबुत डाला गया। अलसी के बीज को लकड़ी के चाक जिसमें कि गाढ़ा किया हुआ गन्ने का रस फेंट कर ठंडा किया जाता है, में रस के ठण्डे एवं गुड़ के सांचे में ढालने लायक होने पर मिलाया

अलसी वाला गुड़
(अ) 850 मि.मी. की छन्नी (ब) *क्रश* अलसी (स) तैयार गुड़

गया। इस प्रकार के गुड़ में अलसी के बीज की खुशबू और प्राकृतिक रंग भी दिखाई देता है परंतु साबुत अलसी का बीज पचने में कठिनाई होती है तथा गुड़ जल्दी खराब भी होने की संभावना रहती है। इसी प्रकार गुड़ में अलसी के बीजों को पीसकर छन्नी से छानकर मिलाया गया। परन्तु उसमें भी नमी अधिक होने के कारण गुड़ जल्दी खराब होने की आशंका बनी रही।

जल्दी खराब होने की समस्याओं को देखते हुए अलसी के बीजों को हल्का भूनकर कूट करके डाला गया। कुटी हुई अवस्था में 50 ग्रा., 100 ग्रा., 150 ग्रा., 200 ग्रा., प्रति क्रि.ग्रा. गुड़ की दर से मिलाया गया। ऐसे बने गुड़ का 20 व्याक्तियों के पैनल द्वारा संवेदी मूल्यांकन कराया गया। मूल्यांकन में 200 ग्राम क्रश अलसी प्रति. कि.ग्रा. गुड़ मिलाकर बनने वाला गुड़ सर्वोत्तम पाया गया।

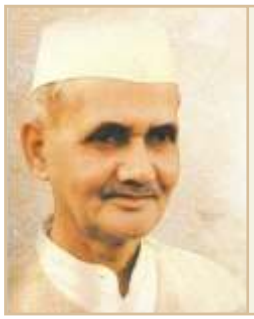

हिंदी पढ़ना और पढ़ाना हमारा कर्तव्य है।
उसे हम सबको अपनाना है।

लालबहादुर शास्त्री

आरोग्य एवं संजीवनी प्रभाग

गुणों की खान अलसी

दीपाली चौहान
कृषि विज्ञान केंद्र, दरियापुर, रायबरेली

वर्तमान में पूरा विश्व कोरोना महामारी के प्रकोप से आतंकित और भयभीत है। भारत में भी कोरोना से संक्रमित मरीजों की संख्या दिनों दिन बढ़ती जा रही है। कोरोना संक्रमण को बढ़ने से रोकने के लिए भारत में *लॉकडाउन* भी लगाना पड़ा था। कोरोना पर हो रहे अध्ययन से पता चला है कि इस महामारी के संक्रमण से बचने का एकमात्र उपाय अपने शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाना है। शरीर को बाहरी संक्रमण से बचाने के लिए शरीर के भीतर एक रक्षा तंत्र प्रणाली होती है जिसे *इम्यून सिस्टम* या रोग प्रतिरोधक शक्ति कहते हैं। रोग प्रतिरोधक शक्ति को बढ़ाने के लिए हमें अपने आहार में ऐसे खाद्य पदार्थों को सम्मिलित करना चाहिए जिससे हमें सभी प्रकार के आवश्यक पोषक तत्व प्राप्त हो सके। अलसी इन्हीं में से एक है। अलसी भले ही देखने में छोटी हो परंतु इसके फायदे अनेक होते हैं। अलसी के औषधीय गुण बीमारियों पर रामबाण की तरह काम करते हैं। अलसी को हिंदी में तीसी के नाम से भी जाना जाता है, जबकि अंग्रेज़ी में अलसी को *'फ्लेक्स सीड* कहा जाता है।

अलसी के औषधीय गुण

अलसी गुणों का खजाना है। अलसी हमारे शरीर को कई बीमारियों से बचाकर स्वस्थ रखने में मदद करती है। शाकाहारी लोगों के लिए अलसी एक वरदान है, क्योंकि मछली में पाया जाने वाला *ओमेगा–3 फैटी एसिड*, अलसी में मौजूद होता है साथ ही इसमें *एंटीऑक्सीडेंट, फाइबर, अल्फा लिनोलेनिक एसिड* भी मौजूद होता है, जो हमारे शरीर में होने वाली तरह–तरह की बीमारियों जैसे मधुमेह, दिल की बीमारी, पेट की परेशानी और अन्य कई स्वास्थ्य समस्या को दूर करता है।

अलसी से होने वाले लाभ

- अलसी में उपस्थित घुलनशील *फाइबर* प्राकृतिक रूप से हमारे शरीर में *कोलेस्ट्रॉल* को नियंत्रित करने का काम करते हैं। इससे हृदय की धमनियों में जमा *कोलेस्ट्रोल* घटने लगता है, और रक्त प्रवाह बेहतर होता है। जिससे *हार्ट–अटैक* की संभावना नहीं के बराबर होती है।
- अलसी में *ओमेगा–3* भरपूर मात्रा में पाया जाता है, जो रक्त प्रवाह को बेहतर कर खून के जमने या थक्का बनने से रोकता है, जो *हार्ट अटैक* का कारण बनता है, यह रक्त में मौजूद *कोलेस्ट्रॉल* को कम करने में भी सहायक है।
- यह शरीर की अतिरिक्त वसा को ही कम करती है जिससे वजन कम होने में सहायता मिलती है।
- अलसी में मौजूद *एंटीऑक्सीडेंट्स* और *फाइटोकेमिकल्स* बढ़ती उम्र के लक्षणों को कम करते हैं, जिससे त्वचा पर झुर्रियां नहीं होती और कसाव बना रहता है। इससे त्वचा स्वस्थ व चमकदार बनती है।
- अलसी में *अल्फा लिनोलिक एसिड* पाया जाता है, जो *गठिया,* अस्थमा, मधुमेह और कैंसर से लड़ने में मदद करता है।
- सीमित मात्रा में अलसी का सेवन खून में शर्करा के स्तर को नियंत्रित करता है, इससे शरीर के आंतरिक भाग स्वस्थ रहते हैं और बेहतर कार्य करते हैं।
- अलसी में उपस्थित *लाइगन* नामक तत्व आंतों में सक्रिय होकर ऐसे तत्वों का निर्माण करता है, जो महिलाओं के हारमोंस के संतुलन को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
- अलसी के तेल की मालिश से शरीर के अंग स्वस्थ होते हैं, और बेहतर तरीके से कार्य करते हैं। इस तेल की मसाज से चेहरे की त्वचा पर कांति आ जाती है।
- शाकाहारी लोगों के लिए अलसी *ओमेगा* 3 का बेहतर विकल्प है, क्योंकि अब तक मछली को ही *ओमेगा–*3 का अच्छा स्रोत माना जाता था, जिसके सेवन शाकाहारी लोग नहीं कर पाते थे।

अलसी का सेवन करने का तरीका : प्रतिदिन सुबह शाम एक चम्मच अलसी का सेवन हमें पूरी तरीके से स्वस्थ रखने में सहायक होता है। इसे पीसकर पानी के साथ भी लिया जा सकता है। अलसी को नियमित दिनचर्या में शामिल कर हम कई तरह की बीमारियों से अपनी रक्षा कर सकते हैं। साथ ही हमें चिकित्सक के पास जाने की भी आवश्यकता नहीं पड़ेगी।

आमोद–प्रमोद प्रभाग

सच्चा मित्र

ब्रह्म प्रकाश

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

रक्त का कोई संबंध नहीं होने पर भी, प्रिय लगने वाला होता है सच्चा मित्र।
दुनिया भर की बातें करने पर भी, जिसे किंचित थकान न लगे वही होता है मित्र।।
जिसके साथ हर छोटी से छोटी बात पर भी हाँ कर सकते हैं वही होता है मित्र।
जिनके कंधे पर सिर रखकर आप निसंकोच रो भी सकते है, वही होता है मित्र।
जिसके साथ ठंडी चाय भी एक दम गर्म महसूस हो, वही होता है मित्र।।
जिसके साथ खिचड़ी खाकर भी 5 स्टार होटल के भोजन का मजा आए वही होता है मित्र।
आधी रात को जिसे जगाकर कर सकें दिल की बात, वही कहला सकता है मित्र।
साथ गुजारे पलों की स्मृति मात्र से, चेहरे पर मुस्कान लाने वाला होता है मित्र।।
बगैर भूमिका बनाए "टू द पॉइंट" बात कर सकने वाला ही कहलाता है मित्र।
जिससे बरसों बाद मिलने पर भी आपका दिल झूम उठे, वही होता है सच्चा मित्र।
वर्षों दूर रहने पर भी जिसके दिल के तार सदा आपसे जुड़े रहें, वही होता है सच्चा मित्र।
आपकी बेजान ज़िंदगी में अपने प्यार से नई जान ड़ाल दे, उसी को कहते हैं सच्चा मित्र।।
ऐसा अमूल्य संबंध जो हमारे भीतर अच्छाई पैदा करे, वही होता है सच्चा मित्र।।
आपकी हर आवश्यकता व परेशानी में आपके साथ खड़ा हो, वही होता है सच्चा मित्र।।
लिंग, धर्म, नस्ल, जाति, रंग तथा अक्षमता में भी जो सदा तटस्थ रहे, वही होता है सच्चा मित्र।
बगैर शर्तों के प्यार करने वाला व कुछ भी आशा न रखने वाला होता है मित्र।
ईमानदारी, सामंजस्यता तथा आपसी आदर को अनमोल समझने वाला संबंध होता है मित्र।
माता–पिता का बच्चों से, पति–पत्नी व भाई बहन के रिश्तों का आधार है मित्र।
गुरु–शिष्य, ईश्वर–भक्त, आश्रित–आश्रयदाता, प्रकृति–मनुष्य के सम्बन्धों का आधार भी मित्र।
एक आदमी भूखा हो तो दूसरे से भी एक कौर न खाया जाए, वही कहलाता मित्र।
एक को चोट लगे परंतु अपार वेदना दूसरे को भी हो, ऐसा ही व्यक्ति होता है मित्र।।
बगैर भूले हुए भी प्रत्येक गलती को क्षमा कर देने वाला व्यक्ति ही होता है सच्चा मित्र।
आपकी बात बगैर सुने ही, सटीक समझने वाला व्यक्ति ही होता है सच्चा मित्र।
बगैर देखे ही दूसरे के बारे में अनुभव करने वाला ही होता है सच्चा मित्र।
किसी भी परिस्थिति में साथ न छोडने वाला व हाथ पकड़े रहने वाला ही होता है सच्चा मित्र।
कठिनाई के होने पर भी शस्त्र बन कर आपकी सहायता करने वाला ही होता है सच्चा मित्र।।
षड्यंत्र में फंस जाने पर बुद्धि बन कर बाहर निकाले, वो ही होता है सच्चा मित्र।।
मार्ग भटक जाने पर शास्त्र बन कर राह दिखाने वाला ही होता है मित्र।
अकेले होने पर भी ममता बनकर आपका जो साथ निभाए, वो ही होता है सच्चा मित्र।।
आपकी तुलना दूसरे से न कर आपको सर्वश्रेष्ठ मानने वाला ही होता है मित्र।
आर्थिक स्थिति खराब होने पर भी जिसकी मानसिक स्थिति अच्छी बनी रहे, वही होता है मित्र।।
आपके लिए की गई हर भलाई बुरे सपने की तरह भूल जाने वाला होता है आपका सच्चा मित्र
आपको देखकर जिसकी आँखों में खुशी व लबों पर हंसी आ जाए, वही होता है मित्र।।

जिसका प्यार सकल तथा भाव अटल हो, जिससे मन को मन की हो आशा।
बिना एक शब्द बोले ही जो व्यथा जान ले, है सच्चे मित्र की यही परिभाषा।।
सिर्फ दिल ही जिसकी भाषा को समझे, वह स्नेह है अनकहे लाखों शब्दों का संसार।
चेहरा देखकर दिल की पूरी किताब जो पढ़ ले, वही व्यक्ति ही कहला सकता है सच्चा यार।।
आपके बिना कहे गए कुछ बोल राहत पहुंचा सकते हैं यदि है मित्र परेशान।
आप अपने मित्र से कुछ जादुई शब्द बोल दें, जो हैं "परेशान मत हो, मैं हूँ न"।।
अच्छी भूमिका, अच्छे लक्ष्य, अच्छे विचार वाले मित्र रखे जाते हैं सदा याद।
मन में भी शब्दों में भी, जीवन में भी और जीवन के भी बाद।।
बड़ी–बड़ी बातें बहुत देर तक करने मात्र से, नहीं होता किसी संबंध का ज्ञान।
मुख कुछ न बोले पर दिल समझे, ऐसे छोटे संदेश को ही सदा अच्छा जान।।
शब्द चाहे कितने कठिन हों पर, मिल ही जाएगा सभी शब्दों का अर्थ।
जीवन जीने से जीने का अर्थ मिले, संबंध निभाकर ही मिलता संबंध का अर्थ।।
गीली मिट्टी जिस प्रकार से पेड़ों की जड़ों को मजबूती से पकड़कर रखती।
ठीक उसी प्रकार मीठी वाणी भी मनुष्य के रिश्तो को मजबूत रखती।
ईश्वर तथा प्रकृति का कार्य तो दो व्यक्तियों को आपस में मात्र मिलाना है।
हमारा व्यवहार ही करता निर्धारित किसी रिश्ते का बनना व मिट जाना है।।
गुरु के बिना ज्ञान नहीं मिलता, ज्ञान के बिना नहीं जीवन का कोई अर्थ।
मित्र किसी का वो हो नहीं सकता वो व्यक्ति, जो देखता हर कार्य में स्वार्थ।।
जीवन में कुछ मानते, जानते, चाहते व चिंता करते हैं, कुछ आदर्श मानकर आपका लगाते हैं चित्र।।
परंतु जो आपका सदा शुभ सोचते हुए ऊपर लिखा सब कुछ करे, वही होता है मित्र।।
आपकी मुस्कान में छिपी खुशी देख ले, गुस्से में देख पाए जो आपका प्यार।
आपकी गंभीर चुप्पी का भी सही मतलब समझ ले, उसी को मानें अपना सच्चा यार।।
सुख में हजारों लोग आपको सदा घेरे रहें, परंतु दुख में न रहे आपके पास एक।
आपके दुखों को देखकर आपके कष्टों का भागी बने, वही आपका एक मित्र है नेक।।
प्रेरणादायक, सूचनादायक, बात की कटु से कटु सत्यता बताने वाले ही होते हैं आपके मित्र।
उचित पथ प्रदर्शक, तथा अच्छी बातों का बोध कराए, वही होता है सच्चा मित्र।।
जीवन के हर मोड पर हर पल खुशहाल ही रहना, चाहे जीत हो आपकी या आपकी हो हार।
मित्रों के साथ जीवन का कठिन व दुष्कर मार्ग भी निष्कंटक हो जाएगा पार।।
कभी भी मेरी सरल बातों के शब्दों में तलाश न करना, वजूद मेरा, मेरे प्यारे दोस्तों।
मैं उतना बोल तथा लिख नहीं पाता, जितना महसूस करता हूँ मेरे दोस्तों।।
बढ़ा हुआ हाथ, मधुर मुस्कान, सीने से लगने की तमन्ना, नहीं दर्शाती आपका प्यार।
आत्मिक प्रेरणा देकर आप में सम्पूर्ण विश्वास करने वाला ही होता है सच्चा यार।।
दोस्ती का रिश्ता नहीं चाहता रोज बात हो या रोज का ही साथ हो।
रिश्ता तो वो है जिसमें बहुत दूरियाँ होने पर भी दिल में उसकी याद हो।।
इस मतलबी दुनिया के लोग डालेंगे आपके सुगम पथ पर हर पल कोई न कोई बाधा।
दोस्त वह है जिससे बात करके खुशी हो जाए दोगुनी व गम रह जाए आधा।।
कोई किसी से कितना दूर हो कोई हालातों से हो सकता है कितना ही मजबूर।
हम तो बस इतना जाने हर रिश्ता होता है मोती, हर दोस्त होता है कोहिनूर।।

आमोद–प्रमोद प्रभाग

गन्ना संस्थान

मुकुन्द कुमार
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

छावनी की छटा है, देश का मान है गन्ना।
हमारे देश की, संसार में पहचान है गन्ना।।
श्री के.एन. मुंशी जी ने की थी इसकी स्थापना।
पुरानी जेल से लेकर खरिका तक की थी कल्पना।।
हमारी सस्य श्यामला सम्पदा की जान है गन्ना।
हमारे देश की, संसार में पहचान है गन्ना।।
कल कल जल धाराओं का सुभग श्रृंगार हैं गोमती।
मिटाती धरा के ताप को, फसलों की अमृत धार है गोमती।।
प्रकृति माँ का हमारे देश को वरदान है गन्ना।
हमारे देश की, संसार में पहचान है गन्ना।।
1952 में आया प्रक्षेत्र गन्ना, लखनऊ में लाया जान गन्ना।
1969 में परिषद के अधीनस्थ बना इसमें बाद बना केवीके।।
हमारी कृषि संस्कृति का, मूल गौरव गान है गन्ना।
हमारे देश की, संसार में पहचान है गन्ना।।
न इसकी पहचान को कोई खराब करे गंदे विचारो से।
इसकी छटा और चमकेगी अच्छे शोध प्रसारों से।।
सदियों से किसानों के सुखों की खान है गन्ना।
हमारे देश की, संसार में पहचान है गन्ना।।
सिरका, खांड़, गुड़ का यहाँ क्या कहना।
केवीके और क्षेत्रीय केंद्र यहाँ के हैं गहना।।
कहे मुकुन्द सवको मिल जुल कर है रहना।
यहाँ के कर्मचारियों का अभिमान है गन्ना।।
हमारे देश का, संसार में पहचान है गन्ना

कविताएं

अनुजा द्विवेदी
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

अन्तर्मन का मोहजाल

वो धुंधली सी यादों में
जिन्दगी थी सारी,
अब तो जी रहे हैं।
दुनिया के दस्तूर निभाने के लिए,
किसके पास वक्त है
किसी को समझने का
अब तो अपने भी नाकामयाबी में,
साथ नहीं,
ताने दिया करते हैं।

अनुभव

जीवन का अद्भुत शिक्षक अनुभव
अपने अंदर समेटे कई इतिहास,
कुछ सुखद क्षण, कुछ दुखद स्मृति
कहीं जीवन है, कहीं मृत्यु
किसी के आने का हर्ष है
किसी के जाने का विलाप,
आशा और निराशा के साथ
कर्तव्य पथ पर चलने की विवशता।

आप जिस तरह बोलते है, बातचीत करते हैं,
उसी तरह लिखा भी कीजिए।
भाषा बनावटी नहीं होनी चाहिए।

-महावीर प्रसाद द्विवेदी

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (कार्यालय–3) की बैठक का आयोजन

भाकृअनुप – भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (कार्यालय–3) का अध्यक्षीय कार्यालय है। वर्तमान में लखनऊ स्थित 70 केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों में किए जा रहे राजभाषा के कार्यों के मूल्यांकन की ज़िम्मेदारी भाकृअनुप –भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान के पास है। इसी क्रम में दिनांक 30 जून 2021 के पूर्वाहन में संस्थान द्वारा नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (कार्यालय–3), लखनऊ की वर्ष 2021–22 की प्रथम बैठक का आयोजन ऑन लाइन किया गया। जिसमें नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (कार्यालय–3), लखनऊ के सदस्य कार्यालयों के 76 प्रमुखों / हिंदी अधिकारियों ने भाग लिया। इस बैठक की अध्यक्षता संस्थान के निदेशक एवं नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (कार्यालय–3), लखनऊ के अध्यक्ष डॉ ए. डी. पाठक ने किया। उक्त बैठक में हिंदी में उत्कृष्ट कार्य करने वाले 11 कार्यालयों को पुरस्कृत किया गया। इस बैठक में डा.ए.के. साह, सचिव, नराकास, (कार्यालय–3) ने अक्टूबर 2020 से मार्च 2021 के बीच सदस्य कार्यालयों द्वारा राजभाषा में किए गए कार्यों पर विस्तारपूर्वक चर्चा किया। विशिष्ट अतिथि श्री नरेंद्र सिंह मेहरा, सहायक निदेशक (कार्यान्वयन), राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार ने विस्तृत रूप से प्रतिवेदन पर चर्चा किए। बैठक का संचालन श्री अभिषेक कुमार सिंह, राजभाषा अधिकारी, भाकृअनुप–भा.ग.अनु. सं., लखनऊ ने किया।

हिंदी में उत्कृष्ट कार्य करने के लिए पुरस्कृत कार्यालयों के नाम

क्र.सं	कार्यालयों का नाम	स्थान
1	क्षेत्रीय पासपोर्ट कार्यालय, विपिन खण्ड, गोमती नगर, लखनऊ	प्रथम
2	पुलिस उप महानिरीक्षक, ग्रुप केन्द्र, के.रि.पु.बल, बिजनौर, लखनऊ	द्वितीय
3	सीएसआईआर – भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ	द्वितीय
4	भा.कृ.अनु.प.– राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ	तृतीय
5	मंडल रेल प्रबंधक कार्यालय, पूर्वोत्तर रेलवे, लखनऊ	चतुर्थ
6	मंडल रेल प्रबंधक कार्यालय, उत्तर रेलवे, लखनऊ	पंचम
7	रक्षा लेखा प्रधान नियंत्रक (मध्य कमान), लखनऊ	षष्ठ
8	कार्यालय पुलिस उप महानिरीक्षक, केन्द्रीय रिजर्व पुलिस बल, रेंज लखनऊ, बिजनौर, लखनऊ	सप्तम
9	अनुसंधान अभिकल्प और मानक संगठन, (रेल मंत्रालय), लखनऊ	अष्टम
10	केन्द्रीय विद्यालय, आर.डी.एस.ओ., लखनऊ	नवम
11	कमान्डेण्ट–91 बटालियन, द्रुत कार्य बल, के.रि.पु.बल, ग्रुप केन्द्र बिजनौर लखनऊ	नवम

वाक्यांश

A	
Acts of commission and omission	कृताकृत
Address all concerned	सर्वसंबंधित को लिखा जाए
Add up to	कुल योग होना
Adjournment is not likely to be granted this time	इस बार स्थगन की मंजूरी मिलने की संभावना नहीं है
Administrative approval may be obtained	प्रधासनिक अनुमोदन प्राप्त किया जाए
Admission with permission	अनुमति लेकर अंदर आएं
Admit an appeal	अपील ग्रहण करें
Advance arrangements are necessary	पहले से प्रबंध करना जरूरी है
Advance for purchase of stationery may be sanctioned	लेखन–सामग्री की खरीद के लिए अग्रिम मंजूर किया जाए
Advance from pay/provident fund is permissible	वेतन/भविड्य निधि से अग्रिम अनुदेय है
Advance of T.A. may please be arranged	कृपया यात्रा भत्ते के अग्रिम का प्रबंध कर दें
Advice awaited	सलाह की प्रतीक्षा है
Advice accordingly	तदनुसार सलाह दें
Advise against	के प्रति चेताना, के प्रति चेतावनी
Advise further development	आगे की प्रगति से अवगत कराएं
Advise telegraphically	तार से सलाह दें
After adequate discussion	समुचित विचार के बाद
After consultation with	से परामर्श करके
After discussion	विचार–विमर्ध के बाद
After issue	जारी होने के बाद
B	
Brought forward	अग्रनीत
Brought over	आगे ले जाया गया
Budget provision exists	बजट में व्यवस्था है
By all means	निसंदेह
By and by	धीरे–धीरे
By any means	किसी भी प्रकार से
By authority of	के प्राधिकार से
By beat of drum	डुग्गी पिटवाकर
By command (of)	के समावेध से
By dishonest means	बेईमानी से

C	
Collection of arrears	बकाया वसूली
Come into force	लागू होना
Come into operation	चालू होना
Comes in the purview of commander	कमांडर के कार्य क्षेत्र में
Commercial employment	वाणिज्यिक नियोजन
Commutation of a fraction of pension	पेंधान के एक अंश का संराशिकरण
Commutation of pension	पेंधान का संराधिकरण
D	
Delay in disposal of pension	पेंधान निपटान में विलम्ब
Delay regretted	विलंब के लिए खेद
Delay should be avoided	विलंब न होने दें
Delegation of financial powers	वित्तीय प्राक्तियों का प्रत्यायोजन
Demi-official (D.O.)	अर्ध–धासकीय
Departmental action is in progress	विभागीय कार्रवाई की जा रही है
Departmental investigation	विभागीय जांच–पड़ताल
Departmental irregularaties	विभागीय अनियमितता
Departmental negligence	विभागीय लापरवाही
Deputation of officers on short term contract	अल्पकालिक संविदा पर अधिकारियां की प्रतिनियुक्ति
E	
Examination of witness	साक्षी की परीक्षा
Examine the proposal in the light of observation at 'A'above	१ पर 'क' में की गई टिप्पणी को ध्यान में रखते हुए प्रस्ताव की जॉच करें
Exigencies of administrative work	प्रधासनिक कार्य की तात्कालिक आवश्यकताएँ
Exigencies of public service	लोक सेवा की तात्कालिक आवश्यकताएँ
Ex-parte judgment	एकपक्षीय निर्णय
F	
For concurrence, please	सहमति के लिए विचारार्थ
For consideration	विचारार्थ
For disposal	निपटान के लिए
For early compliance	प्रीघ्र अनुपालन के लिए
For expression of opinion	मत प्रकट करने के लिए
For favourable action	अनुकूल कार्रवाई के लिए
For favour of doing the needful	आवध्यक कार्रवाई करने की कृपा करें

H	
Having regard to	ध्यान में रखते हुए
Heirship certificate	उत्तराधिकार प्रमाणपत्र
Here-in after	इसमें इसके पश्चात्
Here-in before	इससे पहले
Highly objectionable	अत्यंत आपत्तिजनक
I	
In addition to	के अतिरिक्त
In advance	पहले से
In anticipation of	की प्रत्याशा में
In anticipation of your approval	आपके अनुमोदन की प्रत्याधा में
In any case	किसी भी दधा में
In any special case	किसी विधेत्र मामले में
In as much as	जहॉ तक कि
In bold letters	मोटे अक्षरों में
In camera	बंद कमरे में
In compatibility	असंगति
In compliance with	का पालन करते हुए
In confirmation of	की पुष्टि में
In conformity wity	के अनुरूप
J	
Justification has been accepted	औचित्य स्वीकार कर लिया गया है
Just now	अभी तुरंत
K	
Kindly expedite disposal	कृपया प्रीघ्र निपटान करें
Kindly instruct further	कृपया अनुदेश दें
Kindly review the case	कृपया मामले पर पुनर्विचार करें
Kinds of documents	दस्तावेजों के प्रकार
Know down price	नीलामी कीमत
Knowingly and unlawfully	जानबूझ कर और अवैध रूप से
L	
Leave application	छुट्टी की अर्जी
Leave not due	अदेय छुट्टी
Leave not eamed	अनार्जित छुट्टी
Leave of absence	अनुपस्थिति की अनुमति
Leave on half average pay	अर्ध–औसत वेतन छुट्टी
Leave on average pay	औसत वेतन छुट्टी
Leave on medical ground	चिकित्सा छुट्टी
Leave preparatory of retirement	सेवानिवृत्तिपूर्व छुट्टी
Leave to appeal	अपील के लिए अनुमति
Leave travel assistanace	छुट्टी यात्रा सहायता
Leave travel concession	छुट्टी यात्रा रियायत

M	
May be obtained	प्राप्त किया जाए
May be passed for payment	भुगतान के लिए पास करें
May be permitted	अनुमति दी जाए
May be regretted	खेद प्रकट किया जाए
May be requested to clarify	से स्पष्टीकरण की प्रार्थना करें
May be returned when done with	काम हो जाने पर लौटा दें
May be sanctioned	मंजूर/संस्वीकृत किया जाए
May be treated as urgent	इसे अति आवश्यक समझा जाए
May deem necessary	आवश्यक समझें
May please furnish the requisite information	कृपया अपेक्षित सूचना दें
N	
New pension rules	नए पेंधन नियम
New rates of relief	
New table of pension rates	ो
Next below rule	ण
No action necessary	कोई कार्रवाई आवश्यक नहीं
No action required	कोई कार्रवाई आवश्यक नहीं
No admission	प्रवेश–निषेध
No bar	कोई रोक नहीं
No claim certificate	दावा–नहीं प्रमाणपत्र
No demand certificate	बेकाकी प्रमाण–पत्र
No entry for vehicles	गाड़ियों का आना मना है
No funds are available	निधि उपलब्ध नहीं है
No instructions	कोई हिदायत नहीं
O	
Of no avail	व्यर्थ
Okay	सब ठीक
On account of	के कारण
On an average	औसतन
On behalf of	की ओर से
On compassionate grounds	अनुकंपा के आधार पर
On demand	मॉगने पर
On deputation	प्रतिनियुक्ति पर
On discharge from service	सेवामुक्त होने पर नियत तारीख को
On due date	नियत तारीख को
On duty	ड्यूटी पर
One rank one pension	एक पद – एक पेंधन
P	
Pending adjustment	समायोजन होने तक
Pending confirmation	पुष्टि होने तक
Pending enquiry awards	लंबित जांच *अवार्ड*
Pending the conclusion of enquiry	जांच समाप्त होने तक
Pension liability	पेंधन संबंधी देयता
Per bearer	वाहक द्वारा
Performance test	निष्पादन परीक्षण

Periodical stock taking	आवधिक जांच पड़ताल
Pending of award	अवार्ड की आवधिकता
Permanency in grade	ग्रेड में स्थायीकरण
Personal hearing	व्यक्तिगत सुनवाई
Q	
Quota allotted for staff	स्टाफ के लिये निर्धारित कोटा
Quotations from	से लिए गए उद्धरण
Quoted below	नीचे उद्धृत
Quote reference	संदर्भ बताएँ
R	
Refer the matter to the board for orders	मामला बोर्ड को आदेध के लिए भेजा जाए
Reinstated in service	नौकरी बहाल की गई
Relaxation of rules	नियमों में छूट
Relaxation of time limit	समय सीमा छूट
Relevant papers be put up	संबंधित कागज–पत्र प्रस्तुत किए जाए
Reluctant to do	करने को अनिच्छुक
Remain in force	लागू रहना
Remarks of the head of the office	कार्यालयाध्यक्ष की अभ्युक्ति
Reminder may be sent	अनुस्मारक भेजा जाए
Removal power	निष्क्रासन अधिकार
S	
Scope in this cases	इस मामले में गुंजाइश
Score out whichever is not appropriate	जो लागू न हो उसे काट दें
Secret instruction issued	गुप्त अनुदेध जारी किए गए हैं
Seen, file with previous papers	देख लिया, पहले के कागजो के साथ फाइल कर दीजिए
Seen, thanks	देख लिया, धन्यवाद
Seen and passed on to --	देख लिया और–– को भेज दिया
Seen and returned	देखकर वापस किया जाता है
Seen and spoken	देख लिया और बात कर ली
Self contained note	स्वतः पूर्ण टिप्पणी
Self explanatory	स्वतः स्पष्ट
Separately and distinctly	पृथक्तः और सुभिन्नतः
Service agreement has been executed	सेवा करार निष्पादित कर लिया गया है
T	
Take recourse	का सहारा लेना
Take such measures	ऐसे उपाय करें
Taking over charge	कार्यभार ग्रहण करना
Tenders have been invited	निविदाएं आमंत्रित की गई
The file in question is not traceable	संदर्भित फाइल नहीं मिल रही है
The file in question is placed below	अपेक्षित फाइल नीचे रखी है
Then and there	तत्काल वहीं
The papers may be shown to —for information and guidance	अपेक्षित कागज–पत्रों को सूचना और मार्गदर्शन के लिए –को दिखाया जाए
The proposal is quite in order	यह प्रस्ताव बिल्कुल नियमानुकूल है
U	
Uncontrolled stroes	अनियंत्रित सामान
Under consideration	विचाराधीन
Under developed	अल्पविकसित
Under dispute	ख
Under –his signature and seal	ख
Under intimation to this office	ो
Under mentioned	9
Under oneçs hand	ख
Under oneçs hand and seal	ख ६
Under reference	प्रसंगाधीन
V	
Verification of service	सेवा का सत्यापन
Verified and found correct	पड़ताल की और ठीक पाया
Vetting of draft	प्रारूप का पुनरीक्षण
Vide letter no..	पत्रांक–देखिए, पत्र संख्या–देखिए
Vide linked case	संलग्न मामला
W	
We are not concerned with this	इसका हमसे संबंध नहीं है
Weekly arrears statement for the	को समाप्त होने वाले सप्ताह के
Week ending is submitted for perusal	बकाया काम का साप्ताहिक विवरण अवलोकनार्थ प्रस्तुत है
We need not pursue the matter further	हमें इस विषय पर और कार्रवाई करने की आवश्यकता नहीं है
Y	
You are hereby authorized to	आपको इसके द्वारा यह प्राधिकार दिया जाता है
You are hereby informed that	आपको इसके द्वारा सूचित किया जाता है कि
You may kindly report for duty on...........	कृपया आप ड्यूटी पर .... को रिपोर्ट करें
You may take necessary action	आप तदनुसार आवश्यक कार्रवाई करें
Your further remarks/view on the above subject are awaited	उपर्युक्त विषय पर आपकी आगे की टिप्पणी/राय की प्रतीक्षा है

आपके पत्र

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
INDIAN COUNCIL OF AGRICULTURAL RESEARCH
कृषि भवन, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद मार्ग, नई दिल्ली–110 001
Krishi Bhawan, Dr. Rajendra Prasad Road, New Delhi 110 001

सीमा चोपड़ा
निदेशक (रा.भा)

अ.शा.पत्र सं. रा.भा. 3(3)/2021-हिन्दी
दिनांक: 08 जुलाई, 2021

आदरणीय डॉ. ए.डी. पाठक जी,

कृपया परिषद के दिनांक 06 जुलाई, 2021 के समसंख्यक परिपत्र का अवलोकन करें, जिसके माध्यम से आपको यह सूचित किया गया था कि **"राजर्षि टंडन राजभाषा पुरस्कार योजना"** (2019-2020) के अंतर्गत आपके संस्थान को बड़े संस्थानों की श्रेणी में **द्वितीय पुरस्कार** के लिए चुना गया है। यह पुरस्कार आपके संस्थान को परिषद के स्थापना दिवस के अवसर पर 16 जुलाई, 2021 को दिया जाएगा। 'राजर्षि टंडन राजभाषा पुरस्कार योजना' (2019-2020) का **द्वितीय पुरस्कार** प्राप्त करने के लिए आपको तथा आपके सभी सहयोगियों को हार्दिक शुभकामनाएं व बधाई।

भाकृअप के स्थापना दिवस समारोह में जुड़ने तथा समारोह के आयोजन के बारे में सहायक महानिदेशक (समन्वय तकनीकी) द्वारा जारी निर्देशों का अनुपालन करने की कृपा करें।

सादर,

शुभेच्छु,

(सीमा चोपड़ा)

डॉ. ए.डी. पाठक,
निदेशक,
भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान,
लखनऊ

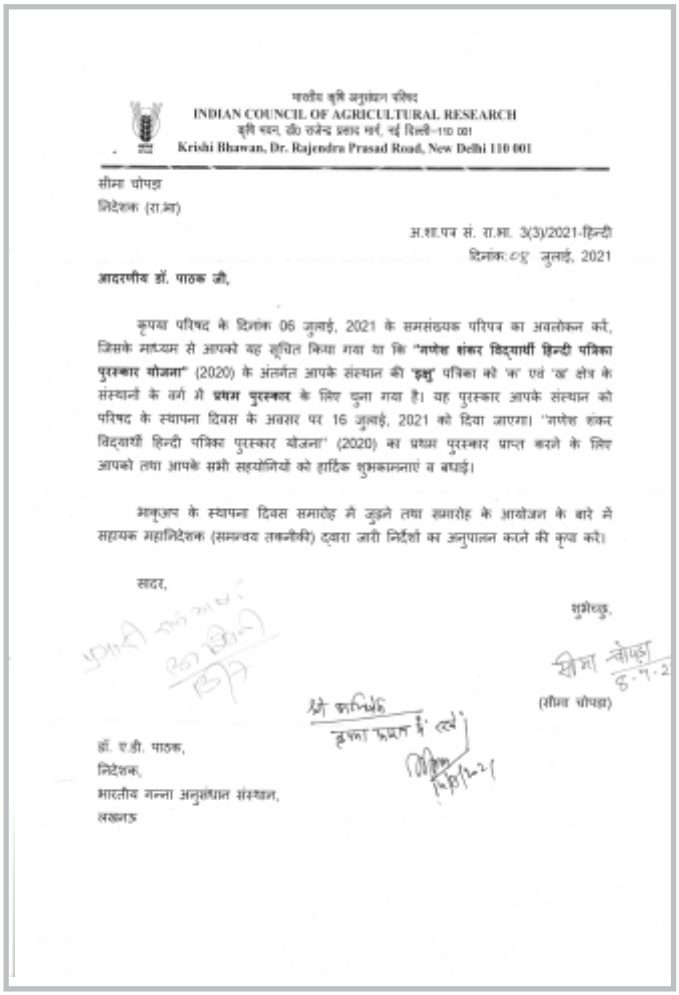

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
INDIAN COUNCIL OF AGRICULTURAL RESEARCH
कृषि भवन, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद मार्ग, नई दिल्ली–110 001
Krishi Bhawan, Dr. Rajendra Prasad Road, New Delhi 110 001

सीमा चोपड़ा
निदेशक (रा.भा)

अ.शा.पत्र सं. रा.भा. 3(3)/2021-हिन्दी
दिनांक: 08 जुलाई, 2021

आदरणीय डॉ. पाठक जी,

कृपया परिषद के दिनांक 06 जुलाई, 2021 के समसंख्यक परिपत्र का अवलोकन करें, जिसके माध्यम से आपको यह सूचित किया गया था कि **"गणेश शंकर विद्यार्थी हिन्दी पत्रिका पुरस्कार योजना"** (2020) के अंतर्गत आपके संस्थान की **इक्षु** पत्रिका को 'क' एवं 'ख' क्षेत्र के संस्थानों के वर्ग में **प्रथम पुरस्कार** के लिए चुना गया है। यह पुरस्कार आपके संस्थान को परिषद के स्थापना दिवस के अवसर पर 16 जुलाई, 2021 को दिया जाएगा। 'गणेश शंकर विद्यार्थी हिन्दी पत्रिका पुरस्कार योजना' (2020) का प्रथम पुरस्कार प्राप्त करने के लिए आपको तथा आपके सभी सहयोगियों को हार्दिक शुभकामनाएं व बधाई।

भाकृअप के स्थापना दिवस समारोह में जुड़ने तथा समारोह के आयोजन के बारे में सहायक महानिदेशक (समन्वय तकनीकी) द्वारा जारी निर्देशों का अनुपालन करने की कृपा करें।

सादर,

शुभेच्छु,

(सीमा चोपड़ा)

डॉ. ए.डी. पाठक,
निदेशक,
भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान,
लखनऊ

समाचार प्रभाग

आज लखनऊ, 17 मार्च, 2021

आत्मनिर्भर भारत से सम्पूर्ण विश्व लाभान्वित होगा-हृदय नारायण दीक्षित

हिन्दुस्तान लखनऊ • बुधवार • 17 मार्च 2021

संक्षिप्त

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान में मंगलवार को आत्मनिर्भर भारत के लिए वोकल विषय पर आयोजित संगोष्ठी में विधानसभा अध्यक्ष हृदय नारायण दीक्षित।

वोकल से लोकल फिर ग्लोबल बनेंगे: दीक्षित

लखनऊ। अनुसंधान संस्थान में आत्मनिर्भर भारत के लिए वोकल विषय पर दो दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का आरंभ हुआ। संगोष्ठी में विधान सभा स्पीकर हृदय नारायण दीक्षित ने कहा कि आत्मनिर्भर भारत किसी का विरोधी नहीं है। भारत सदा से वसुधैव कुटुंबकम में विश्वास रखने वाला देश रहा है। भारत की आत्मनिर्भरता से सम्पूर्ण विश्व लाभान्वित होगा। उन्होंने योग की विश्वव्यापी लोकप्रियता का उदाहरण देते हुए कहा कि लोकल के लिए वोकल होने के बाद लोकल से ग्लोबल होने में सहायता मिलती है। विशिष्ट अतिथि के रूप में लखनऊ विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के पूर्व अध्यक्ष प्रो. सूर्य प्रसाद दीक्षित मौजूद रहे।

जागरण सिटी लखनऊ लखनऊ, 17 मार्च, 2021 दैनिक जागरण

'भारत आत्मनिर्भर होगा तो पूरा विश्व लाभान्वित होगा'

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान में दो दिवसीय संगोष्ठी शुरू

जास, लखनऊ : भारत की आत्मनिर्भरता से सिर्फ देश ही नहीं, बल्कि पूरा विश्व लाभान्वित होगा। भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान में आत्मनिर्भर भारत: लोकल के लिए वोकल विषय पर आयोजित दो दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी को संबोधित करते हुए ये बातें उत्तर प्रदेश विधानसभा अध्यक्ष हृदय नारायण दीक्षित ने कहीं।

योग की विश्वव्यापी लोकप्रियता का उदाहरण देते हुए उन्होंने कहा कि लोकल के लिए वोकल होने के बाद ही लोकल से ग्लोबल होने में मदद मिलती है। उन्होंने भारतीय संस्कृति के संरक्षण एवं बहुआयामी विकास के लिए अपनी भाषा बोलने का सुझाव दि[...] विश्वविद्यालय के हि[...] पूर्व अध्यक्ष प्रो. सूर्य प्र[...] हिंदी को विश्व की स[...] जाने वाली भाषा में से [...] इसका अधिकाधिक प्र[...] बल दिया।

भारतीय कृषि अनु[...]

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान में राष्ट्रीय गोष्ठी की मौके पर विधानसभा अध्यक्ष हृदय नारायण दीक्षित ने पत्रिका का विमोचन किया • जागरण

नई दिल्ली के उप महानिदेशक डा. [...] ने गन्ना एवं चीनी क्षेत्र में वैज्ञानिक [...] के बारे में जानकारी [...] के राष्ट्रीय आयोजन [...] अजय कुमार साह [...] को देश एवं समा[...] बताते हुए संगोष्ठी [...] जानकारी दी। संगोष्ठी में 300 से अधिक प्रतिनिधि जुड़े।

दैनिक जागरण लखनऊ, 17 जुलाई, 20

भारतीय गन्ना संस्थान को राजर्षि पुरस्कार

जागरण संवाददाता, लखनऊ : रायबरेली रोड स्थित भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान को भाषा को लेकर किए गए उत्कृष्ट कार्य के लिए राजर्षि टंडन राजभाषा का दूसरा पुरस्कार मिला है।

संस्थान के मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो को भी दूसरा पुरस्कार मिला है। गन्ना संस्थान को गणेश शंकर विद्यार्थी हिंदी पत्रिका पुरस्कार के रूप में पत्रिका इक्षु को पहला पुरस्कार मिला है। संस्थान के प्रधान वैज्ञानिक डा. अजय कुमार साह को स्वामी सहजानंद सरस्वती उत्कृष्ट कृषि वैज्ञानिक का पुरस्कार मिला है। आनलाइन पुरस्कार वितरण के दौरान उन्हें 50 हजार रुपये नकद व प्रशस्ति पत्र दिया जाएगा। निदेशक डा. एडी पाठक ने सभी को बधाई दी है।

आज लखनऊ, 18 मार्च, 2021

आत्मनिर्भर भारत, लोकल के लिये वोकल विषय पर राष्ट्रीय संगोष्ठी का समापन

(आज समाचार सेवा)

लखनऊ, बुधवार। भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊमें आत्मनिर्भर भारत: लोकल के लिए वोकल विषय पर आयोजित दो दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का आज समापन हो गया। समापन सत्र में संस्थान के निदेशक,डॉ. अश्विनी दत्त पाठक ने राष्ट्रीय संगोष्ठी में प्रस्तुत लेखों से विकसित रोड-मैप से विभिन्न क्षेत्रों में स्वदेशी वस्तुओं के प्रति वोकल होकर देश को आत्मनिर्भर बनाने में सहायता मिलने में विश्वास दर्शाया। प्रस्तुत विभिन्न लक्ष्यों का आधार त्वक [...] जमीनी स्तर के नवाचार के माध्यम तथा इसके औद्योगीकरण से आत्मनिर्भर भारत का सपना साकार हो सकता है। गोपाल उपाध्याय, राष्ट्रीय सह-संगठन मंत्री, लोक भारतीने बीजामृत, जीवामृत, ब्रह्मास्त्र, अग्निमात्र आदि प्राकृतिक संसाधनों के प्रयोग द्वारा प्राकृतिक खेती से गुणवत्तायुक्त कृषि उत्पादों के उत्पादन से देश में आर्थिक, स्वास्थ्य एवं सामाजिक सुरक्षा सुनिश्चित होने से ही देश कृषि में आत्मनिर्भर बन सकेगा। प्रोफेसर मनोज अग्रवाल, [...]

दैनिक जागरण लखनऊ www.jagran.com

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान में दो दिवसीय गोष्ठी

लखनऊ : भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान लखनऊ एवं भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद नई दिल्ली द्वारा आत्मनिर्भर भारत : लोकल के लिए वोकल विषयक दो दिवसीय गोष्ठी का आयोजन मंगलवार से किया जाएगा। उत्तर प्रदेश विधानसभा अध्यक्ष हृदय नारायण दीक्षित मुख्य अतिथि होंगे। गोष्ठी में 13 विशिष्ट विषयों पर शोध [...]

जागरण सिटी लखनऊ लखनऊ, 18 मार्च, 2021 दैनिक जागरण

'स्वदेशी वस्तुओं के प्रति हों वोकल'

जागरण संवाददाता, लखनऊ : भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान के डा. अश्विनी दत्त पाठक ने कहा कि विभिन्न क्षेत्रों में स्वदेशी वस्तुओं के प्रति वोकल होकर देश को आत्मनिर्भर बनाने में सहायता मिलेगी। उन्होंने संगोष्ठी में प्रस्तुत आलेखों को स्मारिका में संकलित व प्रकाशित करने की अपील की।

संस्थान में बुधवार को आयोजित गोष्ठी में राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद के डा. मनोज पटेरिया ने कहा कि नवीन प्रौद्योगिकी को अपनाकर एवं जमीनी स्तर के नवाचार के माध्यम और इसके औद्योगीकरण से आत्मनिर्भर भारत का सपना साकार हो सकता है। लोक भारती के गोपाल उपाध्याय ने कहा कि प्राकृतिक खेती से गुणवत्तायुक्त कृषि उत्पादों का उत्पादन होगा। सीमैप के निदेशक डा.प्रबोध कुमार त्रिवेदी, निदेशक सेंटर फार बायोमेडिकल रिसर्च एसजीपीजीआइ के निदेशक डा. आलोक धावन, संस्थान के प्रधान वैज्ञानिक डा. अजय कुमार साह ने विचार व्यक्त किए।

70वां स्थापना दिवस : 16 फरवरी 2021

संस्थान के कार्मिकों के लिए क्षमता निर्माण कार्यक्रम : 4–6 मार्च, 2021

हिंदी कार्यशाला : 08–11 मार्च, 2021

हिंदी कार्यशाला : 30 जून 2021

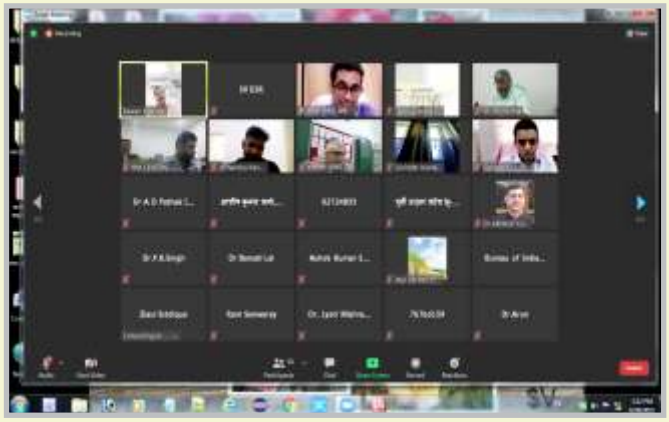

नराकास बैठक : 30 जून 2021

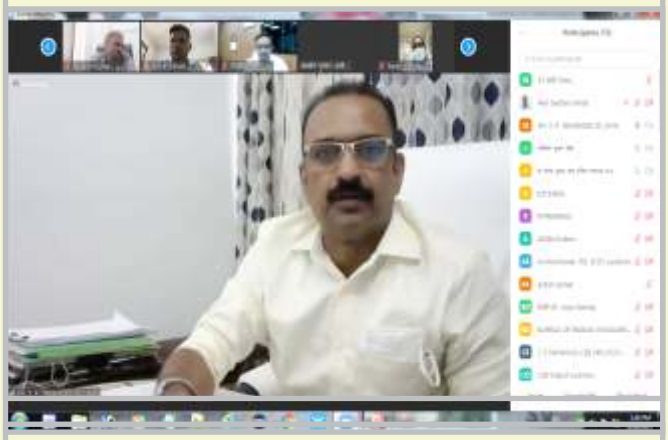

राष्ट्रीय संगोष्ठी : 16–17 मार्च, 2021

राष्ट्रीय संगोष्ठी : 16–17 मार्च, 2021

हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

Agri search with a human touch

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

विजन

उत्कृष्ट, वैश्विक रूप से प्रतिस्पर्धात्मक तथा गन्ने की खेती के लिए एक अग्रणीय अनुसंधान संस्थान के रूप में कार्य करना।

मिशन

भारत की गन्ना एवं ऊर्जा की भावी आवश्यकताओं की पूर्ति करने हेतु गन्ने के उत्पादन, उत्पादकता, लाभप्रदता तथा स्थायित्व को बढ़ाना।

अधिदेश

- गन्ना उत्पादन एवं सुरक्षा पर मूल, नीतिगत एवं अनुकूलक शोध करना तथा देश के उपोष्ण क्षेत्रों के लिए गन्ना किस्मों के प्रजनन पर कार्य करना।
- उन्नत प्रजातियों एवं प्रौद्योगिकियों के विकास के लिए राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय मुद्दों पर प्रयुक्त शोध का समन्वयन एवं अनुश्रवण।
- प्रौद्योगिकी का प्रसार एवं क्षमता निर्माण

स्वच्छ भारत

एक कदम स्वच्छता की ओर